हिन्दी कृष्णकाव्य मे प्रियप्रवास

हिन्दी कृष्णकाव्य में प्रियप्रवास

लेखक
सुरेशपति त्रिपाठी

अ प्र अलका प्रकाशन

HINDI KRASHNAKAVYA ME PRIYPRAVAS

By

Dr SURESHPATI TRIPATHI

PRICE–Rs ONE HUNDRED SEVENTY FIVE ONLY

मूल्य 175 00

पुस्तक हिन्दी कृष्णकाव्य मे प्रियप्रवास

लेखक सुरेशपति त्रिपाठी

प्रकाशक अलका प्रकाशन

128/106, जी ब्लॉक किदवई नगर कानपुर–208 011

संस्करण 1994

मुद्रक मधुर प्रिण्टर्स, 128/93 वाई ब्लॉक किदवई नगर

कानपुर–208 011
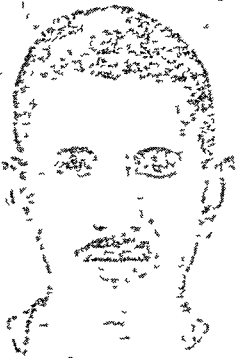
आदरणीय

स्व० पण्डित

परमेश्वरदत्त त्रिपाठी

को

सादर !

पुरोवाक

भारतीय भक्ति की सगुणाश्रयी चेतना को कृष्णचरित्र न सर्वाधिक प्रेरित और परिचालित किया है। उनका लाकानुरजक स्वरूप भक्ता की परानुरक्ति का आलम्बन रहा। भागवत' इस धारा का सर्वोपरि भक्तिरस सागर ग्र थ है, जिसन हिन्दी ही नही, समग्र भारतीय भक्ति साहित्य का तरह तरह स आ दोलित और अनुप्राणित किया है। मेरा दष्टि म, अय बाता के अलावा, कृष्ण म जहाँ लोकरजन का प्राधा य है, राम म वहाँ अपेक्षत लाकोद्धार का। राम के मौर कायकलाप खुली किताब के मानि द हैं और कृष्ण के रहस्यमय। तुलसी का लाकसग्रही चित्र एस ही राम पर अपने को निछावर करता है। कृष्ण भी तुलसी को छूते तो हैं, लकिन राम की तरह नही। तस्वत सगुण निगु ण स कही अधिक दुर्बोध एव दुगम है। सगुण की इस अगम्य स्थिति का परखते हुए तुलसी ने लिखा–'निगु ण अत्य त सुलभ और सगुण (गुणातीत दिव्य) तो वह है जिस कोई जानता ही नहा। यहा तक कि सामा या की कौन कह उस (सगुण) के सुगम अगम नानाचरिता को सुनकर मुनिमन भी भ्रमित हो जाते हैं–

निगु न रूप सुलभ अति सगुन जान नहिं कोइ।
सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम होइ॥

मानना यह है कि ताक के समक्ष सगुण की यह दाशनिक जटिलता उतनी उभर कर नही आती। कहना न होगा कि इस दृष्टि स कृष्ण का अद्भुत लीलामय स्वरूप अधिक गूढ एव गुह्य है। 'भागवत' म परीक्षित न पूछन पर शुकदेव न कृष्णलीला के अगम रहस्या का खोलत हुए कहा–जसे–अभक (बच्चा) विभ्रमित हा अपन हा प्रतिबिम्ब का अ य अभक समझकर उसस तरह तरह की क्रीडाए करता है वसे ही उन (कृष्ण) को लीलाए जानें।'

कृष्ण की लीला माधुरी न भक्त हृदय को सर्वाधिक विमुग्ध किया है। परिणाम की दृष्टि म कृष्णभक्ति काव्य जितना बजनी है उतना किसी दूसरी तरह का भक्तिका य नही। भक्त कवियों का चित्त कृष्णभक्ति रस सागर मे आकूठ निमग्न जान पडता है। भक्तिलीन चित्त ही विशुद्ध भक्ति भाव का बाध कराता ह। विलीन हार्दिकता के इसी अभाव ने विद्यापति के आराधन भाव का विवादास्पद बना दिया। भक्तिकाव्य क उदभावना

और उत्कर्ष का मर्म बहुत कुछ इसी गहनसंलग्नता और प्रगाढ़ तन्मयता का सुपरिणाम होता है, जिसके मूल में साधक की साध्य के प्रति अनन्य और अतर्क्य प्रीति प्रतीति होती है। प्रवाह की यही अखण्डानुभूति काव्य को भास्वर बनाती है। सगुण भक्ति में सपक्ति की यह स्थिति सर्वाधिक मुखर हुई है। विशुद्ध निर्गुण राग का विषय कभी नहीं रहा। दरअसल राग (भक्ति) का सहज और अविकल्पस्वरूप है, जिसका उद्भव अस्तित्व से होता है। नास्तिकता तो उसका प्रतिपक्ष है। इसकी महिमा यों भी आँकी जा सकती है कि भारतीय धर्म दर्शन में हमेशा से आस्तिकता का ही बोलबाला रहा है। वेदान्त को छोड़कर हमारे सारे दर्शन आस्तिक द्वैतवाद के पोषक रहे। इस नाते भी भक्ति बहुत महिमान्वित हुई। भक्तिमाध्यम से प्रणीत ऐसा अप्रतिम काव्य उजारा संसार में कहीं नहीं देखा जाता। साध्य के अनुग्रह से साधक कवि उर अजिर में वाणी-नटी का नर्तन होता है। सूर और तुलसी कृष्ण तथा रामभक्ति काव्य के ऐसे शिखर पुरुष हैं जिनसे मनुष्य मनुष्य को उच्चादर्शों की प्रबल प्रेरणा मिलती है।

काल प्रवाह मानव के चुलबुले मन का हमेशा से पोषण करता आया है क्योंकि जैसे जैसे वक्त करवट लेता है वैसे वैसे हालात भी परिवर्तित होकर नवता की अनुभूति कराते हैं। लगता है काल और मानव मन दोनों अभिन्न सहचर हैं। एक की गति दूसरे की मति का कारण होता है। दोनों समान अस्थिर और अधीर।

भक्ति काव्य सर्जना का मूल कारण थी जन की यह व्यग्र, व्याकुल और हत चित्तवृत्ति हरिभजन के अलावा जिसका कोई और समाधान न था। इसे यों भी कह सकते हैं कि भक्ति आवेश में मानव के विवश और विकल्पहीन मनस्ताप की देन थी। जलते घर से निकल भागने का रास्ता तब एक ही रह गया था—अलौकिक खिड़की के सहारे शरण स्थल तक पहुंचना। सीधे देखने से तो भक्त युगवा की ये प्रभु प्रार्थनाएँ—

क—प्रभु हौं सब पतितन का टीकौ।

ख—मोसम कौन कुटिल खल कामी।

ग—हौं प्रसिद्ध पातकी।

उनकी आत्मद्रव ज्ञात होती है किंतु इसके मूल में तत्कालीन हताशा और व्यग्रता का संचित रूप किसी न किसी रूप में मौजूद अवश्य है। अक्सर देखा जाता है कि निरुपाय हो हम अपने को ही कोसने लगते हैं। यह प्रवृत्ति जब और गहराती है तो व्यक्ति अपने को पतित, पापी, कुटिल, खल आदि मानने लगता है। सारे काव्य अपने समय की कारा (दबाव

प्रभाव) म लिखे जाते हैं।

काव्य म शृगार काल जब तब सर उठाये तब तक विदशियों (मुगलो) का देश व चित्त और वित्त दोनो पर ऐसा अधिकार हो गया था कि उबराने की आशा नही रह गयी थी भगवन्नाम के इस जप स हमारी जातीयता तो रक्षित रही कि तु देष हमारा सारा वाह्याभ्यतर उनका पूर्ण वशवर्ती हो गया। पराजय की सहज परिणति समपण मे हुई। किसी सदुद्देश्य के अभाव म सारे अधीनस्थ राजे महाराजे शहजादे आदि निष्क्रिय और निश्चेष्ट हो सुखोपभोग से दिन बिताने लगे।

काव्य म राजाश्रयता के नाम पर जि ह लम्बी छीक आती है उ हे अच्छी तरह यह समझ लेना चाहिए कि दरबारी काव्य की प्रगाढ परम्परा अलकृत सस्कृत जमाने स ही चली आ रही थी। अनुकूल स्थिति पाकर रीतिकाव्य म जैसे सस्कृत का यशास्त्र की उद्धरणी हुई बस राजसभाओ म उसके फलने फूलन के दिन भी बहुरे। सस्कृत काव्य के अवगाहन से यह साफ जाहिर होता है कि राजा जब स पृथ्वी पर आया तब स उसकी राजसी वृत्ति का अनन्य सहचारिणी कविता भी आयी। राजसभोग के लिए ही प्रदेश और देश हथियाये जाते थे। युद्ध स्थिति ही उसमे दखलन्दाजी कर सकती थी। प्रजा सरक्षण की तो बात बहुत की जाती थी कि तु उसे आचरण म उतारने का उतना प्रयास नही किया जाता था। तात्पर्य यह है कि भोग ही सम्राट और साम ता का सर्वोपरि साध्य होता था। राजाओ के विलास की पराकाष्ठा की प्रतीक नारी थी। ऐसा क्यो था? इसका उत्तर देते हुए वराह मिहिर ने अपने ग्रन्थ बृहत् सहिता मे लिखा है–

आकार विनिगूहता रिपुबल जेतु समुत्तिष्ठता।
तन्त्र चि तयता कृताकृतशत व्यापारशाखाकुलम।
मन्त्रि प्रोक्तनिषेवियाभिनिमुजामाशकिना सवता।
दु खाम्भोनिधिवर्तिना सुखलव का तासमालिगनम।।

भाव यह है कि राजाओ का अनेक कारणो से सुख भय हर्षादि आवेगो को छिपाने, शत्रुसेना से भिडन्त कृत आकृत सैकडो काय व्यापारत त्रो का सोचने विचारने, पुत्र आदि से सकित रहने–जैसे अपार दुखो और चिन्ताओ से थोड़ा उबारने वाला था मात्र स्त्री–आलिगन।' निष्कर्ष यह कि नारी राजाओं के तमाम–तमाम तनावों और मनस्तापों स छुटकारा दिलाने वाली वस्तु थी इसलिए राजा और रमणी अभिन्न और अद्वय थे। इतना ही नही सस्कृत म अनेकानेक परिनयो का पति होने से राजाओं का

बहुवल्लभ भी कहा गया है। आज भी राजा कहने मात्र से विलास बिम्ब पहले उभरता है। भारतीय इतिहास के समूचे मध्यकाल म राजन्य जीवन के दो ही मान मूल्य या आयाम थे—गली या नवली के गल लगना। दास की यह उक्ति इसका ज्वल त प्रमाण है—

धिग जीवन जन्म बधा, जिनक गर गली लगी न नवेली लगी।

विलास का जैसा दुश्चिन्त्य और दुर्निवार अतिरेक संस्कृत काव्यो म प्राय देखने को मिलता है वसा हिन्दी ही नही, शायद ही किसी अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओ म मिले। इसके प्रमाण म कनिष्ठिकाधिष्ठित कालिदास के रघुवश के इक्कीसवें सग के सातवें श्लोक का उदाहरण पर्याप्त होगा, जिसम रघुकुलोत्पन्न राजा 'सुदशन का पुत्र अग्निवर्ण' रात दिन विलास म ऐसा डूबा रहता है कि नित्य राजदशन के लिए उत्कठित प्रजा को वह अपनी झलक तक नहीं देता। कभी कभार मन्त्रियों की गरिमा और उनके अनुनय विनय का लिहाज कर यदि वाञ्छित दशन देता भी है तो झरोखे के छिद्रों से चरण लटकाकर ही।

गौरवाद्यदपि जातु मन्त्रिणा दशन प्रकृतिकाक्षित ददौ।
तद गवाक्षविवरावलम्बिना 'केवलेन चरणेन कल्पितम्'॥

भक्ति और शृगार का जो इतना विवेचन किया गया उसका अभिप्राय मात्र इतना ही है कि ये दोनो प्रवत्तियाँ हिन्दी मध्यकालीन कविता की मेरुदण्ड है, जिनकी सम्यक समीक्षात्मक जानकारी मात्र हिन्दी साहित्य ज्ञान से सम्भव नही। ठीक से उन्ह जानने परखने के लिए भारतीय चिन्ता धारा का बोध आवश्यक है इसके अभाव म हम उसके मम तक नही पहुच सकते।

इस विषय के अनुसार इस प्रबन्ध के दो प्रखण्ड है—एक कृष्ण काव्य परम्परा और दूसरा प्रियप्रवास म उसके परिणति की समीक्षा। प्रबन्ध प्रणेता डा० त्रिपाठी ने कृष्ण स्वरूप को दिखाते हुए वेदो से लेकर उपनिषद लौकिक साहित्य, ललितकला और हरिऔध के पूर्व तक जो शोध समीक्षा प्रस्तुत की है वह उनकी व्यापक गरिमा को भलीभाँति परिचायक है। चूँकि प्रबन्ध मेरे ही देख रेख म सम्पन्न हुआ है इसलिए वह मेरी ही धारणा और अवधारणा को लेकर चला है। यक्ति अन्तर से कहीं कहीं अन्तर मिलना स्वाभाविक है जिसे उसकी मौलिकता मानी जायेगी।

शोध की प्रमुख भूमि है कृष्णकाव्य परम्परा के आलोक म प्रियप्रवास म प्राप्त तत्वो की विवेचना। कहना न होगा कि प्रबन्धकार डा० त्रिपाठी ने प्रियप्रवास के उद्दिष्ट विषय के साथ सवथा अपने विवेचन और

विश्लेषण से याय किया है। 'प्रियप्रवास' का काव्य सौष्ठव प्रेम सौन्दय, विविध रसो की अभिव्यक्तियाँ, विविध प्रकार की सस्कृति चित्रण की शैलिया, राधा, कृष्ण नन्द यशोदा, उद्धव के चरित्र चित्रण आदि का जैसा तत्व विमप प्रस्तुत किया है वह भी उनकी अध्ययन निष्ठा और अध्यवसाय का द्योतक है। यद्यपि हरिऔध और उनके साहित्य पर इतन शोध और अलग से समीक्षा ग्रन्थ लिखे जा चुके हैं जिनसे उस पर आग काम करने को गुन्जाइस बहुत कम रह जाती है तथापि एस सकरे रास्ते पर चलकर प्रबन्धकार ने अपनी चिन्तन क्षमता म जगह जगह मुहर लगा दी है। हरिऔध का कृष्ण काव्य पचासी प्रतिशत युग और साहित्य की आकाक्षापूर्ति के लिए लिखा गया है। प्रियवास' का कथ्य और शिल्प दानो बदल वक्त की बदली परिणति है। चाहे भाव हो जिसकी अन्तिम परिणति विश्व-व्यापक रूप के सदभाव म हुई है और चाहे कला जिसम अभिव्यजना के एकदम नये रूपा का आश्रय लिया गया है दानो पक्ष मौलिक रूप म सामने आते हैं। प्रसन्नता की बात है कि प्रबन्धकार न भलीभांति इस परखकर अपने विमर्श से उजागर करने का प्रयास किया है। इस दृष्टि म उसका प्रियप्रवास म कला विषयक अनुशीलन विशेष अवरखनीय है।

शोध की भाषा अपनी मन्तव्य का व्यक्त करने म इतनी प्राञ्जल और प्रसन्न हानी चाहिए कि जसे निमल जल का पीकर प्यास अ तरतुष्ट होता है। डा० त्रिपाठी शोध की ऐसी भाषा के धनी मान जायेंगे, यह निला खुशी की बात है।

डा० त्रिपाठी लखनऊ जस सस्कृति सम्पन्न नगर महाविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष-प्राध्यापक है। प्रबुद्ध अध्येताओ की जिज्ञासाओ की तुष्टि ही सच्चे प्राध्यापक का कत्तव्य होता है, जिसकी वाञ्छितपूर्ति रोज रोज जग दीपक म तेल डालने स हाती है वस्तुतः अध्यापक का नित्यानुशीलन। अभ्यास स ही विद्या बढती है इसलिए मैं चाहूँगा कि केवल अध्यापक हाने के नाते ही नहीं वरन समाज और साहित्य के हेतु कुछ कर जाने के लिए विद्या की लव जलाए रहेंगे। यही मेरी उनके प्रति मगल कामना है और अध्येता स अध्यापक की अपेक्षा भी।

—डॉ० रामफेर त्रिपाठी
भूतपूर्व कुलानुशासक लखनऊ विश्वविद्यालय
एव
सेवामुक्त रीडर हिन्दी विभाग
ल० वि० वि० लखनऊ

दो शब्द

डा० सुरेश त्रिपाठी का शोध ग्रन्थ हिन्दी के कृष्ण काव्य में प्रिय प्रवास को देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। प्रियप्रवास एक ऐसा महाकाव्य है जिसके द्वारा खड़ी बोली में श्रेष्ठ महाकाव्यों के प्रणयन की परम्परा चली। बहुत दिनों से विश्वविद्यालयों में ऐसे महाकाव्यों पर शोध कार्य करने की परिपाटी प्राय लुप्त हो गयी है। प्रियप्रवास में हिन्दी कृष्ण काव्य के क्षेत्र में कवि ने युग प्रवर्तन का कार्य किया है। कथानक और युगीन चित्रण दोनों दृष्टियों से इस महान रूप ने कुछ ऐसी नई दिशाओं को उद्घाटित किया है जिनका दूरगामी प्रभाव हिन्दी महाकाव्यों की रचना पर पड़ा।

मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि डॉ० त्रिपाठी ने कृष्णकाव्य परम्परा में प्रियप्रवास के द्वारा जो क्रान्ति की धारा उत्पन्न हुई है, उसका सम्यक विवेचन अपने इस शोध प्रबन्ध में किया। उन्होंने पिछले वर्षों में प्रियप्रवास की जो उपेक्षा हुई है, उसकी भी ओर इसमें जो शोध समीक्षा क्षति हुई है उसकी पूर्ति करने का सफल प्रयास किया।

मुझे विश्वास है कि यह ग्रन्थ हिन्दी की महाकाव्य परम्परा को यथारूप समझने में सहायक सिद्ध होगा।

प्रो० डॉ० कुंवर चन्द्र प्रकाशसिंह
(पूर्व कुलपति)
मगध विश्वविद्यालय

भूमिका

मैंने हिन्दी के कृष्णकाव्य में 'प्रियप्रवास' नामक ग्रंथ का आद्यन्त अवलोकन किया। मुझे यह देखकर हर्ष हुआ कि मेरे सहयोगी एवं सुहृद डा० सुरेशपति त्रिपाठी ने कृष्णकाव्य की परम्परा और उसके परिविस्तार का अच्छा अनुशीलन किया है। हिन्दी कृष्णकाव्य को युग युगीन पृष्ठभूमियों में हरिऔध का प्रियप्रवास सर्वथा विशिष्ट प्रयोग है। इसमें प्रथम बार पुराख्यान का आधुनिकीकरण किया गया है और गोपी कृष्ण वियोग को समसामयिक राष्ट्रीय सन्दर्भों में जोड़कर उसकी प्रासंगिकता स्थापित की गई है। वस्तुतः इस काव्य मंच में विरह का महाभाव के रूप में वर्णित किया गया है और उसे लोकमंगल के निमित्त सिद्ध किया गया है। प्राचीन भारतीय शास्त्रों में राधा कृष्ण के चरित्रों को कहीं उज्ज्वल रस के रूप में प्रस्तुत किया गया है कहीं मधुरा भक्ति के रूप में। जबकि हरिऔध ने उसे लोक-संग्रह की भावना से ओत प्रोत करके एक नया मोड़ दिया है। राधा का यह वचन कि 'प्यारे जीवें जगहित करें गेह चाहे न आवें' प्रियप्रवास का बीज वाक्य है। शोधार्थी ने इसे पूरी सतर्कता के साथ इंगित किया है साथ ही प्रियप्रवास की कलाभिव्यक्ति अर्थात काव्यभाषा छन्दोबद्धता तथा अन्यान्य काव्यावदानों को सोद्धरण सप्रमाण उद्घाटित किया है। अंतिम अध्यायों में पूर्ववर्ती तथा परवर्ती प्रभावों का रेखांकन करते हुए प्रियप्रवास के प्रमुख प्रदेशों पर प्रकाश डाला गया है।

हरिऔध और उनके प्रियप्रवास पर चिन्तन लेखन तो बहुत हुआ है किन्तु यह कृति उस सुदीर्घ परम्परा में अपनी पहचान बनाएगी ऐसी मेरी मंगलाशा है। मैं इस शोधकार्य के लिए डॉ० त्रिपाठी को साधुवाद देता हूं। साथ ही यह कामना करता हूं कि वे निरंतर स्वाध्याय एवं शोध समीक्षा का क्रम बनाये रखें।

महाशिवरात्रि 1994

प्रो० सूर्यप्रसाद दीक्षित
आचार्य एवं अध्यक्ष
हिन्दी तथा आधुनिक
भारतीय भाषा विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

प्राक्कथन

भगवान श्रीकृष्ण का नान भक्ति कम स समन्वित व्यक्तित्व जन जन के हृदय मे भक्ति एव माधुय रम आप्लावित करने वाला है। इनके चरित्र के प्रति विशेष आकषण मुझे पिता के सस्कार से मिला। पूज्य पिता जी बडे मधुर भाव से भागवत की कथाएँ सुनाया करते थे जिससे मेरे हृदय म भगवान कृष्ण के प्रति अगाध श्रद्धा का ज म हुआ। रीतिकालीन कवियो की रचना द्वारा अतीत काल से चले आ रहे श्रीकृष्ण के जिस महानतम रूप का ह्रास हो गया था, प्रियप्रवास के माध्यम से कवि ने अतीत के उस चरित्र के कारुण्य को धाकर उन्हे ऐसे रूप मे प्रतिष्ठित किया है जो आधुनिक जीवन जीने का सूत्र प्रस्तुत करता है। प्रियप्रवास म प्राप्त श्रीकृष्ण के विश्व प्रेमी रूप ने मझे सहसा आकृष्ट किया और मैं प्रस्तुत काय हेतु प्रवत्त हुआ। इसे मैं उनकी अहैतुकी कृपा ही मानता हू।

श्रीकृष्ण का य की परम्परा म प्रियप्रवास का स्थान विशिष्ट है जिसके सम्यक अध्ययन हेतु प्रस्तुत ग्रथ आपकी सेवा म प्रस्तुत है। मैं कहाँ तक सफल हो सका हू इसका निणय आपके हाथो मे है।

यह ग्रथ सात अध्यायो मे विभक्त है। प्रथम अध्याय म कृष्ण श द का विस्तत विवेचन है। पुन भारतीय धम शास्त्रो म कृष्ण के लिए प्रयुक्त नामो और उनके विविध रूपो का प्रस्तुन किया गया है।

द्वितीय अध्याय मे कृष्ण का य परम्परा मे सस्कृत साहित्य स लेकर आधुनिक हि दी साहित्य तक का विवेचन किया गया है। यह अध्याय मुख्य दो अशो में विभक्त है—हि दी के पूववर्ती साहित्य म कृष्ण और हिन्दी साहित्य मे कृष्ण। कृष्ण का य की परम्परा प्राचीन भारतीय साहित्य म व्यापक तथा जनमानस की भावना से सम्बद्ध है। इसम आज भी निर तर चि तन के लिए व्यापक सामग्री उपलब्ध है। मैंने पूववर्ती साहित्य मे कृष्ण काव्य का अध्ययन करने के लिए वेद, ब्राह्मण एव आरण्यक ग्र थ उपनिषद पालि प्राकृत अपभ्र श एव ललित कलाओ म प्राप्त कृष्ण एव उनके विविध रूपो की अजस्र धारा जो हिन्दी साहित्य के विविध आयामो मे प्रवाहित रही है का प्रस्तुत रूप में विवेचन है।

ततीय अध्याय मे प्रियप्रवास की पष्ठभूमि—राजनीतिक सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और साहित्यिक दृष्टि स विचार किया गया है। कवि ने

कथा सृजन मे जिन स्रोतो के माध्यम से प्रियप्रवास की रचना की है, उसमे भगवान पुराण, मेघदूत एव पवनदूत प्रमुख हैं। प्रेरक समसामयिक परिस्थितियो एव सस्कारो का भी उल्लेख इस अध्याय म किया गया है।

चतुर्थ अध्याय मे अनुभूति के विविध पक्षो–सस्कृति पात्रो एव प्रकृति के रूपो का विवेचन किया गया है। प्रेम सौन्दर्य पर विचार करते हुए इसके अगीरस शृगार (वियोग पक्ष), अन्य रसो की अभिव्यक्ति तथा वात्सल्य के मनोवैज्ञानिक रूप विश्लेषित हैं। श्रीकृष्ण और राधा तथा अन्य पात्रों एव प्रकृति के आलम्बन उद्दीपन चेतन अचेतन ऋतु वर्णन आदि रूपो का विशद विवेचन है।

पचम अध्याय अभिव्यक्ति पक्ष, काव्य रूप भाषा के विविध रूप शब्दशक्ति, मुहावरे तथा लोकोक्तियाँ गुण अलकारो छन्दो के विवेचन से सम्बद्ध है।

षष्ठ अध्याय म प्रियप्रवास से प्रभावित प्रमुख कृष्ण काव्य ग्रन्थो का विवेचन किया है सप्तम अध्याय म कृष्ण काव्य परम्परा म रचित 'प्रिय प्रवास' का मूल्याकन किया गया है।

काव्य और उसम प्राप्त श्रीकृष्ण के स्वरूप का सम्यक ज्ञान अगाध सागर है, जो परम्परा अनादिकाल स पावन धारा के रूप म प्रवाहमान है उसम अवगाहन करना मेरे लिए लघु मति मोर चरित अवगाहा के समान है।

प्रस्तुत अध्ययन पूज्य प्रो० हरिकृष्ण अवस्थी, प्रो० सूर्य प्रसाद दीक्षित, प्रो० ज्ञान शकर पाण्डेय, डा० ओमप्रकाश त्रिवेदी डॉ० जितेन्द्रनाथ पाण्डेय, डा० विजयप्रकाश मिश्र, डा० हरिशकर मिश्र, डा० रमेशचन्द्र त्रिपाठी प्रभृति सुधी मनीषियो की प्रेरणा का प्रतिफलन है। इस कार्य की सुसम्पन्नता हेतु मैं गुरुवर डा० रामफेर त्रिपाठी का हृदय से कृतज्ञ हूँ। परोक्षापरोक्ष रूपेण मुझे जिन सुहृद महानुभावो स किंचित्पि सहायता मिली है, तथा अलका प्रकाशन के सचालक श्री नरेन्द्र शुक्ला जिन्होने इतने कम समय म पुस्तक प्रकाशित की है। मैं उनका हृदय से आभारी हू।

महाशिवरात्रि, 1994 विनयावनत

–सुरेशपति त्रिपाठी

विषय-सूची

प्रथम अध्याय

कृष्ण : अवधारणा और स्वरूप

कृष्ण शब्द और उसका विवेचन

कृष्ण शब्द कृष धातु और नक प्रत्यय के योग से रंग के अर्थ में कृष+न रूप हुआ। न् का णत्व होकर 'कृष्ण' शब्द बना। मतुप से कृष्ण वान होकर पुनः वार्तिक– गुणवचनेभ्यो मतुप् लोप' से मतुप का लोप होकर कृष्ण शब्द निर्मित हुआ।[1] कृषतिअरीन् के अर्थ में कृष् धातु और नक प्रत्यय के योग से न का णत्व होकर कृष्ण शब्द बनता है। 'हलायुध कोष के अनुसार पुंल्लिंग कृष्ण शब्द शत्रुओं को खींचने, आत्मसात करने भक्तों को आनन्द देने प्रलयकाल में सभी को आकर्षित करने एवं श्याम वर्ण का अर्थ देता है।[2]

'हलायुध कोष में कृष्ण शब्द वर्ण विशेष–काल, नील काले अश्वेत श्याम काल, श्यामल, मेचक, गहुल, राम, शिति आदि का वाचक माना गया है। कृष्ण श्याम, काला नीला बुरा वसुदेव के पुत्र (जो विष्णु के अवतार माने जाते हैं) आदि का वाचक है। अथर्ववेद के अंतर्गत एवं उपनिषद, वेदव्यास अर्जुन अंधेरा पक्ष आदि का वाचक है। 'हिन्दी शब्द सागर के अनुसार कृष्ण विष्णु के दशावतारों में आठवें अवतार वसुदेव के पुत्र देवकी के गर्भ से उनका उत्पन्न होना मान्य है। मानक हिन्दी कोश'[3] में कृष्ण शब्द का व्यापक अर्थ दिया गया है यथा–कृष्ण वि० (सं०–कृष (गाचना नक्) (स्त्री लि० कृष्णा) काले या सांवले रंग का काला, [illegible], नीला बुरा तथा निन्दनीय, यदुवंशी वसुदेव और भोजवंशी देवकी के पुत्र जो भगवान के आठवें अवतार माने गये हैं।

श्रीकृष्ण परब्रह्म[1] वेदव्यास, अर्जुन ऋग्वेद के द्रष्टा एक ऋषि महीने का अंधेरा पक्ष कालागरु, कोकिल कौआ कलयुग काला या नीला रंग काला अगर पाप या अशुभ कर्म, जुए में मिला हुआ, एक असुर जो इन्द्र के द्वारा मारा गया था गोमती द्वीप में रहने वाला शूद्र काल नव वासुदेवों में एक लोहा सुरमा पीपर काली मिर्च करौंदा कदम्ब, एक [illegible] और एक मधु [illegible] के [illegible] का भेद चन्द्रमा का [illegible] या धब्बा

आदि का वाचक है।

'हिन्दी साहित्य कोष' में ऋग्वेद छान्दोग्य कौशीतकी ब्राह्मण के अनुसार कृष्ण शब्द का विवेचन किया गया है जिसका उल्लेख विस्तार पूर्वक आगे इसी अध्याय में किया है।[4] 'वृहत् हिन्दी कोश' में कृष्ण शब्द—काला नीला श्याम भूरा कुत्सित या पाप करने कर्म करने वाला दुष्ट। पु० काला या गहरा नीला रंग यदुवंशी वसुदेव और देवकी के पुत्र जो विष्णु के आठवें अवतार माने जाते हैं परब्रह्म काला हिरण, कौआ, कोकिल अशुभ या पाप कर्म अँधेरा पक्ष कलियुग वेदव्यास अर्जुन, काला अगर काली मिर्च लोहा सुरमा करौंदा एक मन्त्रकार ऋषि द्यूत से प्राप्त धन आदि का वाचक है। 'वाचस्पत्यम्' में कृष्ण शब्द की व्युत्पत्ति के उपरान्त व्याख्या की गयी है जिसमें व्युत्पत्ति उपरिलिखित के समान है। उन्हें देवकीनन्दन ब्रह्म काला नीला वक्ष नीला वक्ष, अमर आदि का वाचक माना गया है।[5] शब्दकल्पद्रुम में कृष्ण शब्द की व्युत्पत्ति और विभिन्न शास्त्रों में वर्णित रूपों की विस्तृत विवेचना है।[6] श्रीधरधारणा-गोस्वामी श्रीमद् भक्ति सिद्धान्ती जी महाराज ने कृष्ण शब्द की व्याख्या इस प्रकार की है— श्री कृष्ण शब्द पूर्ण शुद्ध नित्य, मुक्त, चिन्तामणि स्वरूप है। ब्रह्म परमात्मा, अन्तर्यामी जगत् स्रष्टा विश्वविधाता आदि शब्दों का पूर्ण करने के लिए कृष्ण शब्द की आवश्यकता होती है। मुक्ति-दाता होने के नाते राम नाम को तारक एवं प्रेमदाता होने के नाते कृष्ण नाम को पारक कहते हैं।[7]

'ब्रह्मवैवर्त पुराण' में कृष्ण को सगुण निर्गुण एवं साकार निराकार ब्रह्म बताया गया है। उसी के अनुसार कृष्ण शब्द की व्याख्या करते हुए पुराणकार ने क' ब्रह्मवाचक, ऋ' को अनन्त वाचक, ष शिव वाचक, ण' विष्णु वाचक और विसर्ग को नर नारायण वाचक मानकर उन्हें अनेक नामों से सम्बोधित किया है।[8] कृष्ण' शब्द के व्यापक अर्थ को दृष्टि पथ में रखते हुए कृष्ण की व्यापकता का सहज ही अवलोकन किया जा सकता है।

कृष्ण और उनके विविध अभिधान

श्रीकृष्ण का जीवन लोक रंजक एवं अत्यधिक अद्भुत है। सम्पूर्ण लोक जीवन पर उनके जीवन चरित्र का व्यापक प्रभाव रहा है, फलतः साहित्य में उनके चरित्र का चित्र भी अतिव्यापक रूप में उभर कर सामने आया है। उनकी चर्चा मुख्यतः प्रमुख गौण अथवा प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष दो रूपों में हुई है जिनके लेखन में कवियों के मुख्यतः दो दृष्टिकोण रहे हैं—प्रथम

तो आस्था, श्रद्धादि गुणा से अभिप्रेरित चरित काय के रूप मे उनके सम्पूण या आशिक जीवन का वणन करना तथा द्वितीय प्रासगिक या उपमान या दष्टात रूप म उनके जीवन या चरित्र या उनके जीवन अशा का सचत करना। लौकिक पुरुष एव अलौकिक ब्रह्म रूप म परिस्थिति एव पारिवारिक सामाजिक विचारो के अनुरूप उनके अदभुत अनत रूपा के कारण असख्य नाम हैं। वदिककालीन सस्कत से लेकर वतमान सस्कत तक एव पालि प्राकत अपभ्र श तथा सम्पूण हिन्दी साहित्य मे नामा की सूची न्यून नहीं है। अवतारवाद से प्रभावित लक्ष्मी एव उनके पति विष्णु एव उनके गुण रूप के आधार पर नाम रखे गये हैं। साथ ही लोक जीवन से प्रभावित नाम पारिवारिकता सामाजिकता, गुण रूप, स्थान, वस्तु वस्त्रालकरण आदि पर किसी न किसी रूप म आधारित है। प्रमुख नामो का उपरिलिखित आधार पर विवेचन अत्यधिक रोचक होते हुए भी विस्तार भय से सम्भव नहा।

श्रीकृष्ण के लिए विष्णुवाची नामा क साथ ही लक्ष्मी स सम्बन्धित नामा का प्रयोग किया गया है। विष्णु लक्ष्मी के पति ह, अत पतिवाचक शब्दा को लक्ष्मी क पर्यायवाची शब्दो म जोडकर विष्णु का वाचक शब्द बना लिया गया है। श्रीकृष्ण के लिए भी उन्ही शब्दो–श्रीधर श्रीपति लक्ष्मी वल्लभ, लक्ष्मीपति आदि को व्यवहार मे अधिकाधिक लाया गया है।

उपरिलिखित अवतार सम्बन्धी नामा के अतिरिक्त जीवन स सम्बन्धित अनकानक नामा का श्रीकृष्ण क लिए प्रयोग किया गया है। व्यक्ति का नाम, पारिवारिक या उससे विस्तृत सामाजिक एव वातावरण स सम्बन्धित होता है। उनके अदभुत अनन्त गुण रूप एव कार्यों के प्रभाव क कारण विभिन्न परिप्रेक्ष्या म उनके वणनातीत नाम रखे गये, जिनका कवियो न अपनी सुविधा एव आवश्यकतानुसार छद द धन, आत्मतुष्टि समाज पर अत्यधिक प्रभाव, कथावस्तु क पूण निर्वाह आदि की पूर्ति के लिए प्रयोग किया है। जहाँ अधिकांश उपरिलिखित नामा मे श्रीकृष्ण के ब्रह्मत्व की झलक मिलती है वहीं कुछ नाम रूप के लिए प्रयोग किय गये है जिनम साधारणत कृष्ण क परिवार, रूप गुणादि की ही झलक मिलती है। इन लौकिक नामों के पिता, माता, जाति कुल, किशोर कौतुक एव विनाद रूप गुण, वस्त्रालकरण, गोप गोपी राधा, शत्रुता मित्रता, स्थान, गाय आदि के आधार पर भेद किये जा सकते हैं। एकाधिक भेद से सम्बन्धित नाम मिश्रित वग क [illegible]तगत रखे जा सकते हैं।

(क) पितृ सम्बन्धी–पिता के गुण एव प्राधान्य के कारण पुत्र नाम

पिता के नाम के आगे नन्द, नन्दन, कुमार, लाल, सुवन, सुत आदि शब्द लगाकर रख लिया जाता है। चूंकि भारतीय संस्कृति के अनुसार जन्म देने वाला एवं पालन करने वाला पिता मान्य है, अतः श्रीकृष्ण जी को वसुदेव और नन्द दोनों का पुत्र कहा जाता है। इस आधार पर साहित्य में उनके निम्न नाम व्यवहृत हैं--

वसुदेवकुमार वासुदेव वसुदेव सुत नन्द-नन्दन नन्दनन्द नन्दलाल, नंदसुत नन्दकुमार नंदसुअन या नंदसुवन आदि।

(ख) मातृ सम्बन्धी--प्रायः सन्तानाधिक स्त्रियाँ पुत्र का नाम उसकी माँ के आधार पर रख लेती है। धीरे धीरे वे नाम प्रचलित हो जाते हैं। कृष्ण के जन्म और पालन करने वाले पिता के समान माताएँ भी दो थी। अतः दोनों माताओं के आधार पर उनके नाम प्राप्त होते हैं--यशोदानन्दन, यशोदापुत्र यशोदालाल (लला) यशोदसुअन (सुवन) यशोदासुत, देवकी नंद। देवकीपुत्र देवकीलाल आदि।

(ग) जाति या कुल सम्बन्धी--जहाँ परिवार एवं समीप निवासियों में माता पिता के आधार पर नाम का व्यवहार होता है वहीं कुलेतर समाज में वे जाति या कुल सम्बन्धित नाम प्रचलित हो जाते हैं। कृष्ण के लिए साहित्य में प्रयुक्त नाम दर्शनीय है--यदुनाथ, यदुपति यादवपति, यादव आदि।

(घ) किशोर कौतुक विनोद सम्बन्धी--कृष्ण ने बचपन में अनेक आश्चर्यजनक कार्य किये। उसमें उन्होंने कहीं क्रीडा की तो कहीं गुप्त रूप धारण कर सभी को आश्चर्यचकित किया। इनके आधार पर उनके चीर हारी लीलाहारी (लीला मोदन वाला) चुडिहारी, वैद्य आदि रूप प्राप्त होते हैं।

(ङ) रूप गुण सम्बन्धी--कृष्ण के रूप एवं गुण सम्बन्धी नाम, उनके रूप तथा जीवन कार्य एवं प्रभाव से सम्बन्धित हैं। जैसे--श्याम घनश्याम, श्यामसुन्दर कृष्ण मुरलीधर गोवर्द्धनधारी गिरिधर गिरिधारी, जल विहारी वंशीधर नटवर दामोदर मोहन मनमोहन, मदनमोहन दीन बन्धु करुणासिंधु आदि।

(च) वस्त्रालंकरण सम्बन्धी--वस्त्र और अलंकार के प्रभाव के कारण ऐसे नाम रख लिए जाते है। यथा--पीताम्बरधारी, मुकुटधारी शंखधारी, चक्रधारी आदि।

(छ) गोप गोपी सम्बन्धी--गोप गोपियों से अत्यधिक प्रेम एवं उनसे सम्मानित होने के कारण ऐसे नामों से कृष्ण अभिहित किये जाते है। जैसे--

गोपेश, गोपश्वर गोपीपति, गोपी वल्लभ गोपीनाथ आदि ।

(ज) राधा सम्बन्धी–राधा से अत्यधिक प्रेम होने के कारण राधा-प्रिय या पति रूप में मानकर उनके अनेक नाम दिये गये हैं। जैसे–राधा मोहन, राधेमोहन राधाप्रिय राधेश राधेकृष्ण, राधावल्लभ आदि ।

(झ) मित्रता सम्बन्धी–अर्जुन के मित्र होने के कारण अर्जुन के द्वारा ही इन्हें सखा नाम से सम्बोधित किया गया है।

(ट) शत्रु सम्बन्धी–समाज विरोधी कार्य करने वाले कंस और उसके सहयोगियों का विनाश करने के कारण इन्हें उन सभी का शत्रु कहा जाता है–कंसारि अरि सूदन आदि ।

(ठ) स्थान सम्बन्धी–चूंकि जन्म या क्रीडा स्थान से व्यक्ति का अत्यधिक प्रेम होता है साथ ही व्यक्ति के प्रभाव के कारण स्थान और व्यक्ति के गुणादि में मिलकर नाम रख लिये जाते हैं। ऐसे नामों की साहित्य में भरमार है–कुंजविहारी, बनवारी, विपिनविहारी, ब्रजराज, ब्रजेश ब्रजेश्वर वृन्दावन विहारी द्वारकाधीश आदि ।

(ड) गाय सम्बन्धी–श्रीकृष्ण के जीवन का गायों से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। कहीं कहीं अलौकिक अर्थ में 'गो' इन्द्रियों का वाचक होकर इसका प्रयोग संयमी विष्णु के लिए किया गया है, परन्तु लौकिक अर्थ में गाय को चराने के कारण कृष्ण के उनसे सम्बन्धित अनेक नाम प्राप्त होते हैं–गोपाल गोचारक गोचारी धेनुचरैया गोविन्द गोपति, गोपेश आदि ।

(ढ) मिश्रित–एकाधिक वर्गों से सम्बन्धित कुछ नामों का यत्र तत्र उल्लेख है। जैसे–लक्ष्मी और रूप को मिलाकर श्रीकृष्ण अथवा सम्मान सूचक श्री शब्द और रूप सम्बन्धी कृष्ण को मिलाकर 'श्रीकृष्ण' शब्द का व्यवहार किया गया होगा। इसी प्रकार रूप और गाय सम्बन्धी वर्ग से मिलकर कृष्ण गोपाल शब्द भी उनके लिए प्रयुक्त होता है।

इन लौकिक और अलौकिक नामों के अतिरिक्त विशेषणादि भी नाम की भांति प्रयोग होने लगे जिनमें अधिकांश का उल्लेख ऊपर कर चुके हैं। बस उनके अनन्त प्रभाव को देखते हुए अनन्त नाम हैं जो अन्य साहित्यों एवं जनमानस में न्यून रूप में व्यवहृत हैं। इनकी चर्चा करना अधिक तर्क-संगत नहीं है।

उपरिलिखित अभिधानों के अवलोकन से श्रीकृष्ण का अनन्त प्रभाव दर्शित होता है जिसकी पुष्टि भारतीय साहित्य एवं जनमानस में प्राप्त उनके विस्तृत निरूपण से हो जाती है।

कृष्ण के विविध रूप

श्रीकृष्ण के विविध रूप भारतीय साहित्य में प्रचुरता से प्रयुक्त किये गये हैं। वाङ्मय साहित्य के साथ भारतीय जनमानस उनके इन रूपों का सहज ही आस्वादन लिया करता है। जन्मभूमि ब्रज के समीप उनकी रूप राशि से रस गंगा अनवरत प्रवाहित है, जो वहाँ के निवासियों एवं पर्यटकों के हृदय को परितृप्त करती है। श्रीकृष्ण के उन रूपों का यहाँ उल्लेख अपरिहार्य।

(क) आयु सम्बन्धी—शिशु किशोर युवा एवं प्रौढ़ आदि रूप।

(ख) *सामाजिक रूप—पुत्र भ्राता, सखा प्रेमी (राधा के प्रेमी रूप में एवं अन्य गोपियों के प्रेमी रूप में)* पति पिता आदि रूप।

(ग) गुण कार्य सम्बन्धी रूप—नटवर गोपाल सहचर छलिया या चोर (माखनचोर चुरिहारी वस्त्र चीरहारी लिलहारी) लीलारूप (रास लीला वसन्तलीला फागलीला वंशीलीला पनघटलीला हिण्डोलालीला निकुंजलीला) जलविहारी सहपाठी उपदेशक नायक, रणछोड़ द्वारकाधीश, दूल्हा संगठनकर्ता कूटनीतिज्ञ, सारथी आदि रूप।

(घ) भावात्मक रूप—अबोध वत्सल शृंगारी, रौद्र उत्साही अद्भुत भक्त वत्सल शान्त आदि रूप।

(ङ) अलौकिक रूप—प्रलयोगेश्वर परम योगेश्वर ब्रह्म, अशरण शरणदाता, पतितपावन विराट अन्तर्यामी आदि रूप।

श्रीकृष्ण के इन विविध रूपों के अवलोकन से स्पष्ट हो जाता है कि मानव जीवन के सर्वांगीण विकास हेतु कोई भी पक्ष अछूता नहीं रह जाता। उनके इन रूपों का अवलोकन कृष्ण काव्य में व्यापकता से किया जा सकता है भारतीय साहित्य में ही नहीं समस्त कलाओं में भी इनके अधिकांश रूपों की सौन्दर्यमयी झाँकी उपलब्ध है। कृष्ण के नाम रूप गुणादि से परिचित हो जाने पर साहित्य में वर्णित कृष्ण के जीवन चरित्र पर विस्तृत विचार आगे किया जायेगा। □

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 अमरकोश—प्रथम काण्ड प्रथम वर्ग श्लोक—18

2 कृष्ण पु०—कर्षत्यरीन् महाप्रभावशक्तया यद्वाकर्षति आत्मसात् करोति आनन्दत्वेन परिणमयति भक्तानां मन इति यावत्। कृषवर्णे इति बाहुलकात् वर्णम् विनापि नक णत्वं च। यद्वाकर्षति सर्वान् स्वकुक्षौ प्रलय काल कर्षणात् कृष्णो रमणाद् रामो व्यापनाद विष्णु इति श्रुतेस्तथात्वम्। हलायुध कोष पृ० 243

3 मानक हिन्दी कोश, पृ० 575
4 हिन्दी साहित्य कोश (भाग–2), पृ० 93
5 कृष्ण पृ० कृष+नक भगवतोऽवतार भेद दवकी नन्दते' कृषि-भू वाचक शब्द णच् निवृत्तिवाचक । 'तयोरक्य परब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयत इत्युक्ते परब्रह्माणि, वेदव्यासे अर्जुने मध्यम पाण्डवे च । कृष्ण वर्णत्वात कोकिले विश्व, काले वर्ये, शब्दर नीले, वर्णे अमर अशुभ कर्मणिच, द्रौपद्या, नीलीवृक्षे इत्यादि ।
–वाचस्पत्यम–तर्कवाचस्पति श्री तारानाथ महाचार्येण संकलितम तृतीय भाग पृ० 2210–2213
6 शब्द कल्पद्रुम–राजा माधव कान्तदेव बहादुरेण (द्वितीय काण्ड) पृ० 180 182
7 कल्याण– कृष्णांक' सम्वत 1988 पृ० 15
8 ब्रह्मवैवत पुराण 6/212 221 □

द्वितीय अध्याय

कृष्णकाव्य की परम्परा

(क) हिन्दी के पूर्ववर्ती साहित्य मे कृष्ण

वदिक वाड मय म कृष्ण का उल्लख किसी न किसी रूप म अवश्य प्राप्त है। यजुर्वेद मे पोडसकलायुक्त प्रजापति के प्रजा के साथ रमण करने का उ लेख है। वदो म गोपी व्रज रासलीला आदि शब्द व्यवहृत है। गोपथ ब्राह्मण क पूव भाग म कृष्ण के स्वरूप एव कर्मादि का स्पष्ट सकेत है।[1] ऋग्वेद क मण्डलो म चतुर्वेद स्वामी पण्डित नीलकण्ठ सूरि आचाय गुलाबराय एव राय चौधरी महोदय न कृष्ण के अस्तित्व को स्वीकार किया है। वदिक वाङ्मय मे कृष्ण की स्थिति का सक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत है–

(अ) ऋग्वेद म श्रीकृष्ण–ऋग्वेद के अनक मत्रो मे 'कृष्ण' नाम का प्रयोग ऋषि रूप मे उल्लख है। वेद म ऋषि कृष्ण को अगिरस कहा गया है। आचाय सायण न भी अष्ट मण्डल के सूक्त 85 का भाष्य करते हुय कृष्ण का अगिरस माना है।[3] सूक्त 86, 87 के आधार पर वेदाथ दीपिकाओ म कृष्ण को अगिरस माना गया है। कौशीतकी ब्राह्मण मे कृष्ण को अगिरस का शिष्य माना गया है।[4] छान्दोग्योपनिषद् म यही अगिरस कृष्ण देवकी पुत्र के रूप मे वर्णित है।[5] इस प्रकार यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अगिरस ऋषि क शिष्य ऋग्वेद के म त्रो म ऋषि कृष्ण देवकी पुत्र श्रीकृष्ण ही है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल न उक्त प्रमाणो क आधार पर श्रीकृष्ण को एक महान ऋषि माना है।[6] ऋग्वेद क मन्त्रो द्वारा यह स्पष्ट है कि इस युग म गोपालन का प्रचलन था, जिन्हे अचनापूवक प्राप्त किया गया था।[7]

ऋग्वेद मे अनेक स्थलो पर गाय और ब्रज शब्द का उल्लेख मिलता है।[8] अगिराओ को देवताओ न गायें प्रदान की– यद्धत्याभगिरोभ्यो धनु देवाऽदत्त [9] जिनकी कामना अगि ऋषियो द्वारा की गई थी।[10]

भगवान विष्णु को गोपालक आदि अनक नामो स अभिहित किया गया है जिसम अवतारी कृष्ण के गोप्रेम का पुष्ट आधार प्राप्त है–

(क) विष्णुर्गोपा परम पातिपाथ

(ख) या गवा गोपतिवशी,

(ग) त्वाभि मे गोपतिम् विश्वमाह ।[11]

पुराणो मे कृष्ण विष्णु के अवतार माने गये है और उनका जन्म वृष्णि वंश में माना गया है जिसका ऋग्वेद में उल्लेख है तथा विष्णु श्रीपति, लक्ष्मीपति राधापति आदि नामों से अभिहित किये गये हैं ।[12] अन्यत्र अनेक स्थलों पर विष्णु के लिये राधापति का प्रयोग है ।[13] षष्ठ मण्डल में उल्लेख है कि दस्यु का हनन करने वाला व्यक्ति गोयुक्त व्रज को जाता है—'व्रज गोपत दस्युह्यागमत ।[14] श्रीकृष्ण का जन्म गोयुक्त व्रज मे हुआ था । श्रीमद्भगवद्गीता मे श्रीकृष्ण के अवतार का हेतु दुष्टों का विनाश और धर्म की स्थापना के लिये युग-युग में जन्म लेना है ।[15]

ऋग्वेद मे यमुना, गो एवं 'राधा कृष्ण' का उल्लेख मिलना भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है—'यमुनायामाधि श्रुतमुद्राधोगव्यम मजे ।'[16] यही नहीं, ऋग्वेद में कृष्ण और इन्द्र के युद्ध का उल्लेख भी है जिसमें कृष्ण अंशुमती नदी के किनारे इन्द्र के विरुद्ध सेना लेकर खडे होते हैं ।[17] इस घटना तथा व्रजवासियों द्वारा इन्द्र की पूजा का परित्याग, इन्द्र कोप आदि लोक प्रचलित कथा में पर्याप्त साम्य है । ऋग्वेद मे 'यदु' शब्द का प्रयोग भी श्रीकृष्ण के वंश का संकेत करता है जो समुद्र के पार निवास करते थे । पुराणादि में यही यदु शब्द जातिवाचक हो गया । ऋग्वेद में भगवान विष्णु की माधुर्यभाव से स्तुति की गयी है जिसमें वायु और नदियों के मधुवर्षण से औषधियों, उषा पृथ्वी की रज आकाश, वनस्पति, सूर्य एवं गायों के मधुर होने का स्पष्ट उल्लेख है—

मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिंधव ।
माह्वीन सन्तोषधि,
मधुनक्त मुतोपसो मधुमत्पार्थिवरज ।
मधुद्यौरस्तु न पिता,
मधुमान्नोवनस्पतिममधुमा अस्तु सूर्य ।
माध्वीर्गावो भवन्तु न ।।
मधुवाताऋतायते मधुस्क्षरन्ति सिन्धव
श नो इन्द्रो वृहस्पति श नो विष्णुरुरुक्रम ।।[19]

यही कारण है कि विष्णु के अवतारी श्रीकृष्ण माधुर्यभाव से युक्त हैं और सम्पूर्ण कृष्ण साहित्य माधुर्योपासना से परिपूर्ण है जिसमें श्रीकृष्ण के बाल स्वरूप की प्रधानता है । ऋग्वेद में भगवान विष्णु की शिशु रूप में की गयी स्तुति का उल्लेख है—

शिशु जनान हरि मज्जन्ति ।'[20]

यहाँ ईश्वर को अनेक नामो से सम्बोधित किया गया है ।[21]

इस प्रकार ऋग्वद म श्रीकृष्ण के माधुयभाव युक्त वालस्वरूप, सखा गोपालक तथा दुष्ट विनाशक रूपो का बहुश उल्लेख है ।

(आ) यजुर्वेद मे श्रीकृष्ण—यजुर्वेद के कुछ मन्त्रों में श्रीकृष्ण का सकेत प्राप्त होता है । इसमें हरि को गोपति एव सवश्रेष्ठ गोपति कहा गया है—

ध्रुवा अस्मिन गोपतौ स्यात बह्वीय जयानस्य पशुपाहि ।[22]

यजुर्वेद के हरि (ईश्वर) सर्वव्यापी ब्रह्मा, सविता वरुण, इन्द्र एव रुद्र हैं ।[23] उन्हे दिक्पति, पशुपति और पुष्टपति कहकर नमस्कार किया गया है ।[24] वे सम्पूर्ण देवताओ और भुवनो के स्वामी हैं ।[25] यहाँ ईश्वर चराचर जगत में व्याप्त है ।[26]

यह सर्वव्यापी ईश्वर चन्द्रमा की कान्ति से युक्त है, ओज और शक्ति का भण्डार है तथा अमृत स्वरूप है ।[27] यहाँ भी ब्रज का उल्लेख प्राप्त होता है ।[28]

इस प्रकार यजुर्वेद म कृष्ण के ईश्वरत्व रूप को सिद्ध करने वाले पुष्ट प्रमाण उपलब्ध है ।

(इ) सामवेद मे श्रीकृष्ण—सामवद म कृष्ण से सम्बन्धित अनेक सकेत हैं जिसमे उन्हे राधापति, अश्वपति गोपति आदि नामो से अभिहित किया गया है ।[29] उपास्यदेव राधापति के रूप म उनकी स्तुति की गई है । इसमे ब्रज और गायो का उल्लेख है ।

कृष्ण के समान हरि को भी रभाने वाली गायो के समीप आना वर्णित है । हरि को सुसख्य अद्वितीय व सखा कहा गया है—

सूरो योगासु गच्छति सखा सुरेषा अद्वयु ।[3]

(जो गायो के मध्य जाता है वह सखा, सुसख्य और अद्वितीय है) ।

इस प्रकार सामवद म भी राधापति अश्वपति गोपति के रूप म उनकी स्तुति तथा व्रज एव गाय के वणन से उनके देवकी पुत्र रूप की पुष्टि होती है ।

(ई) अथववेद मे श्रीकृष्ण—अथववेद म ईश्वर की सव यापकता एव उनके अदभुत कार्यो का वणन है । ईश्वर ने स्वय को गोपति स्वीकार किया है ।[31] ऋषियो को नमस्कार किया गया है,[32] जिनमें अगिरा ऋषि प्रमुख हैं । अथववेद के अनुसार ईश्वर सवशक्तिमान है और सभी उसकी आज्ञा का पालन करते ह ।[33]

ईश्वर को सवशक्तिमान, परम बन्धु और सत्पथ सखा माना गया है ।[34]

अथर्ववेद म भक्ति के साथ मित्र भाव में ईश्वर के गोपा रूप का उल्लेख मिलता है जिसमें भक्तगण, ईश्वर की भक्ति प्राप्ति करने के उद्देश्य स आराधना करते है। यहाँ ईश्वर को श्याम कहकर सम्बोधित किया गया है–[35]

इसमें श्रीकृष्ण क सवशक्तिमान रक्षक एव मित्र आदि विभिन्न स्वरूपा का उल्लेख है। श्रीकृष्ण के गुरु घोर आंगिरस' व्रज, घास, गाय, बछिया आदि का उल्लख कृष्ण सम्बन्धी साहित्य के लिये महत्वपूर्ण है।

(उ) ब्राह्मण और आरण्यक ग्रन्थो मे श्रीकृष्ण–ब्राह्मण और आरण्यक ग्रन्था में वदिक मन्त्रा का विस्तृत विवेचन किया गया है। वैदिक युग की भक्ति भावना इस समय तक कमकाण्ड की ओर उन्मुख हो चुकी थी। फलस्वरूप ब्राह्मण ग्रन्था में यज्ञ और स्तुतियो का बाहुल्य है। इन ग्रन्था की रचना पुराणा में वर्णित आख्याना का आधार मानकर की गयी है, जिनमें ज्ञान विज्ञान और आय सस्कृति के साथ साथ श्रीकृष्ण लीला के बीज भी अकुरित हुए हैं। कौशीतकी ब्राह्मण में कृष्ण का उल्लेख मिलता है–

कृष्णो ह तदगिरसा ब्राह्मणदसीय तृतीय सवनम् ददश।[36]

शतपथ ब्राह्मण म कृष्ण को यज्ञ स्वरूप कहा गया है–

यज्ञोहि कृष्ण'[37]

ततरीयारण्यक म नारायण वासुदेव और विष्णु की उपासना का उल्लेख मिलता है–

नारायण विदमहे वासुदवाय धीमहि।
तन्नो विष्णु प्रचोदयात।[38]

इन ग्रन्था म ईश्वर के विभिन्न अवतारा यथा शतपथ ब्राह्मण में मत्स्यावतार[39] कूर्मावतार[40] एव वामनावतार[4] ततरीय ब्राह्मण म वाराह अवतार[4] का उल्लेख है।

उपयुक्त विवचन से यह स्पष्ट है कि ब्राह्मण और आरण्यक ग्रन्था म अवतार भावना का समुचित विकास हो चुका था, क्योंकि इन ग्रन्था म अवतार स्तुतियाँ प्राप्त होती हैं।

(ऊ) उपनिषदों में श्रीकृष्ण–उपनिषदा में ज्ञान कम उपासना क सिद्धान्ता का निदशन है। उपनिषदकारों ने अपनी क्षमता और शक्ति से चिंतन की विविध धाराओं को जन्म दिया है। उपनिषद दार्शनिक और चिंतन प्रधान हैं। व उपनिषद जिनम श्रीकृष्ण स सम्बन्धित कथाएँ किसी-न किसी रूप में पायी जाती हैं, निम्न हैं–

1 छान्दोग्योपनिषद	2 महानारायणोपनिषद
3 नारायणोपनिषद	4 वासुदेवोपनिषद
5 कृष्णोपनिषद	6 गोपलतापिनी (पूर्वभाग उत्तर भाग)
7 राधोपनिषद	8 राधिकातापनीयोपनिषद

वैदिक साहित्य का छान्दाग्योपनिषद में सबसे प्रामाणिक उल्लेख है। छान्दाग्य में श्रीकृष्ण दवकी पुत्र हैं और उनके गुरु आगिरस हैं।[43]

दवकी पुत्र श्रीकृष्ण के लिए घार आगिरस ऋषि ने शिक्षा दी है कि यदि मनुष्य का अन्त समय आवे तो उसे तीन वाक्यों का उच्चारण करना चाहिये—हे ईश्वर! तू अक्षय है, तू अविनाशी है तू एक रस है एव तू प्राणियो का जीवनदाता है। श्रीकृष्ण ऐसी शिक्षा पाकर पूर्ण हो गये।

महानारायणोपनिषद में ब्रह्म की अनन्त विभूतियो का उसके सगुण निर्गुण दोनो रूपों में विवेचन है।[44] परब्रह्म के साकार और निराकार उभय स्वरूप इस उपनिषद में स्वभाव सिद्ध स्वीकार किये गये है।[45] अनन्त शुद्ध सत्त्वमय नारायण, लीलामय और मायामय होकर सयुक्त हो जाते है। सम्पूर्ण चराचर जगत का सहार एव सजन का हेतु नारायण को ही माना गया है। इसमें ससार से मुक्ति के उपाय और उसके स्वरूप का वर्णन है। षष्ठ अध्याय में मोक्ष मार्ग एव उपासना की अनेक विधियो का उल्लेख है। सप्तम अध्याय में कृष्ण को अनेक नामों से विभूषित किया गया है। जैसे—गोपीजन वल्लभ गोपाल चूडामणि, वासुदेव केशव नारायण माधव, गोविन्द विष्णु मधुसूदन श्रीधर दामोदर सकर्षण अच्युत देवकी पुत्र, जनार्दन, उपेन्द्र हरि आदि।

महानारायणोपनिषद म सगुण ब्रह्म के प्रति पूर्ण आस्था विद्यमान है। यहाँ नारायण जो परात्पर ब्रह्म है के रूप में कृष्ण को स्वीकार किया गया है। इस उपनिषद में प्रस्तुत श्रीकृष्ण के रूप का आकलन करने से स्पष्ट हो जाता है कि इसमें उन्हे पूर्ण ब्रह्मत्व प्राप्त हुआ।

'नारायणोपनिषद' में भी देवकी पुत्र श्रीकृष्ण का उल्लेख है। उन्हे मधुसूदन पुण्डरीकाक्ष और अच्युत कहा गया है।[46] यहाँ ब्रह्म के साकार एव निराकार दोनो रूपो में सामञ्जस्य स्थापित किया गया है।

कृष्णोपनिषद मे वृन्दावन कृष्ण बलराम देवकी एव गोप गोपिकाओ का आध्यात्मिक प्रतीको द्वारा वर्णन किया गया है। वसुदेव, देवकी कृष्ण बलराम सभी वेद के स्रोत है। देवकी ब्रह्मपुत्री वसुदेव वेद और कृष्ण बलराम वेदार्थ है।[47]

लीला रूपधारी गोप कृष्ण साक्षात परब्रह्म हैं–

"गोप रूप हरि गानात्माया विग्रह धारणा ।"[49]

प्रस्तुत उपनिषद में गोपियों और गायों को वेद ऋचाओं का रूप प्रदान किया गया है–

"गोप्यो गाव ऋचस्तस्य ।"[50]

वृन्दावन स्थली में गोप गोपिकाओं के साथ क्रीड़ा करने वाले कृष्ण देव रूप में उत्पन्न हुए हैं एवं वेद उनकी स्तुति करते हैं। कृष्णोपनिषद में प्रयुक्त रूप के आधार पर ब्रह्मा-लकुटी, रुद्र, वंशी, देवराज इन्द्र-शृंग (शृंगी बाजा) गोकुलवन-वैकुण्ठ द्रुम तपस्वी महात्मा, बलराम शेषनाग और सनातन ब्रह्म श्रीकृष्ण ही हैं। इस उपनिषद् में श्रीकृष्ण को ब्रह्मत्व का रूप प्रदान करते हुए उनसे सम्बन्धित जिन पात्रों का प्रतीक रूप में प्रस्तुत किया गया है वे सभी साभिप्राय एवं उपयुक्त हैं।

'गोपालतापिनी' उपनिषद के पूर्वभाग में भी कृष्ण के ब्रह्मरूप का उल्लेख है। गोप वंश उद्भूत श्रीकृष्ण कल्पवृक्ष के नीचे बैठे हैं, वे श्याम वर्ण के हैं उनके अंग प्रत्यंगों से आभा फूट रही है वे चराचर सृष्टि के स्वामी हैं तथा यमुना के चंचल लहरों को चूमकर शीतल मंद, सुगंधित पवन उनकी सेवा में सुखानुभूति कर रहा है।'[51] ब्रह्माजी श्रीकृष्ण की महिमा का वर्णन करते हुए उन्हीं से आकाश और आकाश से वायु आदि की उत्पत्ति स्वीकार करते हैं।"[52]

आगे के अंशों में कृष्ण के विभिन्न नामों का उल्लेख है। उनके स्वरूप की महत्ता को स्वीकार करते हुए कृष्ण को विश्व का स्वरूप माना गया है। पालक एवं संहारकर्ता के रूप में वर्णन करते हुए उनकी वन्दना की गई है।'[53] यह उपनिषद् भक्ति भावना से ओत प्रोत है। इसमें वर्णित है कि श्रीकृष्ण का ध्यान मनन और चिन्तन करने से व्यक्ति सांसारिकता से मुक्त हो जाता है।'[54]

'गोपालतापिनी' उपनिषद् के उत्तर भाग में गोपालकृष्ण और उनके साथ सकाम ब्रजवासियों का उल्लेख है जिसमें गन्धर्वी श्रेष्ठ गोपी मानी गयी है–

"तासां मध्यहि श्रेष्ठा गन्धर्वी ।"[55]

भगवान कृष्ण स्थूल सूक्ष्म दो शरीरों के कारण हैं। अन्तःकरण में व्याप्त जीवभोक्ता हैं और उसका अंशी उपभोक्ता। अभोक्ता ही नित्य और अनन्त है–

स एव अव्यक्तोऽनन्तो नित्यगोपाल ।"[56]

भगवान कृष्ण नित्य हैं। उन्होंने शंख, चक्र और गदा धारण किया है। जीव ब्रह्म (कृष्ण) का अंश है। साधनारत साधक को सदैव यह ध्यान रखना चाहिए कि वह स्वयं अज मायापति है सनातन है अनिरुद्ध है बलराम है। यथा–

मायापति ह्यजो नित्य प्रद्युम्नाद् सनातन ।'[57]

समस्त सारभूत पदार्थों के संचय को मथुरा कहा गया है–

सत्सारभूत यद्यस्या मथुरा स निगद्यते।'[58]

राधोपनिषद में श्रीकृष्ण को परमदेव का रूप प्रदान किया गया है। वे सर्वेश्वर नित्य और अखिल ब्रह्माण्ड के अधीश्वर हैं। वहीं ज्ञान इच्छा संधिनी और आह्लादिनी शक्तियाँ प्रधान हैं और वही राधा हैं। श्रीकृष्ण और राधा एक दूसरे की आराधना में सदैव लगे रहते हैं। इसीलिए ये राधिका कहलाती हैं।[59] राधा की महानता को स्वीकारते हुए यह कहा गया है कि जो राधा का छोड़कर मात्र श्रीकृष्ण की उपासना करते हैं वे मूढ़ है।'[60]

राधिकातापिनीयोपनिषद में राधा को विशिष्ट और उच्चतम पद प्रदान करते हुए उपनिषदकार ने यह मान्यता स्थापित की है कि सृष्टि का उद्भव भी राधिका के द्वारा ही होता है। राधा परात्पर ब्रह्म की शक्ति से युक्त है। श्रीकृष्ण उन्हें एकान्त में पाकर उनकी चरण धूलि मस्तक पर धारण करते हैं। राधा और श्रीकृष्ण भिन्न शरीर वाले नहीं है। मात्र लीला के समय दो रूपों में व्यक्त होते हैं। रचनाकार की मान्यता है कि जो राधा और कृष्ण के सम्बन्ध में सुनता है पढ़ता है, अथवा स्मरण करता है वह निश्चय ही परमधाम को प्राप्त होता है।

महाभारत में श्रीकृष्ण

महाभारत में कृष्ण समस्त शास्त्रों के ज्ञाता कुशल राजनीतिज्ञ परम ज्ञानी और शूरवीर हैं। वहीं वे लौकिक मानव हैं और परब्रह्म परमेश्वर भी। इसमें श्रीकृष्ण चरित्र की प्रमुख घटनाएं वर्णित हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण के अवतार तथा वासुदेव स्वरूप का चित्रण है जो महाभारत का ही अंश है। आदिपर्व में श्रीकृष्ण नारायण के रूप में अवतीर्ण हुए है।'[61] द्रौपदी स्वयंवर में पाण्डवों से श्रीकृष्ण का मिलन अर्जुन का श्रीकृष्ण के पद ज म में सखा होने का वर्णन– आस्वाप्रिय सखायौ तौ नर नारायणवषी "[62] श्रीकृष्ण की सम्मति से अर्जुन द्वारा सुभद्रा का हरण और विवाह का

वणन[63] एव श्रीकृष्ण की सोलह हजार स्त्रियो का वणन है।"[64] महाभारत मे कृष्ण विलक्षण प्रतिभावान परमेश्वर्यवान परात्पर ब्रह्म रूप म प्रस्तुत ह।

पुराणों मे श्रीकृष्ण

वदिक साहित्य और महाभारत मे कृष्ण के बौद्धिक रूप की विशिष्टता है वेदा म ऋषि रूप म वे उपदेष्टा हैं तो महाभारत मे अजु न के सारथी है, तथा गीता मे कमयोग, नानयोग और भक्तियोग के उपदेष्टा हैं। पुराणा म श्रीकृष्ण अपूव आभा (सौ दय) से मण्डित आन द से परिपूण हैं। वे कहीं भक्ता म लीन हैं तो कही नानिया म। पराणो म वे योगिया के साध्य रूप म वर्णित हैं।

महाभारत के परिशिष्ट-हरिवश पुराण म श्रीकृष्ण के अवतार से स्वगरोहण तक की कथा का विवेचन पुराणा म भी है। पुराण साहित्य म यद्यपि सभी अवतारा का उल्लेख है, पर तु कृष्णावतार को प्रधानता दी गई है और उनक सम्पूण चरित्र की विवेचना की गई है। यही नहीं अनेक भाषाआ म कृष्णचरित्र का वणन पुराणा की देन है।

यह पुराण महाभारत के खिलपव' नाम से जाना जाता है। हरिवश पुराण म यदुवश के उदभव से लेकर पराभव तक का सक्षिप्त वणन है। यदुवश वणन म वसुदेव की 14 स्त्रिया का उल्लख है जिसम रोहिणी की सतानें"[65] तथा देवकी के आठवें पुत्र श्रीकृष्ण के ज म का उल्लेख है।"[66] इसम उनको ब्रह्म का पूण अवतार माना गया है। वर्णित कथानक के अनुसार नारद न विष्णु भगवान से राक्षसा के सहार क लिए अवतार धारण करन क लिए प्राथना की।[6] श्रीकृष्ण गोलोक के सर्वोच्च स्थान के निवासी हैं जो सभी लोका म श्रेष्ठ है।"[68] गोवधन धारण करने की कथा म नवीनता यह है कि इसम इन्द्र को श्रीकृष्ण क ज्येष्ठ भ्राता के रूप म उल्लिखित किया गया है।'[69] हरिवश पुराण म द्वारिकावासी श्रीकृष्ण के राम, विहार, कलि क्रीडा और शृगार का अनुपम चित्रण है। जल क्रीडा करते हुए गापियों ने जिस रूप मे उन्ह चाहा वे उसी रूप में दृष्टिगत हुए एव गापिया को उन्होंन वशीभूत कर लिया।'[70]

इस पुराण म व्रजवासी कृष्ण की हल्लीस क्रीडा अथवा रास लीला का विस्तृत विवेचन है। शरदकाल की पूर्णिमा की मनोरम आभा विद्यमान है उसमें कीडारत गापिया का देखकर उनके मन मे कामेच्छा जागृत हो जाती है।"[71] शरदऋतु की रात्रि म उन्होंन गापिया की मण्डली म अपूव आन द का आस्वाद लिया।"[72] पारिजात प्रकरण म सत्यभामा के अधिक क्रोधित

होने पर श्रीकृष्ण उन्हें प्रसन्न करने के लिए पारिजात वृक्ष लाकर देने का आश्वासन देते हैं। [73] हरिवंश पुराण में उनको अवतार रूप में प्रस्तुत करने के बाद भी उनके चरित्र में अलौकिकता और सूक्ष्मता के स्थान पर पार्थिव एवं ऐन्द्रिय रूप ही दृष्टिगत होता है। कहीं कहीं अश्लील रति क्रीडाओं का वर्णन भी है।"[74] इस ग्रंथ के बीस अध्यायों में श्रीकृष्ण का उल्लेख है जिसमें उनके दुष्ट दलन रूप की प्रधानता है। उन्होंने शकट, पूतना यमलार्जुन धेनुक प्रलम्ब केशी आदि का वीरतापूर्वक वध किया है। इसमें वृन्दावन प्रवेश गोवर्धन धारण एवं हल्लीस क्रीडा का भी सुन्दर वर्णन है।' [75]

पद्मपुराण के सृष्टि खण्ड में श्रीकृष्ण के जन्म की कथा है।"[76] इसमें गोप गोपिकाओं की विस्तृत सूची है तथा उनके रूप स्वभाव वेश भूषादि की विस्तृत विवेचना है। राधा और चन्द्रावली की प्रतिद्वन्द्विता भी इस पुराण में उल्लिखित है [77] पाताल खण्ड के 69 से 83 अध्याय तक में उनकी तथा वृन्दावन आदि स्थानों की विशेषताओं का उल्लेख है। अध्याय 90 में स्वर्ग से सत्यभामा के लिए कल्पवृक्ष लाने[78] सत्यभामा–सम्वाद[79] तथा गीता के अठारह अध्यायों के माहात्म्य[80] का वर्णन है। इसी पर्व में मत्स्य कूर्म वाराह नृसिंह वामन, परशुराम और राम आदि अवतारों की कथाएं वर्णित हैं। [81] इसमें श्रीकृष्ण चरित्र से सम्बन्धित अन्य अनेक कथाएं भी हैं।"[82] श्रीकृष्ण सम्बन्धी विभिन्न घटनाओं और उनके भावात्मक चरित्र का जिस रूप में वर्णन किया गया है उसका बहुत कुछ प्रभाव परवर्ती साहित्य के कृष्ण भक्त कवियों पर पड़ना स्वाभाविक ही था।

'ब्रह्मवैवर्त पुराण' में श्रीकृष्ण लीलाओं का सविस्तार वर्णन है। यह पुराण सभी पुराणों का सार है। इसमें उनका पूर्ण ब्रह्म रूप में वर्णन है। चतुर्थ अध्याय के श्रीकृष्ण जन्म खण्ड में उनकी लीलाओं से सम्बन्धित प्रचुर सामग्री प्राप्त है। श्री राधा मन्दिर का पाँचवें अध्याय में उल्लेख है जिसमें ब्रह्मादि देवों ने उनकी स्तुति की है और उन्हें सगुण निर्गुण एवं साकार निराकार ब्रह्म माना है। [83] राधा कृष्ण के अभेद रूप और उनके साहचर्य का तर्क संगत उल्लेख है। यह भी स्पष्ट किया गया है कि दोनों की अभिन्नता के कारण ही सृष्टि संरचना हुई है।'[84] श्रीकृष्ण जन्म और जन्मोत्सव का स्वाभाविक चित्रण है। उनके जन्मोपरान्त गर्ग ऋषि द्वारा आकर कृष्ण का नामकरण करते हैं और उन्हें पूर्ण ब्रह्म के गुणों से युक्त स्वीकार करने का उल्लेख है। कृष्ण शब्द की व्याख्या करते हुए

पुराणकार ने क' को ब्रह्मवाचक 'ऋ' को अन त वाचक, 'ष' को शिव वाचक, 'ण' को विष्णुवाचक और विसग का नर-नारायण वाचक माना है। श्रीराधा के साथ सयुक्त श्रीकृष्ण को अनेक नामो से सम्बोधित किया गया है।"[85] राघा कृष्ण के विवाह सस्कार का चित्रण इस पुराण की अपनी विशेषता है। विवाह के समय में होने वाली प्रदक्षिणा और वेद मन्त्र पाठ का भी वणन है। यहाँ राधा द्वारा कृष्ण के गले में जयमाल पहनाने एव उनकी रतियुद्ध का वणन मिलता है।'[86]

ब्रह्मववत पुराण के अध्याय–16 मे अनेक राक्षसा के सहार अध्याय–19 में कालियदमन अध्याय–21 मे इन्द्र-यज्ञ भजन एव गोवधन धारण, अध्याय–22 मे धेनुक वध तथा अध्याय–28 म रास क्रीडा का वणन है जो अन्य पुराणा म भी प्राप्त है। रासलीला प्रसग घोर अश्लील रूप म वर्णित है। इसमें श्रीकृष्ण के मथुरा गमन से लेकर उनके स्वर्गारोहण तक सभी घटनाओ और कथाओ का उल्लेख है। अध्याय (3 से 71 तक कम द्वारा देखे गये दुस्वप्न और कृष्ण का ब्रज से मथुरा के लिए प्रस्थान का मार्मिक चित्रण है। अध्याय 72 म कुब्जा वणन, 73व अध्याय मे कस वध तथा श्रीमदभगवदगीता के समान ससार की असारता तथा उनके ब्रह्मत्व एव शक्ति का निदशन है। श्रीकृष्ण के वियोग मे गोपियो की बडी दयनीय दशा हो जाती है। यह सूचना मिलते ही वे अपन सखा उद्धव को गोपियो को सान्त्वना देने के लिए गोकुल का प्रेषित करते हैं। अध्याय–99 मे कृष्ण बलराम उपनयन 102 म विद्याध्ययन हतु गुरु गेह गमन, 104 मे द्वारका गमन तथा 102 से 109 तक रुक्मिणी विवाह का उल्लेख है। सूर तथा हिन्दी के अनेक कृष्ण भक्त कवियो पर इस पुराण का विशेष प्रभाव पडा है।

'ब्रह्मपुराण' क आलोचको ने इसे प्राचीनतम पुराण स्वीकार किया है। इसम कृष्णावतार प्रयोजन के साथ सम्पूण कृष्ण के चरित्र का सक्षिप्त रूप से उल्लेख मिलता है। यथा–कस द्वारा दैत्या को बाल वध का आदेश तथा विभिन्न राक्षसो का सहार कृष्ण की बाल लीला, गोवधन धारण, चाणूर वध कस वध जरासन्ध युद्ध, रुक्मिणी हरण, पारिजात हरण कृष्ण अदिति सवाद द्वारका-त्याग यदुवश त्याग, आभीर अजुनयुद्ध परीक्षित राज्याभिषेक एव पाण्डव गमन आदि। इसमे पूणरूपेण कृष्ण के ब्रह्मत्व की स्थापना है।

वायुपुराण मे श्रीकृष्ण साक्षात परब्रह्म तथा राधा उनकी लीला विस्तारक सहचरी हैं। उनक पीताम्बर और मोर मुकुट धारक एव गोपालक रूप का चित्रण है। माकण्डेयपुराण' म भी उनके अवतार और बाल लीला

तथा मथुरा एव द्वारका के कार्यों का उल्लेख है। गरुडपुराण' म कृष्ण एव उनके लीलाओ का सक्षिप्त उल्लेख है। मत्स्यपुराण' के अध्याय 251 के श्लोक 43 45 46 मे यदुवश तथा वृष्णि वश का वणन है। इस पुराण में कृष्ण-ज म के विषय म यह उल्लिखित है कि महादेवाधिदेव श्रीकृष्ण का अवतार विहार करने के लिए हुआ था—

> *अथ देवो महादेवा पूण कृष्ण प्रजापति ।*
> विहाराय सदेवेशो मानुषेष्विह जायते ।।[87]

कृष्णावतार के सम्बन्ध म मत्स्यपुराण तथा गीता के प्रस्तुतीकरण म समानता है।[88] इसके अनुसार भगवान श्रीकृष्ण सम्पूण सृष्टि के आधार, निगु ण निराकार एव निर्विशेष है। [89]

विष्णुपुराण के चौथ और पाँचवें अश म श्रीकृष्ण के सम्पूण चरित्र की विशद विवचना है। अग्निपुराण' म भी कृष्णावतार, यदुवश एव देवकी क गभ से वासुदेव की उत्पत्ति का उल्लेख मिलता है। नारद पुराण म राधा कृष्ण के तात्विक रूप को प्रस्तुत किया गया है। इसम श्रीकृष्ण को अखिल सृष्टि की उत्पत्ति का कारण स्वीकार किया गया है। 'शिवपुराण म राधा कृष्ण का उल्लेख है जिसमे गोलोकवासिनी राधा के गुप्त स्नेह करने से भावी पत्नी (कृष्ण की) होने का उल्लेख है।

> कलावती सुता राधा साक्षात गोलोक वासिनी।
> गुप्त स्नेह निबद्धा सा कृष्णपत्नी भविष्यति ।।[90]

'शिवपुराण मे श्रीकृष्ण द्वारा शिव की तपस्या तथा उनसे अभीष्ट वर प्राप्त करने का भी उल्लेख है।[91] लिंगपुराण' म कृष्ण उनकी 16 हजार पत्नी एव प्रद्युम्न आदि अनेक पुत्रों का विवरण है। इसम भी श्रीकृष्ण को *विष्णु का अवतार माना गया है।[92] यहाँ भक्ति तत्व की प्रधानता है,* विशेषकर नवधा भक्ति और उनकी महिमा की।

वामन पुराण' म श्रीकृष्ण चरित्र का विस्तृत उल्लेख मिलता है। इसम भी उन्हें गोविन्द गुणातीत सनातन और परात्पर ब्रह्म माना गया है।[93]

'भागवतपुराण' म महाभारत से लेकर अन्य पुराणों मे श्रीकृष्ण सम्बन्धी जो कुछ भी वर्णित है, सभी का समन्वित रूप भागवत मे देखने को मिलता है। श्रीमदभागवत के अनुसार ईश्वर के सभी अवतारों मे केवल श्रीकृष्ण ही पूण परात्पर ब्रह्म है अन्य सभी अशावतार हैं।

एतेचाशकला पुस कृष्णस्तु भगवान स्वयम ।"[94] भागवत म कृष्ण के असुर सहारक, राजनीतिक कूटनीतिज्ञ, योगेश्वर परात्पर ब्रह्म,

वाल क्रीडारत रास लीलारत एव अन्य घटनाओं का विस्तृत विवेचन है। सभी तथ्यों के वर्णन मे श्रीकृष्ण की प्रधानता है। दशम स्कन्ध के पूर्वार्द्ध मे कंसादि अनेक असुरो का वध बाललीला के अन्तर्गत किया गया है। उत्तरार्द्ध म अनेको महान् राजनीतिज्ञ पराक्रमी योद्धा एव उनसे सम्बन्धित विभिन्न अलौकिक घटनाओ का उल्लेख है। उसम वर्णित कृष्ण चरित्र का उल्लेख करते हुए डा० गिरधारी लाल शास्त्री ने लिखा है—

"भागवत का कृष्ण सब कलाओ मे पूर्ण है। वह वेदान्त सुनाता हुआ भी असुरो का सहारक है। क्षात्र तेज धारण करता हुआ मोहन है। गाम्भीर्य का सागर होते हुए भी मुरली बजाता नाचता गाता हसता है। योगेश्वर होकर भी रसिकेश्वर है। न जाने कितने भक्त उसकी इन अनोखी बालछवि पर मुग्ध हैं। कृष्ण के भक्तों को उनका मोर मुकुट पीतम्बर-धारी रूप ही सर्वाधिक प्रिय है।"[95]

भागवत म भक्ति के सारगर्भित रूप का विवेचन करते हुए उसके तीन रूपो-विशुद्ध भक्ति, नवधाभक्ति और प्रेमाभक्ति का उल्लेख है। भक्ति-ज्ञान योग तप, दान स्वाध्याय एव धर्म सबसे विशिष्ट भक्ति को स्वीकार किया गया है। ज्ञान और भक्ति का सामजस्य स्थापित करते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि दोनो म तात्विक अन्तर नही है। यहाँ उनके अवतार से स्वर्गारोहण तक की कथा का विशद विवेचन है। उनके ब्रह्मत्व और समस्त चरित्र का जितना विस्तृत विवेचन इस पुराण में हुआ है उतना अन्यत्र नहीं।

लौकिक सस्कृत साहित्य मे श्रीकृष्ण

लौकिक सस्कृत साहित्य वैदिक पौराणिक साहित्यिक प्रवृत्तियों से पूर्ण प्रभावित है। पुराणेतर कृष्ण सम्बन्धी अनेक ग्रन्थो पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि ये ग्रन्थ पुराण एव महाभारत के कथानक पर आधारित हैं। ईसापूर्व रचित सस्कृत ग्रन्थो म श्रीकृष्ण के मानवीय पक्ष का विवेचन प्रारम्भिक व्याकरण काव्य चम्पू काव्य एव नाटकों म प्राप्त होता है। इन ग्रन्थो के अवलोकन से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि श्रीकृष्ण परम तत्व जगत सृष्टा एव रक्षक के रूप म प्रस्तुत किये गये हैं। पाणिनि के अष्टाध्यायी म वासुदेव[96] का उल्लेख है।

पतञ्जलि ने अर्जुन वासुदेव दोनो का उल्लेख किया है। इसमे कंस वध का भी वर्णन है।[97] प्रसिद्ध नाटककार भास ने 'व्यायोग दूतवाक्य एव बालचरित्र म श्रीकृष्ण के चरित्र का उल्लेख किया है। अश्वघोष के बुद्ध चरित्र म श्रीकृष्ण की लीला माधुरी का उल्लेख है।[98]

महाकवि कालिदास ने 'मेघदूत' में 'गोपवेशस्य विष्णो' एवं 'कुमार सम्भव' में 'कृष्णेन देहोदहनाय शेष' के द्वारा श्रीकृष्ण की ओर सकेत किया है। भट्टनारायण कृत 'वेणीसहार' मे द्रोपदी अपमान के समय श्रीकृष्ण का दूत रूप मे वर्णन है। माघ ने 'शिशुपाल वध' मे श्रीकृष्ण का उल्लेख किया है। 'ध्वन्यालोक' और 'नलचम्पू' में भी राधा और श्रीकृष्ण प्रेम का चित्रण किया गया है। शिशुपाल की टीका एवं 'यशस्तिलक चम्पू' में कृष्ण गोपी प्रेम तथा श्रीकृष्ण के राधा वल्लभ स्वरूप का उल्लेख है। क्षेमेन्द्र ने 'दशावतार चरित्र' में श्रीकृष्ण के पराक्रमी, वत्सल, दुष्ट दमन आदि रूपों में विशद विवेचन किया है। परवर्ती साहित्य में कृष्ण के ब्रह्मत्व के साथ उनके माधुर्य रूप का विकास हुआ। लीला शुककृत 'श्रीकृष्ण कर्णामृत स्त्रोतम' में भक्ति भावना से परिपूर्ण श्रीकृष्ण के प्रति समर्पण का भाव निर्दशित है। 'गीतगोविन्द' में जयदेव ने राधा माधव की केलि क्रीडाओं का रम्य श्रृंगारिक रूप चित्रित किया है 'सदुक्तिकर्णामृत' मे भी कृष्ण की ललित लीलाओं का उल्लेख मिलता है।

बगाल के वैष्णव कवियो के 'चम्पू काव्यों' में श्रीकृष्ण की श्रृंगार लीला का चित्रण है एवं भक्ति को स्थान दिया गया है। 'राघव माधव यादवीय काव्य' की रचना मे राम, पाण्डव और कृष्ण तीनो के जीवन चरित्र वर्णित हैं। विभिन्न ग्रन्थो मे प्राप्त कृष्ण चरित्र सम्बन्धी विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 16वी शताब्दी तक सम्पूर्ण भारत में कृष्ण भक्ति का प्रसार हो चुका था। इन काव्यों में श्रीकृष्ण के मानवीय एवं लोकोत्तर दोनों रूप प्राप्त होते हैं।

पालि साहित्य मे श्रीकृष्ण

पालि की जातक कथाओं में विष्णु के अनेक रूपों का उल्लेख है। कृष्ण द्वयपायन जातक के अनुसार द्वयपायन तपस्वी नाम में मात्र कृष्ण का उल्लेख है जिन्हें 'कण्हदीपायन' (कृष्ण द्वयपायन) कहा गया है।[99] लक्ष्मीजी के उल्लेख के साथ लक्ष्मीपति कृष्ण को विशिष्ट रूप में स्वीकार किया गया है।[100] सोननन्द जातक में वासुदेव का उल्लेख है जो सभी प्राणियो को विविध रूपों का दर्शन कराता है।[101] तेसकुण जातक में समस्त देवगणो के साथ ब्रह्मा का उल्लेख है जो दिव्यलोक को प्राप्त होते हैं।[102] घटजातक मे कृष्ण जीवन सम्बन्धी अनेक घटनाओं का वर्णन है जो भागवत् की कथा के समतुल्य है।

प्राकृत साहित्य मे श्रीकृष्ण

प्राकृत साहित्य म 'गाहा सतसई' (गाथा सप्तसई) म राधा कृष्ण, गापी और यशादा की मक्षिप्त कथाआ का उल्लेख है।'[103] विमल सूरि के हरिवश चरित' म कृष्ण कथा का समुचित विवचन है। शीलाचाय ने चयपन्नमहापुरिस चरिउ' म श्रीकृष्ण आर बलदेव की रोचक कथाएँ वर्णित है। सरस्वती कण्ठाभरण म भोजराज न सुन्दर छन्दो के माध्यम स राधा कृष्ण यशादा, रुक्मिणी से सम्बन्धित कथाओ को लौकिकता के आधार पर निरूपित किया है।'[104] हरिभद्र सूरि के 'नेमिणाह चरिउ' म श्रीकृष्ण को प्रभु' और देवत्व का रूप प्रदान किया गया है। मम्मट के काव्य प्रकाश म श्रीकृष्ण क लौकिक एव अलौकिक—दोनो रूप मिलते है।'[105] 'प्राकृत पैंगलम मे विष्णु शिव तथा कृष्ण की भक्ति से सम्बन्धित हैं जिसम श्रीकृष्ण पूण ब्रह्म रूप मे प्रस्तुत किय गये हैं।'[106] प्राकृत क अधिसख्या ग्रन्था मे लौकिक अथवा अलौकिक किसी न किसी रूप की कृष्ण सम्बन्धी कथाओ का उल्लख अवश्य है।

अपभ्रश साहित्य मे श्रीकृष्ण

अपभ्रश साहित्य म श्रीकृष्ण का विस्तृत वणन उपलब्ध है। स्वयभू कवि रचित अरिष्टनेमिचरित मे कृष्ण चरित्र का विस्तार स वणन है। आचाय गुणभद्र लिखित उत्तरपुराण श्रीकृष्ण क जीवन से सम्बन्धित महत्वपूण ग्रन्थ है, इसम प्राप्त कृष्ण सम्बन्धी घटनाएँ भागवत् और हरिवश पुराण पर आधारित है। कृष्ण के प्रति माता का वात्सल्य प्रेम उनकी नटखट वत्तिया एव शृगार रूप का सजीव चित्र प्रस्तुत है। इसी प्रकार पूतना वध, उलूख-बधन, गोवधन धारण कालिय दमन, कृष्ण गोपी विहार एव रास क्रीडा[107] के उल्लेख म स्वाभाविकता है। अपनी सजीवता और कवि कौशल क कारण तत्कालीन युग का बडा लोकप्रिय ग्रन्थ रहा है। शृगार रस म वणन कहा कही अश्लील हो गय हैं, क्याकि कवि कृष्ण के देवत्व रूप को छोडकर मानव मन की सहज अनुभूतिया को प्रस्तुत करने म सफल हुआ है। इस ग्रन्थ की वणन शली और विषयवस्तु को देखकर डा० शिवप्रसाद सिह ने स्वीकार किया है कि जैन कविया ने श्रीकृष्ण को ईश्वर रूप म स्वीकार नहीं किया है।'[108]

12वी शताब्दी म हेमचन्द द्वारा सकलित अपभ्रश के छन्दा म कृष्ण चरित्र का उल्लेख मिलता है। इनम कुछ छन्द स्तुतिपरक हैं और कुछ शृगारपरक। शृगार वणन मे कवि श्रीकृष्ण का पूण लौकिक रूप म प्रस्तुत

करता है। वे राधा के सौंदर्य सुषमा (विशेष रूप से पयोधर) को देखकर वशीभूत हो जाते हैं और कहते हैं कि मैं वही करूंगा जो राधा को अच्छा लगेगा—

हरि णच्चाविउ पगणहिं विम्हई पाणिव लोउ।
एम्वइ राह पओहरह ज भावइ त होउ॥

कवि सिंह ने 'पज्जुण चरिउ (प्रद्युम्न चरित्र) में प्रसंग रूप में कृष्ण को प्रस्तुत किया है जिसमें कृष्ण के अलौकिक रूप एवं उनकी वीरता का उल्लेख है। अपभ्रंश में रचित रचनाओं का अवलोकन एवं विवेचन करने से यह ज्ञात होता है कि इनकी प्रारम्भिक रचनाओं में कवियों द्वारा कृष्ण के लौकिक एवं श्रृंगारी रूप को ही लेकर रचनाएँ की गई हैं परंतु बाद में कृष्ण को विष्णु, लक्ष्मीपति आदि मानकर परमतत्व रूप प्रदान किया गया।

भारतीय ललित कलाओं में श्रीकृष्ण

भारतीय ललित कलाओं का विकास पर्याप्त प्राचीन है। यह हृदयगत अनुभूति की अभिव्यक्ति का कला सरल एवं रोचक उपाय है। भारतीय संस्कृति का कोई भी अंग कला क्षेत्र से अछूता नहीं रहा है। भगवान श्रीकृष्ण के समान व्यापक एवं असाधारण व्यक्तित्व वाला विश्व में कोई नहीं हुआ है। इसलिए कलाओं में उनका सम्बन्ध होना स्वाभाविक है। विदेशी आततायियों और हिन्दू संस्कृति के विरोधी तत्वों के द्वारा भारतीय कलाओं को नष्ट प्राय कर देने के बाद भी पुरातत्व विदों ने कृष्ण से सम्बंधित अनेक भग्नावशेषों की खोज निकाला है। मौर्यकाल के स्तम्भों एवं शिलालेखों पर दृष्टिपात करने से यह बात स्पष्ट हो जाता है कि इस समय वासुदेव कृष्ण के मन्दिर थे। मेगास्थनीज (300 ई० पू०) के विवरण के आधार पर उस समय शैव और वैष्णव—दो मत चल रहे थे। कृष्ण सर्वत्र पूज्य थे और उनके मंदिर भी थे।[109] ग्रीक लेखक कृष्ण को हरक्यूलियस के नाम से पुकारते थे। ऐसा उस समय के उल्लेख से ज्ञात होता है।[110]

गुप्त वंश के सम्राट चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने भी श्रीकृष्ण के जन्म स्थान पर एक विशाल एवं भव्य मंदिर का निर्माण कराया था।'[111] भिटारी का स्तम्भ लेख, जिसमें जितसित परितोषात्मार साश्रुनेत्र हरि पुखि कृष्णा देवकी भन्युयत अंकित है।[112] तात्पर्य यह है कि स्कंदगुप्त पुत्र वियोग से व्यथित माता पिता से उसी प्रकार मिले, जैसे कृष्ण शत्रुओं

को नष्ट करके देवकी से मिले थे। कण्ववंशीय राजा सवतात' के द्वारा निर्मित मंदिर का उल्लेख चित्तौडगढ के समीप 'नगरी' के शिलालेख में है जिसमें भगवान संकर्षण और वासुदेव की प्रतिमाएँ अंकित हैं। मथुरा के एक शिलालेख द्वारा यह पता चलता है कि 'वसु नामक व्यक्ति द्वारा मथुरा जन्मस्थली में भगवान वासुदेव के मंदिर का निर्माण कराया गया था। सारनाथ संग्रहालय में श्रीकृष्ण की गोवर्धन धारी प्रतिमा शौर्य और ओज से परिपूर्ण है जो काशी के एक टीले के पास मिली थी।"[113] मथुरा संग्रहालय में स्थित मूर्ति (संख्या 1344) के द्वारा कृष्ण के नवजात शिशु रूप का संकेत मिलता है परन्तु यह मूर्ति खण्डित है। 'आर्कियोलाजिकल सर्वे रिपोर्ट में "तुमेन /ग्वालियर) की विन्ध्यवासिनी देवी का उल्लेख करते हुए कृष्ण के आरम्भिक जीवन की अनेक घटनाएँ अंकित हैं।"[114]

राजस्थान में दूसरी से पाँचवीं शताब्दी तक निर्मित मंदिरों में वासुदेव द्वारा कृष्ण का गोकुल ले जाना, यशोदा द्वारा उनका लालन पालन, राक्षसों का संहार कालिय दमन, माखन चोरी आदि श्रीकृष्ण के जीवन से सम्बन्धित लीलाओं का अंकन है। माधवस्वरूप वत्स द्वारा रचित ग्रंथ में उल्लेख है कि देवगढ (झाँसी) के मन्दिर में वसुदेव कृष्ण को गोद में लिए हुए तथा बलराम कृष्ण दोनों को नन्द यशोदा भोज कराते हुए अंकित है। उसमें राक्षसों के संहार का दृश्य चित्रित है।"[115] पूर्वी बंगाल (पहाडपुर) में एक मंदिर का अवशेष प्राप्त हुआ है जिसमें कृष्ण जीवन सम्बन्धी अनेक घटनाओं के संकेत मिलते हैं।"[116]

आठवीं शताब्दी में एलोरा में बने दशावतार मन्दिर एवं दसवीं शताब्दी में खजुराहो के लक्ष्मण मन्दिर में श्रीकृष्ण जीवन से सम्बन्धित घटनाएं उत्कीर्ण हैं। गुजरात के आबूमनोद सोमनाथ और मांगरोल स्थानों में श्रीकृष्ण से सम्बन्धित शिलालेख मिले हैं जिसमें कृष्ण और उनके चरित्र की अनेक घटनाएँ उल्लिखित है। गिरनार (गुजरात) के एक शिला लेख में दामोदर कृष्ण की स्तुति अंकित है। कृष्ण एवं उनसे सम्बन्धित घटनाओं की प्रतिमाएं देश के विभिन्न संग्रहालयों में संग्रहीत हैं।

इस प्रकार निःसंदेह यह कहा जा सकता है कि हमें ललित कलाओं के माध्यम से श्रीकृष्ण के जीवन सम्बन्धी अनेक घटनाओं की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है जिसमें उनकी ब्रज लीला और मथुरा लीला की प्रधानता है। कृष्ण का पत्थर, पीतल लोहा आदि धातुओं से निर्मित विभिन्न मुद्राओं की मूर्तियाँ उपलब्ध हैं जिनसे उनकी अलौकिक एवं ऐतिहासिक महत्ता का सहज अवलोकन किया जा सकता है।

(ख) हिन्दी साहित्य मे श्रीकृष्ण

आदिकालीन साहित्य मे श्रीकृष्ण

हिन्दी साहित्य म श्रीकृष्ण का उल्लख चन्दबरदायी के द्वारा रचित पृथ्वीराजरासो' मे प्राप्त है। उनका समय स० 12? –स० 1249 का है। चन्दबरदायी प्रसिद्ध राजपूत सम्राट पृथ्वीराज चौहान के सामन्त एव राज कवि थे। 'पृथ्वीराज रासो हिन्दी साहित्य का पहला महाकाव्य है जो मुख्य रूप से पृथ्वीराज का प्रशसा ग्रथ है फिर भी इसम विष्णु क दशाव तारो का सक्षिप्त वणन है जिसम कृष्णावतार का वणन व्यापक रूप मे प्राप्त होता है। इसके दूसरे समय' 262 छन्दा म कृष्ण क अवतार एव उनकी मुख्य लीलाओ का वणन है। राधा और कृष्ण का शृगारिक वणन मनमोहक ढग म प्रस्तुत किया गया है। भगवान कृष्ण की मुरली कष्ट विनाशक रूप म वर्णित है।

चन्दबरदायी ने रासलीला का बहुत ही सरस एव मनोहारी वणन किया है। रासलीला के दृश्यो जिसमे दो दो गोपियो क बीच एक एक कृष्ण विद्यमान है का गीतमय सजीव एव सरस चित्रण है। कृष्ण के द्वारा एका एक ब्रज छोडकर मथुरा चले जाने पर गोपिया की दशा बडी दयनीय हो जाती है। उन्हे पाने का वे पूण प्रयास करती है, किन्तु न मिलने पर उला हना और खीज भरा रोष प्रकट करती है।

गोपिया की विरह कथा का वणन कवि ने मार्मिक ढग से प्रस्तुत किया है, जिसम कवि ने उपमान रूप म प्रकृति का विशद रूप म समायोजन करते हुए आकाश चन्द्रमा, तारे एव उल्टे हुए समुद्र का उल्लेख किया है–

'भय सुउडगन गात बर पूरा ससिय आकास।
सुवर बाल बढयोति दुप सिन्धु उलट्यो मास ॥'[117]

कस के रणस्थल म जाते हुए भगवान कृष्ण द्वारा द्वार पर ही कुव-लयापीड हाथी का मद मदन करने चाणूर और मुष्टिक के साथ उनका तथा बलराम का मल्ल-युद्ध होने, मथुरा म कस का सहार करन से पूव उसे देखकर ही उनके हृदय मे आमष का सचार होन यमुना जी म विश्राम घाट पर कस की अन्त्येष्टि क्रिया स्वय सम्पादित करने उग्रसेन का राज तिलक तथा वसुदेव और देवकी को बन्दीगृह स मुक्त करान के दृश्य का बडा सुन्दर वणन प्राप्त है। भगवान श्रीकृष्ण का वणन राधापति और राधा वल्लभ रूप म किया गया है–

राधापती तमार राधा भइ भुजगय बैन।
राधा वल्लभ बसी वरन पत मुत्रोअन जात ॥'[118]

मथिलि कोकिल विद्यापति का समय सन् 1360 ई० से 1448 ई० तक का है। इन्होंने अपनी पदावली म राधा कृष्ण के सयोग-शृगार का बडा ही सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। उनके शृगार सम्बन्धी पदो को देखकर अनेक आलोचक उन्हे भक्त कवि न स्वीकार कर घोर शृगारी कवि मानते हैं पर तु वास्तव म यदि इनकी भावनाओ और रचनाओ को सही परिप्रेक्ष्य म रखकर उनका मूल्याकन किया जाय तो यह स्पष्ट हो जाता है कि पदावली म जहाँ पर शिव गौरी दुर्गा, गगा आदि से सम्बन्धित भक्ति के पद मिलते हैं, वही पर राधा कृष्ण क प्रेमाम्बु मे विभोर होकर माधुय भावना से ओत प्रोत सबसे अधिक पद है। इस प्रसग मे यहाँ पर यह कहना कि विद्यापति कोरे शृगारी कवि हैं और उनकी राधा कृष्ण सम्बन्धी रचनाओ म भौतिकता तथा वासना का प्राधान्य है धृष्टता होगी पर तु यह कटु सत्य भी होगा कि ऐसा विचार केवल वे लेखक ही रखते हैं जिनके पास स्वय विद्यापति की रचनाओ का समझने की क्षमता नही है। विद्यापति के राधा कृष्ण सम्बन्धी पदो के शृगारिक होने का कारण यह है कि भगवान श्रीकृष्ण स्वय ही एक धीरललित नायक हैं, जिनक बाल्य एव यौवन काल का ही वणन अधिकाश काव्या म किया गया है। विद्यापति पर द्वैतवाद का प्रभाव था जो उनके राधा कृष्ण की प्रेम लीला सम्बन्धी रचनाओ म स्पष्ट रूप स परिलक्षित होता है। इन पर शब्द शोधन एव व्यापार योजना के क्षेत्र म जयदेव का प्रभाव था।

विद्यापति के रसीले पदो म राधा कृष्ण क दिव्य प्रेम और ललित विलास का प्रवाह उमडता हुआ दिखाई पडता है। कृष्ण की ललित लीलाओ का जैसा मनोरम वणन इनकी कृति मे प्राप्त है वैसा अन्यत्र दुलभ है। इनकी रचनाओ म भगवान कृष्ण क प्रेम मयी मूर्ति के साक्षात दशन होते है। गोपिकाओ के मध्य व्रज मे हास विलास करते हुए राधा कृष्ण का उत्कृष्ट शृगार-वणन हिन्दी म सवप्रथम इन्ही की कृतियो म हुआ है। कृष्ण के अलौकिक चरित्र सम्बन्धी अनेक दिव्य दृश्य इनके पदो म दृष्टव्य है। विद्यापति की रचनाओ म मधुर और सानुप्रास पदावली क साथ साथ माधुय भाव अतुलनीय है।

कविवर नरपति के 'बीसलदेव रासो' (स० 1212) म श्री राधा-कृष्ण और रुक्मिणी का उल्लेख मिलता है। इस ग्रन्थ मे प्रत्यक्ष रूप स श्रीकृष्ण की लीलाओ का वणन नही किया गया है, परन्तु अप्रत्यक्ष रूप स कृष्ण के नाम का उल्लेख उपमान रूप मे प्रयोग म मिलता है, जैसे गोविन्द कान्ह आदि। इसी प्रकार रुक्मिणी और राधा का भी उल्लेख है। बीसलदव

और राजमती के विवाह के समय कृष्ण और रुक्मिणी के साथ उनकी उपमा की गई है—

> राजमती राही (या) जो सी ।
> इस कुँवरि नही त्रिभुवन माँहि ।
> \+ \+ \+
> हइ हयलवउ जाडियउ ।
> जाणिक रुक्मिणी मिलिया का ह ॥[119]

चौदहवी शता दी के प्रारम्भ म उमापति रचित पारिजातहरण नाटक म स्थान स्थान पर कृष्ण के प्रति भक्ति सम्ब धी छद प्रस्तुत किय गय हैं । इस नाटक म सत्यभामा के आग्रह पर भगवान श्रीकृष्ण द्वारा पारिजात वक्ष लान की कथा वर्णित है । स यभामा कृष्ण प्रिया है और हरि चरणा म उनकी अपार श्रद्धा है । कवि न भगवान कृष्ण को ब्रह्मा और शिव क लिए भी अगम्य बताकर उनको परमब्रह्म परमश्वर रूप म प्रतिष्ठित किया है । सधारु अग्रवाल (1354 ई०) न प्रद्युम्नचरित की रचना की, जो जन परम्परा पर आधारित काव्य है । इसम प्रद्युम्न क ज म हरण तथा उनक विजेता रूप म वापस लौट आन की कथा है । इसम सत्यभामा और रुक्मिणी के सपत्नीत्व एव नारद की कथाआ का उल्लेख है । कृष्ण की वीरता एव प्रेम विवाह का भी वणन है । विष्णुदास (1435 ई०) न श्रीकृष्ण एव उनक चरित्र से सम्ब धित रुक्मिणी मगल स्नेह लीला महा भारत की कथा आदि रचनाए लिखी हैं । इन रचनाआ म श्रीकृष्ण की जीवन सम्ब धी अनेक घटनाआ का उल्लेख मिलता है ।

भक्तिकालीन साहित्य मे श्रीकृष्ण

उत्तर भारत म गुप्त वशीय राजाओ के समय (400 से 600 ई० क बीच) मे वष्णव धम और भागवत धम का प्रसार चरमोत्कष पर था । यहीं से भागवत धम और वष्णव भावना दक्षिण भारत म पहुँची और बडे ही प्रबलतम रूप म विकसित हुई । दक्षिण भारत म रामानुज निम्बाक विष्णु स्वामी तथा मध्वाचाय नामक चार आचार्यों ने चार प्रमुख सम्प्रदायो की स्थापना की जो क्रमश रामानुज सम्प्रदाय निम्बाक या सनक सम्प्रदाय विष्णु स्वामी सम्प्रदाय और ब्रह्म अथवा माध्व सम्प्रदाय के नाम से जान जाते हैं । इन वैष्णव भक्ता का विशेष रूप मे कृष्ण भक्ति के प्रचार प्रसार म महत्वपूण योगदान है । उत्तर भारत म भी कृष्ण भक्ति का प्रसार इन्हा के द्वारा हुआ क्योकि गुप्त साम्राज्य के पतन के साथ ही उत्तर भारत म

बौद्ध और जैन सम्प्रदायो का प्रभाव बढ चुका था। हर्षवर्द्धन जैसे यशस्वी और प्रतापी सम्राट बौद्ध धर्म को अपनाकर उसके प्रसार का मार्ग प्रशस्त करने म लगे थ, यहाँ तक कि सातवी और आठवीं शती के बाद वैष्णव धर्म भावना उत्तर भारत में बहुत कुछ क्षीण हो चली। आठवी शताब्दी मे स्वामी शकराचार्य और कुमारिल भट्ट ने वैष्णव धर्म को पुन प्रतिष्ठित किया। परन्तु इसके बाद भी इस युग म कापालिको अघोर पथियो और तान्त्रिको का वचस्व बना रहा। धर्म में ज्ञान, कर्म और भक्ति का प्रभाव घटने लगा। स्वामी रामानुजाचार्य ने ग्यारहवीं शती म अपने 'श्री सम्प्रदाय' की स्थापना करके शास्त्रीय पद्धति से सगुण-वैष्णवी भक्ति का निरूपण एव विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त का प्रचार किया। इन्हीं की शिष्य परम्परा मे स्वामी रामानन्द हुए जिन्होंने दक्षिण भारत से आकर उत्तर भारत में वैष्णव धर्म को जीवन का लक्ष्य बनाकर पूर्ण मनोवेग से उसका प्रचार करने का सकल्प लिया। दक्षिण भारत के चार प्रमुख आचार्यों और उनके सम्प्रदायो के प्रभाव स्वरूप उत्तर भारत में कृष्ण भक्ति से सम्बन्धित अनेक सम्प्रदाय विकसित हुए।

(अ) चैतन्य या गौडीय सम्प्रदाय के काव्य मे श्रीकृष्ण

इस मत के प्रवर्तक महाप्रभु चैतन्य देव थे तथा इसका प्रभाव समस्त बगाल एव उत्तरी भारत म फैल चुका था। इस सम्प्रदाय के मतावलम्बियो ने कर्मकाण्ड तथा वर्णाश्रम धर्म का विरोध किया। मोक्ष के लिए एकमात्र साधन भगवत्त भजन को माना। चैतन्य मत को 'अचिन्त्यभेदाभेद' भी कहा जाता है। इसके अनुसार श्रीकृष्ण परमतत्त्व हैं उनकी शक्तियाँ अनन्त है। शक्ति और शक्तिमान म न कोई भेद है न अभेद। दोनो का सम्बन्ध तर्क से अचिन्त्य है। इसम रागानुगा भक्ति की महत्ता स्वीकार की गई है और सख्य-वात्सल्य दास्य भक्ति आदि की अपेक्षा मधुर भावभक्ति को प्रधानता दी गई है। इस मत के अनुसार माधुर्य भाव की भक्ति तीन प्रकार की स्वीकार की गयी है। जैसे--

(1) साधारण रति भक्ति-कुब्जा का कृष्ण के प्रति।

(2) समजसा रति--रुक्मिणी और जाम्बवती

(3) समर्था रति--जिनके प्रतीक ब्रज बालाएँ एव राधा हैं।

चैतन्य मतावलम्बियो ने समर्था रति म गोपी भाव को अपना राधा भाव को ही अपनाया है। वे स्वय राधा रूप होकर कृष्ण प्रेम म महाभाव का अनुभव करते थे। इसी कारण राधा को इस सम्प्रदाय के लोगो न

अवतार मानकर कृष्ण की परम शक्ति के रूप म उपासना की है। इनकी यह मान्यता है कि यदि कृष्ण जगत मोहन हैं तो राधा अपने परम सौन्दय से इन्हे भी मोहित करती है, इसलिए राधा सवश्रेष्ठ है।[120]

चत य सम्प्रदाय के दाशनिक एव भक्ति सिद्धान्त मुख्यत सस्कृत म प्रकाशित हुए और मूलत गौण (बगाल मे) से सम्बधित हाने के कारण कवियो ने बगला मे रचनाएँ की परन्तु कुछ अनुयायी ब्रज मण्डल और हिन्दी प्रदेश म रहते थे जिन्होने ब्रज भाषा मे अपनी रचनाए करके हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाया। इस सम्प्रदाय के प्रभावी भक्त कवि रामाराय जी थे जिनका जन्म 15वी शताब्दी के अन्त म हुआ था। इनकी आदि वाणी मौलिक रचना और जयदेव के गीतगोविन्द का हिन्दी रूपान्तर नामक दो रचनाएँ हैं। आदिवाणी' म रामाराय जी ने राधा कृष्ण क शृगारी लीलाओ विषयक 101 पदो की रचना की है। कवि ने राधा माधव के शृगारपरक लीला का उन्मुक्त भाव स चित्रण किया है।

इसी सम्प्रदाय म दीक्षित भगवानदास जो रामाराय के शिष्य थे ने राधा कृष्ण और गोपी प्रेम से सम्बधित अनक पदा की रचना की। इनके पदो मे लोकगीतो की स्वाभाविकता एव मनमोहकता सवत्र दृश्यमान होती है।

रामाराय के शिष्यो म गरीबदास जी का नाम उल्लेखनीय है जिन्होने विभिन्न छन्दो मे तीन शतक–शृगार शतक आनन्द शतक और वृन्दावन शतक की रचना की। शृगार शतक म राधा कृष्ण की शृगारिक लीलाओ तथा वृन्दावन शतक म वृन्दावन की महत्ता का वणन है। इसी सम्प्रदाय के जुगलदास, राधिकानाथ किशोरीदास, केशवदास भगवत मुदित वष्णव दास, रस जानि मधुसूदन तथा तोघराम आदि भक्तो ने रसमयी वाणी म कृष्ण की मधुर लीलाओ का गान किया है।

16वी शताब्दी म माधवदास जगन्नाथ महात्म्य, नारायण लीला बाल लीला, ध्यान लीला रघुनाथ लीला मदालसा आख्यान, ग्वालिन झगरा परतीति परीक्षा आदि रचनाओ म कृष्ण लीलाओ का पर्याप्त वणन है। इनके अतिरिक्त रामाराय जी क भाई चन्द्रगोपाल भी इस मत के श्रेष्ठ आचाय हुए है, जिनकी राधा कृष्ण क प्रम और भक्ति विषयक चन्द्र चौरासी अष्टयाम सवा सुधा ऋतु विहार राधा विरह आदि प्रमुख रचनाए है। 'अष्टयाम सवा सुधा में विशष रूप स राधा कृष्ण के शृगार एव काम कलि का वणन तथा ऋतु विहार में विभिन्न ऋतुओ का उद्दीपन रूप म चित्र प्रस्तुत किया गया है। गदाधर भट्ट जो ने कृष्ण मे अधिक

राधा को महत्व दिया है । उन्होंने राधिका जी की गुण गरिमा का वर्णन जिस भावुकता से किया वह सहज ही मन को आकृष्ट करने वाला है ।

सूरजदास मदनमोहन ने राधा-कृष्ण के जन्म, कृष्ण के बालरूप मुरली रास विवाह होली, हिंडोला आदि का वर्णन किया एवं ब्रज भाषा में श्रीमदभागवत के दशम स्कंध का सरस अनुवाद भी किया है ।

(आ) वल्लभ सम्प्रदाय के साहित्य में श्रीकृष्ण

वल्लभ सम्प्रदाय के प्रवर्तक स्वामी वल्लभाचार्य ने शंकर के माया वाद का खण्डन करके ईश्वर के अवतारों के प्रति लोगों के हृदय में श्रद्धा एवं विश्वास उत्पन्न किया एवं सोलहवीं शताब्दी के मध्य में उत्तरी भारत, उसमें भी विशेषकर ब्रज क्षेत्र में कृष्ण भक्ति का व्यापक प्रचार किया । इन्होंने सम्पूर्ण भारत के धार्मिक तीर्थ स्थलों का खूब भ्रमण किया । तद्रूप रात गोवर्धन पर्वत पर संवत 1556 में श्रीनाथ जी का स्वरूप प्रकट हुआ और उन्होंने उनके स्वरूप की वहीं स्थापना की ।[121]

इन्होंने शुद्धाद्वैत दर्शन और भक्ति मार्ग पर अनेक ग्रन्थों की रचना करके अपने सिद्धान्तों को विद्वतापूर्ण ढंग से प्रतिपादित किया है । इस सम्प्रदाय के प्रवर्तकों में वल्लभाचार्य के पुत्र-सवश्री गोपीनाथ जी आचार्य एवं स्वामी विट्ठलनाथ का योगदान सराहनीय है । भक्तिकाल के इस सुविख्यात सम्प्रदाय में सूरदास, परमानन्ददास कुम्भनदास कृष्णदास, नन्द दास चतुर्भुज दास छीत स्वामी एवं गोविन्द स्वामी दीक्षित हुए जिन्हें अष्टछाप के नाम से जाना जाता है ।

इस मत को आत्मा परमात्मा में शुद्ध द्वैतता का प्रतिपादन करने के कारण शुद्धाद्वैतवाद भी कहा जाता है, क्योंकि इस मत की विचारधारा के अनुसार ब्रह्म माया रहित शुद्ध है–

माया सम्बन्धरहितं शुद्धामित्युच्यते बुधैः ।
कार्यकारण रूपहि शुद्ध ब्रह्म मायिकम ।।[122]

वल्लभाचार्य के अनुसार ब्रह्म एक अखण्डित, आदि-अनादि अद्वैत तत्व सच्चिदानन्द स्वरूप है, जो अविनाशी सर्वशक्तिमान और सर्व व्यापक है । ब्रह्म के अतिरिक्त चराचर जगत में कुछ है ही नहीं । वह अपनी इच्छा-नुसार विभिन्न शक्तियों में अवतार लेता है । इसी विरुद्धधर्माश्रयता के कारण कृष्णावतार में बालक होते हुए भी वह रसिक मुख्य है । शंकराचार्य ने ब्रह्म से इतर जीवजगत को असत्य एवं कल्पना मात्र माना है । वल्लभाचार्य ने ईश्वर जीव और जगत को अभिन्न माना, परन्तु उन्होंने जड़ जगत

और जीवसृष्टि को सच्चिदानन्द का अंश होने के कारण सत स्वरूप एवं सत्य माना है। उनके अनुसार ब्रह्म की इच्छा शक्ति उसकी माया शक्ति है क्योंकि वह अपने आनन्द के लिए अपनी लीला का विस्तार करता है। परब्रह्म रस स्वरूप है। यह ब्रह्म अपनी शक्तियों को अपने से ही प्रसारित करके अनेक आनन्द लीलाएँ करता है और उन्हीं रस रूप पुरुषोत्तम की लीलाओं में सम्मिलित होकर सान्निध्य प्राप्त करना वल्लभीय भक्तों का लक्ष्य है।

इस सम्प्रदाय के अनुयायियों ने श्रीकृष्ण को ही पूर्णानन्द पुरुषोत्तम स्वरूप मूल ब्रह्म को अपना इष्टदेव माना है। जब यह ब्रह्म 'स्वान्त सुखाय' बाह्य लीला करना चाहता है, तब वह अपनी शक्तियों को बहिर्विस्थत' करता है जो विविध रूप गुण और नामों से उनसे विलास करती हैं। ब्रह्म की शक्तियों में नियां पुष्टि गिरा आदि बारह शक्तियाँ हैं जो श्री स्वामिनी राधा के रूप में अन्य नामों से प्रकट होकर पुरुषोत्तम भगवान श्रीकृष्ण के साथ ही प्रकट होती हैं। इन शक्तियों से क्रीडा हेतु उन्होंने स्वयं में से श्री वृन्दावन गोवर्धन यमुना कुंज निकुंज वृक्ष पशु पक्षी गोकुल आदि को उत्पन्न किया जो इनकी आधिदैविक ऐश्वर्य रूप होने से आनन्दमय चेतन रूप हैं किन्तु कृष्ण लीला हेतु जड रूप धारण किया है। वल्लभाचार्य भगवान श्रीकृष्ण में ऐसी विशेषता का अनुभव करते हैं जिसके कारण पुष्टि मार्गी पुरुषोत्तम ब्रह्म और रामानुज अथवा रामानन्दी सम्प्रदाय के मर्यादा पुरुषोत्तम ब्रह्म में अन्तर है। मथुरा द्वारिका तथा कुरुक्षेत्र में लोक रक्षण तथा धर्म संस्थापन की लीलाओं वाले तथा ब्रज में दुष्टों का संहार करने वाले कृष्ण का रूप लोक वेद प्रथित धर्म संस्थापक का है। बाल रूप में माता यशोदा एवं बाबा नन्द आदि को आनंदित करने वाले ग्वाल सखाओं के साथ गो चारण तथा गोकुल व वृन्दावन में गोपियों के साथ रासलीला करने वाले किशोर कृष्ण रूप रसात्मक है। यद्यपि वल्लभ-सम्प्रदाय में भी कृष्ण दोनों रूपों में विद्यमान हैं परन्तु पुष्टि मार्ग में रसेश कृष्ण को ही प्रधानता दी गई है। और इनको ही अपनी समस्त वस्तुएँ भावों सहित समर्पित कर देना ही ब्रह्म भाव की प्राप्ति अथवा पुष्टि है। इसमें कृष्ण की बाल लीलाओं को ही प्रधानता दी गई है और इसी कारण योगराज कृष्ण के स्थान पर बाल एवं ब्रजबिहारी किशोर कृष्ण का कोमल रूप ही भक्त कवियों का मुख्य आलम्बन रहा है।

इन कवियों ने गौडीय मत की रागानुगा भक्ति का पूर्णरूपेण आत्मसात करके भावमय कृष्ण को प्रतिष्ठित किया। इससे इन कवियों की

भावना शान्त दास्य वात्सल्य सख्य और मधुर–इन पाँच रूपों में अभिव्यक्त हुई हैं, जिसे पचभावोपासना कहा जाता है। इन सभी कवियों के इष्ट परब्रह्म श्रीकृष्ण ही हैं, कि तु भाव चित्त के कारण भिन्न भिन्न रूपों में प्रतिभाषित होते हैं।

सूरदास जी भगवान श्रीकृष्ण की बाल-लीलाओं के मनमोहक दृश्यों पर रीझने वाले है। बाल केलि रत भगवान कृष्ण पूर्ण ब्रह्म हैं। उनकी अनेक लीलाएँ लौकिक शृगार वर्णन सी प्रतीत होती है। उनकी भक्ति सख्य भाव' की है।

सूरदास ने कृष्ण के जन्म से लेकर मथुरा गमन तक के दृश्यों में जो स्वाभाविकता और सरसता युक्त पदों को संगीतात्मकता प्रदान की है वह हिन्दी साहित्य के अन्य कवियों में दुर्लभ है। सूर सागर में वात्सल्य, शृगार और भक्ति की त्रिवेणी प्रवाहित हुई है। सूरदास ने ससार की असारता और कृष्ण नाम की सार्थकता सिद्ध की है–

मुआ चलु वा वन का रस पीजे।
+ + +
को तेरो पुत्र पिता तू काको मिथ्या भ्रम जग केरा।
काल मजार ले जहँ तोको तू कहे मेरो मेरा।।
हरि नाना रस मुकुति क्षेत्र चलु तोको हौं दिखराऊँ।।[123]

सूर की रचनाओं[124] में दीन भक्त की आकुल पुकार और आत्म समर्पण की उत्कृष्ट भावना है। इनके साहित्य में विनय और दास्य भाव के पद कम हैं कि तु कृष्ण काव्य में इनका बहुत महत्व है। भक्ति जगत में यह तथ्य सर्वमान्य है कि भक्त वत्सल भगवान भक्तों की टेक पर बलि बलि जाते हैं। उनकी स्वय की घोषणा है–

हम भक्तन के भक्त हमारे।
+ + +
भक्त काज लाज हिय धरिके पाय पयोद धाऊँ।
जहँ जहँ पीर पड़े भक्तन पे तहँ तहँ जाय छुड़ाऊँ।।

वात्सल्य वर्णन में महाकवि सूर ने अन्य कवियों का पीछे छोड दिया है–

सिखवत चलन यशोदा मैया।
अरबराय कर पानि गहावति डगमगाय धरै पैया।।

सूर के काव्य में शृगार के सयोग वियोग दोनों पक्षों की मर्मस्पर्शी प्रस्तुति है। सूर का भ्रमर गीत प्रसग तो गोपियों की वचन वक्रता के

कारण बड़ा ही उत्कृष्ट बन पड़ा है। उद्धव निर्गुण ब्रह्म का उपदेश लेकर आये हैं किंतु गोपियाँ सगुण ब्रह्म की आराधिका हैं। यह वर्णन तर्क पर आधारित नही है। बार बार उद्धव के उपदेश दिये जाने पर गोपियाँ बड़े सहज भाव से कहती है—

> निर्गुन कौन देस को बासी ?
> मधुकर हँसि समुझाइ सौंह दै बूझति साँच न हाँसी ॥

नंददास जी की सबसे प्रमुख पुस्तक 'रास पंचाध्यायी' है जिसमें कवि ने श्रीकृष्ण की रास लीला का कलात्मक ढंग से साहित्यिक भाषा में चित्र प्रस्तुत किया है। उनके श्रीकृष्ण लीलाओं से सम्बन्धित कई ग्रन्थ गिनाये जाते है। नंददास जी अपूर्व क्षमता वाले कवि है। इन्होंने अष्टछाप के सैद्धांतिक एवं दार्शनिक पक्षों पर विशेष रूप से प्रकाश डाला है। इनकी भाषा बड़ी ही मधुर है—

> नूपुर कंकन किंकिन करतल मंजुल मुरली।
> ताल मृदंग उमंग चंग यहि सुर जुरली ॥
> मृदुल मुरज टकार तार झंकार मिलि धुनि।
> मधुर जंग की सार भँवर गुंजार रली पुनि ॥'[125]

जहाँ कवि भाषा, अलंकार, छन्द विधान एवं अन्य काव्य गुणों के वर्णन मे पूर्ण पण्डित है, वहीं भाव जगत में वह कम नही है। नंददास जी कोमल भावनाओं के कवि हैं। काव्य में इन्होने दाम्पत्य रति[126] वात्सल्य रति[127] भगवत रति[128] आदि का सुन्दर चित्रण किया है। चूंकि यह पुष्टि मार्ग के अनुयायी हैं जहाँ सहज प्रेम मार्ग का ही महत्व है, उनका लक्ष्य है—हरि लीला मे अपने को तल्लीन कर भगवत कृपा प्राप्त करना। भक्ति का जो भी रूप सूर के काव्य मे उपलब्ध है नन्ददास किसी भी क्षेत्र में उनसे कम नहीं हैं। नन्ददास की भक्ति का लक्ष्य मोक्ष न होकर भगवत लीला में प्रवेश करके उसी आनन्द मे विभोर रहना है। इसमे प्रभु प्रेम और उसकी निकटता ही सब कुछ है। इसीलिए पुष्टिमार्गी भक्त को गोकुल वृंदावन वहाँ की धूलि यमुना निकुंज आदि से अटूट प्रेम है। 'जो गिरि रुचै तो बसो श्री गोवर्धन ग्राम रुचै तो बसो नन्द गाँव' कथन से स्पष्ट हो जाता है कि नन्ददास को इन स्थलों से कितना प्रेम था। वृंदावन धाम ऐसा दुर्लभ है कि बड़े बड़े ऋषि मुनियों के लिए अप्राप्य है। इसीलिए वह इस धाम की रज बनना चाहते हैं—

> अब ह्वै रहौं ब्रज भूमि को मारग मैं की धूरि।
> विचरत पग मो पर धरे सब जीवन मूरि ॥
> मुनिहूँ दुर्लभ जो ॥[129]

परमानन्द दास जी के पदो मे माधुर्य भाव का सरस प्रवाह है। ऐसा कहा जाता है कि इनकी तन्मयायुक्त रचना सुनकर आचार्य जी स्वय तन-मन की सुधि भूल गये थे।"[130] इन्होने कृष्ण की विविध लीला माधुरी का गुणगान किया है। कृष्ण की मीठी बोली, चलने पर पजनिया का स्वर, काजल, तिलक पीताम्बर आदि सब सहज ही चित्त को चुरा लेने वाले हैं--

'माई मीठ हरि के बोलना।
पाँय पैंजनियाँ रुन झुन बाजे आँगन आँगन डोलना॥
कज्जर तिलक, कण्ठ कठुलामनि पीताम्बर को चोलना।
परमानन्ददास को ठाकुर गोपी झुलावत यो ललना॥[131]

'इनके 835 पदो का 'परमानन्द सागर' है।"[132] जिसमे सूर की ही भाँति श्रीकृष्ण की बाल लीलाओ का सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया गया है। डॉ० दीनदयाल गुप्त के अनुसार-- 'मातृहृदय की जिस प्रकार की सयोग वियोगात्मक अनुभूतियाँ शिशु के सयोग वियोग मे होती हैं और जितना रूप माधुरी का सुख किसी सुन्दर, चचल तथा क्रीडाशील बालक को देखकर दर्शक वृन्द लेता है उन सबका अनुभव सूर और परमानन्द के भक्त भावुक हृदय प्रबलता के साथ करते थे।"[133]

कृष्णदास गोस्वामी वल्लभाचार्य जी के शिष्य तथा श्रीनाथ जी के मन्दिर के व्यवस्थापक थे। इन्होने भगवान श्रीकृष्ण की बाल लीला रास लीला तथा मान लीला आदि का वर्णन किया है। राधा कृष्ण सम्बन्धी इनकी रचनाए मुख्यत पवित्र शृंगारिक हैं। इनका प्रमुख ग्रंथ 'कृष्णदास-कीर्तन' अप्रकाशित है।

कुम्भनदास परमानन्दास जी के समकालीन थे। यह सासारिक मान सम्मान से विरक्त एक सच्चे सन्त एव भगवान श्रीकृष्ण के परम भक्त थे। कवि ने कृष्ण की बाल लीला और प्रेम लीला का बडा ही भावपूर्ण एव सुमधुर वर्णन किया है।

कवि ने कृष्ण के वियोग मे गोपियो की विरह-वेदना का इतना भावपूर्ण वर्णन किया है कि गोपियाँ कृष्ण के वियोग मे अपने जीवन को ही व्यर्थ मान बैठती हैं।

चतुर्भुजदास जी कुम्भनदास के पुत्र एव विट्ठलनाथ के शिष्य थे। इन्होने श्रीकृष्ण-जीवन की विभिन्न लीलाओं तथा भक्ति के विभिन्न अगो का सरस एव व्यवस्थित वर्णन किया है। चतुर्भुजदास ने 'द्वादश यश, भक्ति प्रताप' एव 'हितजू को मगल' नामक ग्रंथों की रचना की है। कृष्ण-स्वरूप के वर्णन में कवि की भावाभिव्यजना इतनी मुखरित हो उठी है कि सहज ही मन मुग्ध हो जाता है।

छीतस्वामी ने अपनी रचनाओं में खरी ब्रजभाषा का प्रयोग किया है। यह गोस्वामी विट्ठलनाथ के शिष्य थे। इन्होंने शृंगार वर्णन के अतिरिक्त ब्रज भूमि के प्रति अपना अनुराग व्यक्त किया है–

"अहो बिधना तोसों अचरा पसारि माँगौ।
जनम जनम दीजौ या ही ब्रज बसिबौ॥"[134]

गोविन्द स्वामी बड़े भावुक एवं भगवत् भक्त कवि थे। प्रकृति के प्रति इनका इतना अनुराग था कि गोवर्धन पर्वत पर इन्होंने कदम्ब वृक्षों का एक उपवन लगाया और वहीं पर स्थायी रूप से निवास करने लगे थे। यह कवि के साथ उच्चकोटि के गायक भी थे। यहाँ तक कि तत्कालीन संगीत सम्राट तानसेन उनके गीतों को सुनने के लिए लालायित रहते थे और उनके पास आया करते थे। इन्होंने मुरली माधुरी, वात्सल्य प्रेम, मान लीला आदि कृष्ण चरित्र सम्बन्धी दृश्यों को प्रस्तुत किया है। इनके द्वारा रचित एवं गाया जाने वाला धमार गीत बहुत प्रसिद्ध है। एक गोपिका के द्वारा राधिका जी से निम्न उक्ति कहलाना कवि की अनूठी प्रतिभा का द्योतक है–

रैन गई री प्यारी छाडौ हठै री।
सुन वृषभानु कुँवरि हरि तो बश निशि दिन तेरा हि नाम रटरी॥
मदनगुपाल निरख नयनन भर वगि चलौ अब काहे नटरी।
दास गोविन्द प्रभु की छवि निरख प्रीति करे तेरो कहा घटरी॥

(ड) राधा वल्लभ सम्प्रदाय के साहित्य में श्रीकृष्ण

राधा वल्लभ सम्प्रदाय की स्थापना 16वीं शती के कृष्ण भक्ति सम्प्रदाय के रसाचार्य गोसाईं हितहरिवंश जी ने की थी। इस सम्प्रदाय को रस मार्गी सम्प्रदाय भी कहा जाता है। इसका कोई दार्शनिक मतवाद नहीं है अपितु यह विशुद्ध रस मार्गी सिद्धान्त है। जिसमें प्रेम को ही परमार्थ रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। इस सम्प्रदाय के अनुयायियों को निखिल सृष्टि में अपनी एकमात्र आराध्या राधा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं दृश्यमान होता। इसमें हित तत्व ही अन्तर्व्याप्त है एवं परम प्रेम की ही चराचर दृष्टि में व्यापकता है और यह हित (परम प्रेम) स्वयं में रहस्यात्मक भी है।

यहाँ कृष्ण की अपेक्षा राधा को अधिक महत्ता प्रदान की गई है। राधा कृष्ण के कुंज केलि का सुमधुर चित्रण किया गया है। राधा और कृष्ण के बीच वियोग का कोई अस्तित्व ही नहीं है। राधा के साथ कृष्ण की कुंज केलि ही परम रस माधुरी प्रदान करने वाली है जिसका रसास्वादन

मजरी भाव म सदैव युगल बिहारी की सेवा द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। हितहरिवश जी के निम्नलिखित श्लोक मे इसी भावना का आभास मिलता है–

> सान्द्रा नन्दोन्मद रसघन प्रेम पियूष मृते ।
> श्री राधया अथ मधुपते सुहायो कुंज तल्पे।
> कुर्वाणाहु मदु पदाम्भोज सम्वाहनानि ।
> शय्याते किं किमपि पतिता प्राप्ता तन्द्रा भवेयम ।।[135]

इस सम्प्रदाय म राधा कृष्ण सम्बन्धी नित्य लीला विहार के चार आयाम हैं–युगल रूप राधा, युगल रूप कृष्ण श्री वृन्दावन एव सहचरी गण। इसम म दा अर्थात राधा कृष्ण अद्वैत तत्व प्रेमाद्वैत होकर भी 'लीलाद्वैत' 'युगल रूप' धारण करते हैं। वे इस प्रेम के काय कारण दोनों हैं। प्रेम के कारण काय राधा कृष्ण जल और तरग की भाँति एक-दूसरे से अभिन्न हैं।

वृन्दावन श्यामा श्याम क नित्य विहर का सहायक तत्व है और सहचरी गण युगल प्रेम की प्रेरक शक्तियाँ हैं। यहाँ जडोन्मुख कामवत्ति का लोकोत्तर चरित्र म डालकर 'हित' का पवित्र आस्पद रूप प्रदान किया गया है। राधवल्लभ कृष्ण यहाँ प्रेम है, वह रस रूप ब्रह्म क अवतार हैं और इनके इस रसात्मक रूप का पूणत्व राधा के साथ मधुर केलि म ही प्रकट होता है।

अन्य कवियों म दामोदरदास, हरिराम व्यास ध्रुवदास आदि प्रमुख हैं। इन्होंने कृष्ण भक्ति में राधा को ही विशिष्टता प्रदान की है। इसम वदना को दो रूपों–स्थूल एव सूक्ष्म विरह म सूक्ष्म को ही स्थान दिया गया है जिसमें प्रिया प्रिय के मिलन होत पर भी तन मन की पृथकता के कारण परस्पर मिलन की प्रगाढ़ उत्कठा दढता स रहती है एव दोनो समीप रहकर भी विरह व्यथा स सतप्त रहते हैं। रूप गोस्वामी ने इस प्रेम वचित्य की सज्ञा दी है। हितहरिवश न निम्नलिखित पद म सुन्दर दृष्टान्त प्रस्तुत किया है–

> यहा कहौं इन नैनन की बात।
> ए अलिप्रिया बदन अम्बुज रस अटक अनत न जात।।
> जब जब रुकत पलक सपुट लट, अति आतुर अकुलात।
> लपत न्य निमष अन्तर ते अलप कलप सत सात।।
> श्रुति परकज दगजन कुच बिच मगपद ह्व न समात।।
> हितहरिवश नामि सर जल चल जोवत सुदर गात।।[136]

(ई) हरिदासी सम्प्रदाय या सखी सम्प्रदाय साहित्य मे श्रीकृष्ण

हिन्दी कृष्ण भक्ति सम्प्रदायो मे स्वामी हरिदासी का 'सखी सम्प्रदाय' एक प्रमुख रस सम्प्रदाय है। स्वामी हरिदास इस मत के सस्थापक हैं। इनके विषय मे कुछ विद्वानो का मत है कि आरम्भिक अवस्था मे ये निम्बार्क मत के अनुयायी थे। कालान्तर मे इन्होने भगवत प्राप्ति के लिए सखी सम्प्रदाय नामक स्वतत्र साधना पद्धति की प्रतिष्ठा की।[137]

हरिदासी या सखी सम्प्रदाय मे भक्त या साधक कृष्ण लीलाओ का अवलोकन सखीभाव से करता है। कुज बिहारी राधा कृष्ण के लिए सुख पूर्वक स दर्शन का अधिकार मात्र उन्ही को है जो स्वप्न मे भी निकुज विहार से अपनी दृष्टि नही हटाते। इस मत मे परम्परागत सिद्धान्तो के लिए कोई स्थान नही है।

इसी सम्प्रदाय का प्रमुख तत्व-माधुर्य है। इन मतावलम्बी भक्त कवियो की रचनाओ का मधुर रस है जिसमे प्रेम की प्रगाढता भी है। राधा कृष्ण दोनो का प्रेम विलास उन दोनो की इच्छा का परिणाम है। इन भक्तो का सुख कृष्ण सुख है। कृष्ण निकुज विहारी लाडले लाल हैं जो राधा के साथ नित्य कुज केलि मे रत रहते हैं और सखियो को अलौकिक आनन्द की अनुभूति कराते हैं। वे रत्यानन्द मे निरन्तर लिप्त रहते है, किन्तु उनकी यह रति काम भावना से दूर है। इसलिए कृष्ण कामेश्वर है काम के वशीभूत नही। व ललितादि सखियाँ धन्य हैं जो पुष्प शया पर वास करते हुए अपलक दृष्टि से एक दूसरे के रूप सुधा का पान करने वाले राधा कृष्ण की केलि क्रीडाओ का निरन्तर आनन्द लेती रहती हैं। सखी भाव साधना के सम्बन्ध मे डा० तपेश्वरनाथ का मत हैं– यहाँ राधा कृष्ण गोपियाँ महिषियाँ, लक्ष्मी तथा हजारो सखियाँ उत्पन्न होकर सेवा करती हैं। भक्तगण पहले इसी सखीभाव को प्राप्त कर राधा का सान्निध्य प्राप्त करते हैं और राधा को प्रसन्न कर लेने पर कृष्ण स्वय प्रसन्न हो जाते है। अत गोपीभाव को प्राप्त कर ब्रजराज कृष्ण की उपासना भक्त का परम लक्ष्य है।'[138]

स्वामी हरिदास का कृष्ण के निकुज विहारी रूप का निरूपण करने में विशिष्ट स्थान है। ये रसिक कृष्ण के अनन्य भक्त तथा श्रेष्ठ सगीतज्ञ भी थे। इनके सगीत की महत्ता सुनकर अकबर को भी वेश बदलकर आना पडा था। इनके शिष्य विटठल विपुलदेव नरहरिदास रसिकदेव, ललित किशोरी चतुरदास भगवानदास आदि हुए हैं जिन्होने इनकी मान्यताओ

को लकर फुटकर पदा की रचना की है । हरिदास स्वामी जी की सभी रच नाए श्रीकृष्ण से सम्बद्ध है, जिसमे कुछ सिद्धान्त के पद और कुछ म काम-केलि वर्णित है । इसमे युगल रूप राधा-कृष्ण के नित्य विहार नख शिख, दान, मान आदि का रस व्यजित हो रहा है—

> आजु तन टूटत हरि हेरी, ललित त्रिभगी पर ।
> चरन चरन पर मुरली अधर पर चितवनि बक छबीली मुँह प" ।।
> चलहु न बेगि राधिका प्रिय प, जो भई चाहत हौ सर्वोपरि ।
> श्री हरिदास समय जब नीको हिलमिल केलि अटलरति धूमरि ।[139]

श्री विटठलनाथ विपुलदेव जी इस सम्प्रदाय के प्रसिद्ध भक्त कवि हैं । इन्होने राधा कृष्ण के नित्य विहार मान, दान प्रेमालाप मे नोक झोक आदि का सुन्दर वणन किया । इन्होन रास पचाध्यायी म सखीभाव की निदशना की है । किशोरी जी सकेत, बिहारी लीला और भ्रमरगीत में इसी भाव को प्रश्रय दिया है । अलबेली अली भी इसी सम्प्रदाय के हैं । इसमे ललिता का गुरु राधा को सवस्व और कृष्ण को उनका अन य सेवक माना गया है । प्रणामी सम्प्रदाय के प्रवतक प्राणनाथ एव उनके शिष्य मुकुन्ददास और महाराजा छत्रसाल ने कृष्ण भक्ति सम्बन्धित फुटकर पदा की रचना की है । शुक सम्प्रदाय क प्रमुख कवि चरणदास न भी कृष्ण को भक्ति एव लीलाआ का निरूपण किया है ।

भक्तिकालीन सम्प्रदाय मुक्तकाव्य मे श्रीकृष्ण

शकरदेव न वृन्दावन की यात्रा से प्रभावित होकर ब्रजभाषा म गीता की रचना की है जिसम कही कही पर 'असमिया' शब्दो का प्रयोग है जो उनके 'आसामी होन का प्रमाण है । इन्होंन कीतन गुणमाला, शिशुलीला, रुक्मिणी हरण आदि रचनाआ मे कृष्ण की बाल लीलाआ का मनमोहक वणन है । माधवदेव न ब्रजभाषा म 'भक्तिरत्नावली की रचना की है । इन्होन कृष्ण की महत्ता पर प्रकाश डाला है ।

नरहरि महापात्र ने रुक्मिणी मगल छप्पय नीति एव कवित्त सग्रह म भक्ति और गोपी विरह का सरस एव हृदयग्राही चित्रण किया है । नरोत्तमदास जी ने सुदामाचरित खण्डकाव्य मे कृष्ण और सुदामा का वणन किया है । लालचदास ने विष्णुपुराण एव भागवत के दशम स्कध का अनुवाद हरिचरित नाम स किया । इसम कृष्ण चरित्र की निदर्शना है । इनकी मत्यु क बाद आसान्द ने श्रीकृष्ण की कथा का भागवत क आधार पर महाभारत की कथा से सम्बद्ध किया । इसम कृष्ण की बाल

लीलाओं स लेकर मथुरा गमन तव की कथाओ का उल्लेख है । अकबर क दरबारी बीरबल ने कृष्ण की बाल लीला सम्बन्धी अनेक पदा की रचना की है । सगीतकार तानसेन न श्रीनाथ जी के मदिर म कीतन किया था, जिसका उल्लख दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता म है ।[140] इनके पदा मे कष्ण के रूप मुरली बाल क्रीडा एव भक्ति का सुरम्य वणन उपलब्ध है—

तैकहूँ देखारी बनमाली आली बशी बजाय मन लै गयो ।
धुन सुन कल न परत निसदिन उन बिन नैन तरसत चटक स कै गयो ।
जब नहीं देखत छिन न सुहावत भावत नहिं गेहू मेरे नैन म अटक गयो ।
तानसेन नमन की सूरत काटि नार डारी सावरी सूरत जिय बस गयो ॥[141]

रसखान ने प्रेम वाटिका', सुजान रसखान' एव रागरत्नाकर' म कष्ण की बालछवि का मनोहारी वणन किया है । राधा और कष्ण की प्रेम लीलाओ के अतिरिक्त भक्ति रस का सुदर परिपाक हुआ है जिसमे ब्रह्म कृष्ण के निरतर नैकटय की कामना की गई है ।

गास्वामी तुलसीदास ने श्रीकृष्ण गीतावली म राग रागिनिया म आबद्ध स्फुट पदों की रचना की है जिसमे परम्परा का निर्वाह किया गया है । कृष्ण की बाल लीला, मथुरा जाने पर गोपियो का उलाहना एव उद्धव गोपी सवाद का विस्तत वणन है । पदा म सूरदास जी के पदो जैसी कोमलता है । योग साधना का तिरस्कार एव सगुण भक्ति की स्थापना कृष्ण भक्त कवियो के समान ही है । गग कवि ने कृष्ण की बाल लीलाओ एव उनके सौन्दय वद्धि की पष्ठभूमि मे यमुना की महिमा का वणन किया है ।

अब्दुररहीम खानखाना न रासपचाध्यायी म कृष्ण की सुदरता का मात्र दो पदो म चित्रण किया है । बरव म कृष्ण के विरह मे व्यथित गोपिया की कारुणिक दशा का स्वाभाविक चित्र बारहमासा पद्धति के आधार पर प्रस्तुत किया है । केशवदास कायस्थ न श्रीकृष्ण लीला काव्य नाम से भागवत के दशम स्कध का अनुवाद प्रस्तुत किया है । इसम राधा की मान लीला एव राधा गोपी सवाद हृदयस्पर्शी है । लक्ष्मीदास जी के दशम् स्कध में कुछ पद शुद्ध ब्रजभाषा म रचित है कुछ म गुजराती शब्दो का मिश्रण है । इसम कृष्ण के अदभुत सौन्दय का निरूपण है, जिसमे कवि ने अनन्य भक्ति का परिचय दिया है । तुकाराम ने अपनी गाथाओ म गौलण नाम से कृष्ण की लीलाओ का वणन किया है । इसमे गोपी प्रम की महत्ता विशेष चर्चित है ।

आचाय केशवदास ने रसिक प्रिया एव कवि प्रिया म काव्य शास्त्रीय चर्चा के साथ राधा और कृष्ण के सौन्दय का हृदयग्राही वणन

कया है। अधोलिखित छन्द में कवि ने भावात्मक स्वरूप एवं उनकी रसात्मकता का आरोपण करते हुए उनके वीर एवं असुर संहारक रूप की निदर्शना की है–

श्री वृषभानु कुमारि हेतु शृंगार रूप भय।
बास हास रस हरे, मात बन्धन करुणामय॥
केसी प्रति अति रौद्र वीर मारो वत्सासुर।
'भय' दावानल पान, पियो वीभत्स बकी उर॥
अति अदभुत बच' विरंचि मति सान्त सतवे सोयचित।
कहि केसव सेवहु रसिक जन नवरस में ब्रज राजनित॥[142]

ताज ने अपने स्फुट पद्यों में कृष्ण की भक्ति का सुन्दर निरूपण किया है। कृष्ण की लावण्यमयी छवि पर स्वयं न्यौछावर करती हुई हिन्दू मान्यता और धर्मानुसार जीवन यापन के लिए कटिबद्ध है–

एरी दिल जानी भाडें दिल की कहानी
तवदस्त हूँ बिकानी वदनामी भी सहूँगी मैं।
देवपूजा ठानी औ निवाज हूँ भुलानी,
ताजे कलमा कुरान ताड गुन न गहूँगी मैं॥
सावला सलोना सिर ताज सिर कुल्ले दिये,
तेरे नेहदाग में निदाग हो रहूँगी म।
नन्द के कुमार कुरवान वाडी सूरत प,
ताड नाल प्यारे हिन्दुवानी ह्वे रहूँगी मैं॥[143]

मीरा श्रीकृष्ण की अनन्य भक्त हैं। इनके काव्य में माधुर्य भावना की जो अनुभूति, टीस और भक्ति की तन्मयता विद्यमान है, वह अन्य कृष्ण भक्तों में दुर्लभ है। मीरा का बचपन से ही कृष्ण के प्रति अगाध प्रेम था। दवी आपदाओं और पारिवारिक यातनाओं ने उन्हें पाषाण सदृश बना दिया था। उन्होंने कृष्ण (गिरिधर) को सर्वस्व माना है और उनके लिए कुल मर्यादा का कोई महत्व नहीं रहा है–

मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरा न कोई।
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई॥
+ + +
भगति देखि राजी हुई जगत देखि रोई।
दासी मीरा लाल गिरधर, तारो अब मोही॥[144]

उनकी दृष्टि में सगुण निर्गुण में कोई भेद नहीं है। गिरधर गोपाल सगुण होकर भी निर्गुण हैं। यत्र-तत्र गोपीभाव के आधार पर कृष्ण का नागर रूप भी चित्रित है।

इन कवियो क अतिरिक्त भक्तिकाल म अनक भक्त कवि हुए है जि होंने कृष्ण और उनकी लीलाओ को लेकर हृदयस्थ भावा को अभिव्यक्ति दी है। इनम से कुछ कविया का नाम उल्लेखनीय है। गोपीनाथ द्विज न भागवत के दशम स्क घ (पूर्वार्द्ध) का पद्यानुवाद किया है जिसमे कृष्ण की बाल लीला एव कृष्ण क किशोर जीवन की घटनाओ का चित्र प्रस्तुत किया गया है। कृष्ण की लीला माधुरी का आकषण ही ऐसा है जा चराचर को मोह लेन वाला है।

उत्तर मध्यकाल या रीतिकालीन साहित्य मे श्रीकृष्ण

श्रीकृष्ण के लाकरजनकारी रूप का विकास चरम सीमा तक पहुँच गया। भक्तिकाल म श्रीकृष्ण भक्ति को लेकर अनक सम्प्रदाय चल पडे। जिनम भक्त कवियो की वणन शली बडी आकपक सिद्ध हुई। भक्तिकाल मे भल ही दाम्पत्य प्रेम व शृगारिक रास क्रीडाओ का चित्राकन हुआ हो कि तु उसके मूल म भक्त कविया की अलौकिक भावना विद्यमान है। रीति या शृगार काल म कृष्ण चरित्र वणन मे भक्तिभाव क स्थान पर रतिभाव को प्रधानता दी गई। भक्ति शृगार सम्ब धी रचना करन वाले प्रमुख कवि नागरीदास अलबेली अली चाचाहित व दावनदास भगवत रसिक हठी जी सहचरीशरण आदि हैं।

स्वच्छ द शृगार का वणन उ मुक्त भाव मे रसखान ने किया है। इस भावधारा के दूसरे कवि घनान द हैं। इसके अलावा आलम बोधा ठाकुर आदि का भी नाम लिया जाता है। रीति के कवियों ने राज्याश्रित होने के कारण कृष्ण को लौकिक नायक के रूप मे चित्रित किया है। इनकी कृष्ण सम्ब धी रचनाओ म अ त करण की अनुभूति नहीं है। उनमे मात्र परिपाटी निर्वाह है।

इन कवियो क साहित्य मे परकीया प्रम नायिका भद आदि का वणन है। इस धारा के प्रतिनिधि कवि केशव बिहारी मतिराम सेनापति पद्माकर ग्वाल आदि हैं। इनका साहित्य किसका है– राधिका क हाई सुमिरन को बहानो के आधार पर रचित ज्ञात होता है। रीतिकालीन कृष्ण चरित्र सम्ब धी रचना करने वाल कवियो का यह विचार देशकाली वातावरण का सकेत करता है। बिहारी ने सतसई म शृगार के साथ कृष्ण भक्ति सम्ब धी अनेक दोहे और सोरठे लिखे हैं, जिसमे यत्र तत्र भक्त हृदय की झांकी प्रति बिम्बित हाती है।

मतिराम न रसराज', ललित ललाम और सतसई म कृष्ण

चरित्र सम्ब धी अनेक घटनाओ का उल्लेख किया है। यत्र तत्र भ्रमर गीत प्रसग का हृदय स्पर्शी चित्राकन है। सेनापति ने 'कवि रत्नाकर' म राधा कृष्ण स सम्ब धित कुछ छद लिखे हैं। रामसनही सम्प्रदाय क प्रवतक रघुनाथ राम सनेही 'बाबा' न 'विश्राम सागर' मे कृष्णायन' शीषक के अ तगत ब्रज, मथुरा एव द्वारका स सम्बन्धित कृष्ण लीलाओ की निदशना की है। चिन्तामणि त्रिपाठी की अप्रकाशित कति 'कृष्ण चरित्र' मे 758 छ द है, जिनम 723 छ द प्राप्त है। इसम कृष्ण की लीलाओ का मनोहारी वणन है।

अकबर के समकालीन सूफी कवि आलम ने श्याम सनेही' मे रुक्मिणी विवाह की कथा का वणन किया है। कवि आलम ने 'रामाचरित' म कृष्ण-सुदामा की कथा का रोचक वणन किया है। स्फुट पदो म कृष्ण का गोपी-वल्लम और उनका नायक रूप प्राप्त होता है। मण्डन के ग्र थ रत्नावली और रसविलास' म रस और नायिका भेद के उदाहरणो में कृष्ण की चर्चा है। सबलसिंह चौहान न महाभारत म पाण्डवो क शुभेच्छु और कुशल राजनीतिज्ञ रूप के साथ ब्रह्म रूप म कृष्ण का चित्रण किया है। सबल श्याम न 'हरिचरित्र' म कृष्ण क ज म से दूसरा-वास तक की विविध लीलाओ का उल्लेख किया है। पजाब के श्रेष्ठ कवि एव सिक्खो के दशवें गुरु गुरुगोविन्द सिंह ने कृष्णावतार' की रचना भागवत के दशम स्कन्ध के आधार पर ही की है। कृष्ण को दुष्टों का सहारक विष्णु का अवतार माना है। इसम कृष्ण की बाल-लीला, रास एव गोपी विरह का सुन्दर चित्रण है। भागवत के दशम स्कन्ध पर स्पष्ट उल्लेख है–

> दशम कथा भागौत की भाषा करी बनाइ।
> अवर बासना नाहि प्रभु धरम युद्ध को चाइ ॥ [145]

अमतराय ने चित्त विलास म राधा कृष्ण का नायक नायिका रूप म प्रस्तुत किया है। मगल कवि न महाभारत के शल्यपव का अनुवाद किया। हरिराय की छन्द रत्नावली के किंचित् छन्दो म कृष्ण भक्ति का महत्व निद शित है। सुखलाल राय ने दान मान रास, वशी एव सुदामा चरित्र क अ तगत कृष्णचरित्र अंकित किया है।

रीति के आचाय कवि देव ने 'भाव विलास', अष्टयाम एव भवानी विलास' में राधा-कृष्ण के सयोग एव वियोग एव अन्य लीलाओ का उल्लेख किया है। कवि भूपति द्वारा रचित भि रवन्धु विनोद' म श्रीकृष्ण स सम्बन्धित पाँच रचनाओं का उल्लेख है,[146] जिनम 'भागवत भाषा' या 'भागवत दशम स्कन्ध महत्वपूर्ण रचना है। श्री घनी की मदलिन पदावली म राधा-कृष्ण लीलाओं का सुन्दर वणन है। श्री हरिचरणदास माधुय एव भावपूर्ण रचन

करन म कुशल है। उन्होंने केशव और विहारी सतसई की सफल टीकाएं लिखी है। उनकी मौलिक रचनाओं– मोहन लीला और भागवत प्रकाश' म कृष्ण भक्ति और उनकी लीला से सम्बन्धित अनेक पद हैं। सुरति मिश्र की 'सुरति मिश्र ग्रन्थावली' के अन्तर्गत कृष्ण कथा का सुन्दर चित्रण है। महाराजा उद्योतसिंह उर्फ निमल प्रकाश ने 'भागवत बानी' मे ब्रजलीला, मथुरा गमन द्वारका निवास आदि का वणन है। नजीर अकबराबादी जिनका पूरा नाम वली मुहम्मद था ने कृष्ण जन्म एवं उनके अनेक संस्कारों कृष्ण जन्म के दधिकाधो छठी और ज्योनार आदि का विस्तृत वणन है। उन्हें भगवान कृष्ण पर इतनी निष्ठा थी कि व जन्माष्टमी म बड़े उत्साह स भाग लते थे। भिखारीदास दास ने काव्य निणय' शृगार निणय', 'विष्णु पुराण भाषा आदि ग्रन्थो मे राधा कृष्ण की चर्चा की है। इनकी निम्नलिखित पंक्ति लोक विश्रुत है–

आगे के कवि रीझिहैं तो कविताई।
न तु राधिका कन्हाई सुमिरन को बहानो है॥

गिरिधारी की रचना मे भागवत दशम स्कन्ध की कथा' के सजन म कृष्ण जन्म स गोपी उद्धव सवाद तक का सरस वणन है। सुदामा चरित्र' म कृष्ण सुदामा का उल्लेख है। चन्ददास के 'कृष्ण विनोद श्री भागवत पुराण, शृगार सागर पदावली आदि ग्रन्थों के अवलोकन करने से यह बात स्पष्ट हो जाता है कि ये कृष्ण जीवन की विभिन्न घटनाओं से बहुत ही प्रभावित थे। कृष्ण विनोद जो 90 अध्यायो म विभक्त है मैं कृष्ण के सम्पूर्ण जीवन का उल्लेख है। 'श्री भागवत पुराण श्रीमदभागवत की कथा पर आधारित है। इनका काव्य एक ओर रीति आचार्यों की परम्परा का निवाह करने वाला है दूसरी ओर भक्त हृदय की भावपूर्ण माधुर्य से ओत प्रोत है। लक्ष्मीनाथ परमहंस की कृष्ण कथा से सम्बन्धित दो कृतियाँ श्रीकृष्ण गीतावली और कृष्ण रत्नावली प्राप्त है।

पद्माकर राम भक्त कवि थ, परन्तु इन्होंने राधा कृष्ण के शृगारिक रूप होली रास लीला आदि कथाओं का मनोहारी वणन किया है जो उनकी कृष्ण सम्बन्धी रचनाओं– जगद् विनोद तथा पद्माभरण मे उपलब्ध है। बोधा ने इश्कनामा विरहवारीश' और कवित्त म कृष्ण के माधुर्य रूप का विर्णन किया है। सोमनाथ ने साधारण बोलचाल की भाषा म नन्ददास के रास पचाध्यायी स प्रभावित होकर रास पचाध्यायी नामक ग्रन्थ की रचना कर कृष्ण के विभिन्न लीलाओं का गान किया है। गुमान मिश्र

रचित 'कृष्ण चन्द्रिका' में कृष्ण जन्म एवं अनेक असुरों के संहार की कथा, पौराणिक आधार पर वर्णित है।

गुजरात निवासी दयाराम पुष्टिमार्गी भक्त थे। यह ब्रजभाषा के अच्छे कवि थे। इन्होंने 'सूरसारावली' और 'कालिय दमन लीला' का गुजराती में रूपान्तर किया है। कवि ठाकुर के 'ठाकुर ठसक' में कृष्ण के अप्रतिम सौंदर्य एवं विभिन्न लीलाओं का सफल चित्रण है। ठाकुर श्रीकृष्ण को ऐश्वर्य में भगवान और प्रेम सम्बन्धों में मानव रूप में स्वीकार करते हैं। रत्नहरि के कृष्ण भक्ति से सम्बन्धित 'एकादश भागवत स्कंध', 'दशम स्कन्ध कवितावली' और 'रास पंचाध्यायी' प्रमुख ग्रंथ हैं। किशोरीदास जो कृष्ण चरित्र से प्रभावित होकर जीवनपर्यंत वृन्दावन में ही रहे, ने स्फुट पदों में राधा कृष्ण की नित्यलीला का वर्णन किया। ग्वाल कवि मथुरा वृन्दावन के निवासी थे। इन्होंने राधा-माधव मिलन, राधाष्टक, श्रीकृष्ण जू को नख शिख, वंशीलाल गोपी पच्चीसी, शृंगार शतक आदि ग्रंथों की रचना राधा कृष्ण प्रसंगों को लेकर की है। शिवदास ने 'कृष्णायन' में कृष्ण कथा का सविस्तार वर्णन किया है। यह ग्रंथ सात काण्डों में विभक्त है और भागवत के दशम् स्कंध पर आधारित है। गोपाल कवि की रचना 'सुदामा शतक' में कृष्ण-सुदामा के मिलन की रोचक कथा है। कुंवरि रत्न की 'प्रेम रत्न' में कुरुक्षेत्र में कृष्ण और ब्रजवासियों के मिलन की कथा है। इसका भी आधार श्रीमद्-भागवत का दशम स्कन्ध ही है। महाराजा रघुराज सिंह द्वारा रचित 'रुक्मिणी परिचय', 'रहस पंचाध्यायी', 'भ्रमरगीत पदावली' और 'भागवत भाषा' ग्रंथों में कृष्ण से सम्बन्धित भक्ति और शृंगार की सुंदर निदर्शना है। भवानीदास जिन्हें उमादास भी कहा जाता है, ने महाभारत के पाँच पर्वों का अनुवाद किया है और कृष्ण चरित्र को लेकर 'सुदामा चरित्र' और 'बारामाह' नामक ग्रंथों की रचना की है।

ब्रजभाषा को गुरुमुखी लिपि में लिखने वाले वीरसिंह ने कृष्ण भक्ति से सम्बन्धित 'भागवत स्कंध' एवं 'विष्णु पद' दो ग्रन्थों की रचना की है। दलसिंह की 'आनन्द प्रकाश सतसई' रचना में कृष्ण की रास लीला का भावपूर्ण वर्णन है। 'उद्धव संवाद' गंगाराम की रचना है जो सूरदास के भ्रमरगीत जैसी उत्कृष्ट है। सवाईसिंह 'जाट' की सुदामा चरित्र मर्मस्पर्शी रचना है। वृन्दावनदास ने ब्रजराज कुंवर प्रेम 'छन्द षोडशी' नामक ग्रंथ में स्त्री वेशधारी कृष्ण का राधा के घर जाना तथा सखियों द्वारा पहचान लिए जाने पर उनके हास परिहास एवं मंगल कामना का उल्लेख है। जीताराम ने 'सुदामा मंगल' रचना में परम्परागत कृष्ण सुदामा की कथा को प्रस्तुत किया

है। कृष्णदास न कृष्ण की बाल लीलाओं का वर्णन चौपाई छन्द म गिर धर लीला नामक ग्रन्थ म किया है। इसके अतिरिक्त मगल कवि, साहब रामदास वश राज शर्मा वशमनि टीकमदास, मचित द्विज, तोषनिधि, मगलीराम प्रतापसिंह देवनाथ, हानाजी बाला नवलदास, ईश्वरीदास, बुध सिंह निहाल कवि गोपीनाथ भावन कवि, मणिदेव, लखन सम, नन्दीपति, वम न सिंह ऋतुराज लालदास बाबा राजेन्द्र प्रसाद, फतेराम रामदास रामलला साहिबदास हृदयराम, कुन्दन मिश्र, गोविन्द, गीलाबाई, प्रताप सिंह आदि अनेक कवि हुए हैं जिनके स्वतन्त्र ग्रन्थो एव स्फुट रचनाओ म कृष्ण राधा की विविध लीलाओं का वर्णन मिलता है।

हिन्दी के रीतिकालीन साहित्य का समुचित अध्ययन करने स यह तथ्य प्रकाश म आता है कि इस युग के कवि भक्त हो या नहीं व कृष्ण को ब्रह्म रूप म स्वीकार करें अथवा न करें किन्तु अधिकाश कवियो के काव्य म राधा कृष्ण का उल्लेख अवश्य मिलता है। इस युग के कवियो की बहुत लम्बी पंक्ति है। जिनकी रचनाओं म कृष्ण सम्बन्धी कथाओ का उल्लेख है। ग्रन्थ विस्तार भय स कुछ कवियो के नाम और उनकी रचनाओं का ही उल्लेख मात्र किया जा सका है।

आधुनिक काव्य मे श्रीकृष्ण

हिन्दी साहित्य का आधुनिक काव्य शृगारी एव सामन्ती साहित्य के विद्रोह का प्रतिफल है। हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल का समय भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द के प्रादुर्भाव से माना जाता है। भारतेन्दु जी का देश की वर्तमान दशा को देखकर अत्यधिक क्षोभ हो रहा था। भारत की दयनीय दशा उनके लिए असह्य थी। इसलिए व प्रत्येक क्षेत्र म क्रान्ति पैदा करके परिवर्तन चाहते थ। वे नवीनता और मानवता के पक्षधर होते हुए भी प्राचीन परिपाटी के मोह का पूर्णरूपेण नहीं छोड सके। कृष्ण का चित्रण यदि कहीं रीति परम्परा के आधार पर किया है तो कहीं उनको कहीं करुणानिधि केसव सोये' कहकर भारत की दयनीय दशा का स्मरण कराया है। उनके कृष्णलीला पुरुषोत्तम हैं और लीला करने के लिए ही अवतार धारण करते है। यहाँ कृष्ण वल्लभ सम्प्रदायी भक्तो के भगवान, रसेश्वर शृगारी, स्वच्छन्द प्रेमियो के प्रिय, रीतिकालीन कवियो के लोक नायक और राष्ट्र के उद्धारक हैं। वास्तव में भारतेन्दु के कृष्ण प्राचीन नवीन दृष्टिकोण के समन्वयकर्ता है। उन्होंने कृष्ण की बाल लीला यौवन लीला और उनके कुंज विहारी रूप, प्रेमी रूप अपूर्व सौन्दर्यशाली एव राष्ट्रनायक रूप का

सफल चित्र प्रस्तुत किया है। भारतेन्दु का कृष्ण प्रेम उत्कृष्ट भाव से ओत-प्रोत है, जिसमें रसखान से कम भावुकता नहीं है। भारतेन्दु युग के ही प्रसिद्ध कवि बदरीनारायण 'प्रेमघन' जी ने कृष्ण जीवन पर आधारित 'भ्रमरगीत' में कृष्ण के दास्य और शृंगार भाव का हृदयस्पर्शी चित्र खींचा है।

हरिऔध की श्रीकृष्ण और उनके चरित्र से सम्बन्धित रचनाएँ 'प्रिय प्रवास', 'कृष्ण शतक', 'प्रेमाम्बु प्रवाह', 'प्रेमाम्बु प्रस्रवण', 'प्रद्युम्न विजय एवं रुक्मिणी परिचय' हैं। इनमें कृष्ण की महत्ता एवं गोपियों की विरह वेदना व्यंजित है। 'प्रिय प्रवास' कवि ने कृष्ण को नवीन परिवेश में प्रस्तुत किया है। 'हरिऔध' के कृष्ण न तो भक्तिकाल के परात्पर ब्रह्म हैं और न शृंगार काल में अठखेलियाँ करते हुए लौकिक रसिक नायक उनके कृष्ण पूर्ण मानवता के आदर्श हैं। इस प्रकार हरिऔध' के कृष्ण युगानुरूप सन्दर्भों में साधक एवं सच्चे मानव हैं।

मैथिलीशरण गुप्त ने महाभारत की विभिन्न कथाओं को लेकर 12 ग्रन्थ रचे हैं, जिनमें 'जयद्रथ वध' 'जयभारत' और 'द्वापर' में कृष्ण-चरित्र वर्णित है। जयद्रथ वध में कवि ने कृष्ण को ब्रह्म रूप में प्रस्तुत किया है किन्तु 'जयभारत' में वे मानवीय भूमिका प्रस्तुत करते हैं। 'द्वापर' में कवि ने भक्तिकालीन कवियों की भाँति बाल लीला और गोपी राधा के प्रति प्रेम का सुन्दर निरूपण किया है साथ ही कृष्ण यहाँ अर्जुन के उपदेष्टा रूप में प्रस्तुत किये गये हैं।

जगन्नाथदास 'रत्नाकर' का 'उद्धव शतक' भ्रमर गीत काव्य परम्परा का सुन्दर दूत काव्य है, जिसमें गोपियों की उत्सुकता, अनन्यता और आतुरता सराहनीय है। ब्रजभाषा में सत्यनारायण 'कविरत्न' विरचित 'भ्रमर दूत' काव्य पौराणिक कथावस्तु पर आधारित नये परिवेश में प्रस्तुत किया गया है। इसमें यशोदा के उदात्त व्यक्तित्व को लेकर कवि ने समस्त भारतवासियों के लिए मातृप्रेम का आदर्श प्रस्तुत किया है। यशोदा और कृष्णचरित्र के माध्यम से कवि ने तत्कालीन भारत की विपन्नावस्था का यथार्थ चित्र खींचा है। 'गोप' कवि जाति के ब्रह्मभट्ट थे। इनकी रचना 'काव्य प्रभाकर' किंवा 'रुक्मिणी हरण' में कृष्ण और रुक्मिणी का उदात्त और समाज-सेवी रूप वर्णित है। इसके अतिरिक्त 'मिलिंदशतक'[14] और 'रमान मंजरी' भी कृष्ण सम्बन्धी रचना है। इन रचनाओं के अवलोकन से इन कवियों का भक्त रूप होता है। श्रीलाल उपाध्याय ने अन्य कवियों की भाँति 'विश्राम सागर' की रचना की, जो तीन खण्डों—ऐतिहासायन कृष्णायन और रामायन में विभक्त है।[15] इसमें कृष्ण जन्म, गोकुल निवास मथुरा और द्वारका

गमन की कथा निरूपित है । 'फेरि मिलिबो' म अनूप शर्मा ने कृष्ण राधा के कुरुक्षेत्र म पुनर्मिलन की घटना का हृदयस्पर्शी चित्र अकित किया है । इसम राधा कृष्ण के अतिरिक्त रुक्मिणी गोप गोपी और नन्द यशोदा के चरित्र पर भी दृष्टिपात किया गया है तथा कृष्ण के लौकिक अलौकिक दोनो पक्षो को प्रस्तुत किया गया है ।

प० द्वारकाप्रसाद मिश्र का 'कृष्णायन' प्रबन्ध काव्य है, जो रामचरित मानस के अनुरूप सात काण्डो म विभक्त है । मिश्र के कथानक का आधार ग्रन्थ महाभारत और श्रीमदभागवत है । इसमे श्रीकृष्ण को समाज सुधारक लोकनायक आदर्श मानव और लोक व्यवस्थापक रूप मे प्रस्तुत किया गया है । कृष्ण एक तुलसीदास शर्मा न कृष्ण जीवन पर आधारित पुरुषोत्तम' नामक ग्रन्थ की रचना की है । इसम कृष्ण जन्म से लेकर महाभारत युद्ध तक की कथा का सक्षिप्त विवरण है । प० गुरुनाथ दीक्षित ने रुक्मिणी-हरण' और भूपनारायण दीक्षित ने 'कृष्ण दूत म कृष्ण का उल्लेख किया है । प० हरनाथ के कृष्ण सम्बन्धी ग्रन्थ महाभारत के कुछ सस्करण और कन्हाई ह जो हरनाथ ग्रन्थावली मे संकलित हैं । रामशकर शुक्ल रसाल' जी ने भ्रमर गीत परम्परा म उद्धव गोपी सवाद' नामक ग्रन्थ की रचना की है । कथा के प्रस्तुतीकरण मे कवि ने परम्परा से हटकर नवीन परिवेश का आलम्बन लिया है ।[149] इसमे भावुकता के स्थान पर तर्कशीलता की प्रधानता ।[150] डा० धर्मवीर भारती की कनुप्रिया मे राधा कृष्ण की किशोरावस्था के चित्रण के साथ श्रीकृष्ण के पुरुषोत्तम एव योगीरूप की निदर्शना है ।[151] यह ग्रन्थ अन्य आधुनिक ग्रन्थो की तरह तर्क अथवा बुद्धि पक्ष पर आधारित नहा है न इसमे परम्परागत स्थूल चित्र ही वर्णित है । इसमे कृष्ण चरित्र ऐसे विशेष ढग से प्रस्तुत किया गया है जिससे यह परम्परागत होते हुए पूर्ण मौलिक सा जान पडता है ।

स्वच्छन्द विचारधारा के आरसी प्रसाद सिंह जी ने श्रीकृष्ण वेला म कृष्ण जीवन की अनेक झाँकियाँ प्रस्तुत की है । यही नही इसमे युग चेतना से प्रेरित होकर कुरुक्षेत्र युद्ध का वर्णन किया गया है ।[152] पण्डित हृषीकेश चतुर्वेदी ने कृष्ण से सम्बन्धित हिन्दी और सस्कृत म रचनाएँ की हैं । ब्रज भाषा म रचित उनकी समस्त रचनाएँ हृषीकेश रचनावली' म सकलित है। इनकी कविताओ मे लालित्य और सौन्दर्य बोध दोनो का सुन्दर सामजस्य है । श्री नारायणप्रसाद मिश्र रचित 'विश्राम सागर मे कृष्ण-जीवन एव चरित्र का अकन है । विसाहूराम जी ने कृष्णायन की रचना रामचरित मानस के आधार पर की है । इसकी कथा पुराणो के आधार पर है ।

ज्वालाप्रसाद मिश्र ने अपने 'विश्राम सागर' मे कृष्ण जन्म से लेकर प्रद्युम्न रति विवाह तक प्रसगो को प्रस्तुत किया है।

श्रीकृष्ण का जीवन चरित्र अक्षुण्ण एव शाश्वत है। युग की मान्यताओ और आवश्यकताओ के अनुसार कृष्ण चरित्र चित्राकन म परिवतन और परिवधन अवश्य दष्टिगत होता है। कृष्ण का रूप अत्यधिक व्यापक एव उदात्त है। जीवन म आने वाले परिवतन एव उनकी सुस्थिर ढग से स्वीकृति कृष्ण का चरित्र समस्त मष्टि के लिए अद्भुत अनिवाय ग्रहणीय शिक्षा है। इसलिए साहित्य और कृष्ण का, साहित्य और समाज के समान ही अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। ज्ञात होता है कि कृष्ण की व्यापक सामाजिक स्वीकृति ने साहित्य को अवतरित किया है एव साहित्य के द्वारा कृष्ण अवतरित हुए हैं। उनकी स्थिति सष्टि के अन्त तक इसी प्रकार व्यापकता को लिए हुए चलती रहेगी।

अत हिन्दी साहित्य के इतिहास के अवलोकन से निश्चित हो जाता है कि कृष्ण का चरित्र इतना व्यापक, लोकानुरजक और लोक कल्याणकारी है कि कोई भी व्यक्ति उस पर रीझकर अपना सवस्व न्यौछावर कर सकता है। श्रीकृष्ण का चरित्र अगाध समुद्र है और इससे सम्बन्धित कवि भी अनेक हैं। जहाँ तक मेरी दष्टि पहुँची है, उन कवियो के ग्रथो और उसमे प्राप्त श्रीकृष्ण के रूपो का यथासाध्य उल्लेख करने का प्रयास किया गया है।

□

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 त्रीणि ज्योतिषि स च ते च षोडष।
प्रजापति प्रजया सह रमण। —यजुर्वेद, 8/36

2 गोपथब्राह्मण पूव भाग–5/25

3 कृष्णा नामागीरस ऋषि। —ऋग्वेद सहिता भाग–२ पृ० 537

4 कौशीतकी ब्राह्मण–30/9

5 छान्दोग्योपनिषद–3/17/6

6 साप्ताहिक हिन्दुस्तान–31 जनवरी, 1954
–भारत सावित्री लख, पृ० 26

7 प्रवा महेमहि नमो भरध्वमाङ्गुष्यम् शवसानाय साम्।
यना न पूव पितर पदज्ञा अचन्तो आगिरसा गा अविन्दन्॥
—ऋग्वेद, 1/62/2

8 (1) उत वा यस्य वाजिनोऽनु विप्रमतक्षत। स गन्ता गोमति व्रज।
—ऋग्वेद, 1/86/3

2) अधि पेशासि वदते नतुरिवा पोणते वश्च उसव वजहम ।
ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृष्यतीगावो व व्रजम न्युपा अवतम ॥
–ऋग्वेद 1/92/4

9 ऋग्वेद–1/139/7

10 (1) आदगिराप्रथम दधिरे वय इन्द्राग्नय शम्मा ये सुकृतयया ।
मवण्गो समविन्दन्त भोजनमश्वावन्तम गोमन्तमापशु नर ॥
–ऋग्वेद 1/86/4

(2) विश्वे अस्या व्युषि माहिनाया सयद गोमिरगिरसो नवन्त ।
उत्स आसा परमे सधस्थ ऋतस्य पथासरमा विद्गा ॥
–ऋग्वेद 5/45/8

(3) ऋतेनाद्रि व्यसन्मिदन्त समागिरसो गोमि ।
शुन नर परिषद तुपा समावि स्वर भवज्जाते अग्नौ ॥
–ऋग्वेद 4/3/11

11 (क) ऋग्वेद–3/5९/10
(ख) ऋग्वेद–1/101/4
(ग, ऋग्वेद–7/18/4

12 स्त्रान राधानाम्पते गिर्वाहोवीरयस्य ते । विभूतिररतु सनता ।
–ऋग्वेद, 1/30/5

13 (1) अयमण वरुण मित्रमेषामिन्द्राविष्णु मरुतो अश्विनोत ।
स्वश्वा अग्न सुरथ सुराधा एदु वह सुहविषे जनाय ॥
–ऋग्वेद 4/2/4

(2) अलातषा बल इन्द्र व्रजोगो पुराहन्तामय मानो व्यार ।
सुगान्यथा अकृणोन्निरजे गा प्रायन्वाणी पुरुहूत धमन्ती ॥
–ऋग्वेद, 3/30/10

(3) इद ह्य वाजमा सुतम राधानाम्पते दिवत्वस्यगिर्वाण ।
–ऋग्वेद, 3/51/10

14 कुवित्सस्य पहि व्रज गोमन्तम् दस्युहागमत । शचीमिरपनो वरत ।
–ऋग्वेद, 6/45/2२

15 श्रीमदभगवद्गीता 4/8

16 ऋग्वद 6/45/24

17 अलानणो वल इन्द्र व्रजोगो पुरा हन्तोभयमानो व्यार ।
सुगात्पथो अकृणान्निरजे गा प्रावन्वाणी पुरुहूत धमन्ती ।'
–ऋग्वेद, 3/30/10

18 त्व घुनिरिन्द्र घुनिमतीऋ णोरय सीरा न स्रवन्ती ।
प्रयति समुद्रमति शूरपार्षिपारयातुवश यदु स्वस्ति ।।
–ऋग्वेद, 1/147/9

19 ऋग्वेद–1/90/6–9
20 ऋग्वेद–9/109/12
21 ऋग्वेद–10/26/7
22 इषे त्वोर्जेत्वा वायवस्य देवो व सविता प्रापयतु श्रेष्ठतमाय कमणऽ आप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागय प्रजावतीर नमीवाऽअयक्ष्मा माव स्तेनऽ ईशत माधश सा ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतो स्यात वह्वीयजमानस्य पशून पाहि ।'
–यजुर्वेद 1/1
23 दिवि विष्णुर्व्यक्रंस्त जागतेनच्छन्दसा ततो निभता योऽस्मान्द्वेष्टि य च वय द्विष्मोऽन्तरिक्षे विष्णुर्व्यक्रंस्त त्रैष्टुभनच्छन्दसा तता निभवतो योऽस्मान्द्वेष्टि य च वय द्विष्म पथिव्या विष्णुर्व्यक्रंस्त गायत्रेणच्छन्दसा ततो निभवतो यो स्मान्द्वेष्टिय च वय द्विष्मोऽस्मादन्नादस्यै प्रतिष्ठा याऽअगन्मस्व स ज्योतियाभूम ।
–यजुर्वेद, 2/25
24 नामोहिरण्यववाहवे सेनान्ये दिशा च पतये नमो नमो वक्षेभ्योहाहरि केशेभ्य पशूना पतय नमो नम शष्पिन्जराय त्विषीमते पथीना पतये नमो नम हरिकेशायोपवीतिन पुष्टानां पतये नम । –यजुर्वेद 16/17
25 यो न पिता जनिता यो विधाताधीमानि वेद भुवनानिविश्वा ।
यो देवाना नामधाऽएकऽएवतस प्रश्न भुवनायन्त्यन्या ।।
–यजुर्वेद, 17/27

26 तदव, 40/1
27 सोमस्यत्विपिरसि तवेवमत्विपिभूयात ।
मत्यो पाघ्योजोसि सहोडस्य मतमसि ।।
–यजुर्वेद 10/15
28 (1) त्वामग्ने यजमानाऽअनुद्यूनविश्ववासु दधिरे वार्य्याणि ।
त्वया सह द्रविणमिच्छमाना व्रज गोम तमुशिजो विव्रवु ।।
–यजुर्वेद 12/28
(2) नमो व्रजाय च गोष्ठयाय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमा ।
हृदय्याय च निवेष्याय च नम काटयाय च गह्वरेष्ठाय च ।।
–यजुर्वेद, 16/44
29 'आपाह्ययमिन्देवश्वपते गोपत उवरीपते ।' –सामवेद, 4/6/4
30 अभीत वजे भजरवानह । –सामवेद, 3/9/6
31 सामवेद–5/11/8

32 अथववेद–2, 26/4, 3/14/6
33 अथववे॰–2/35/4
34 अथवत्रद–4/2/1
35 युज्या म सप्तप॰ सखासि। अथववद 5/11/9
सखा ना अग्नि परम च व यु । तदैव–5/11/11
36 तस्यते भक्तिवास श्याम। तदव, 6/79/3
37 कौशीतकी ब्राह्मण–30/9
8 शतपथ ब्राह्मण–3/2 1/28
39 तत्तरीयारण्यक–10/1/6
40 शतपथ ब्राह्मण–1/8/1, 2/10
41 तदव–1/4/3/5
42 तदव–1/2/5/1–7 एव 14/1/2/11
43 तत्तरीय ब्राह्मण–1/1/3/5
44 छान्दाग्योपनिषद–3/17/6
45 सगुण निगुण स्वरूप ब्रह्म।
–महानारायणोपनिषद अध्याय 1
46 पतस्मात परब्रह्मणा परमायत साकार निराकारौ स्वभाव सिद्धौ।
–महानारायणापनिषद, अध्याय 2
47 ब्रह्मण्यो देवकीपुत्रो ब्राह्मण्या मधुसूदन ।
ब्रह्मण्यो पुण्डरीकाक्षा ब्रह्मण्यो विष्णुरच्युत ।
–महानारायणोपनिषद अध्याय 7 श्लाक 13–14
48 कृष्णापनिषद–अध्याय 2, श्लोक 6
49 तदव अध्याय 2 श्लाक 10
50 तदैव–अध्याय 2 श्लोक 8
51 गोपाल तापिनी उपनिषद (पूवभाग) पृ॰ 464
52 तदव पृ॰ 4›5
53 तदव, पृ॰ 466
54 तदव पृ॰ 466
55 गोपाल तापिनी उपनिषद (उत्तर भाग) पृ॰ 467
56 तदव पृ॰ 468
57 तदैव पृ॰ 468
58 तदैव पृ॰ 469
59 राधापनिषद (कल्याण उपनिषद अक मे), पृ॰ 662

93 वामन पुराण–43/21
94 श्रीमदभागवत–1/3/28
95 कृष्ण भक्त लीला की पृष्ठभूमि डा० गिरधारीलाल शास्त्री, पृ० 105
96 अष्टाध्यायी–वासुदेवाजु नाम्याम 4/2/96
97 पतजलि–महाभारत
98 अश्वघोष–बुद्धचरित्र–जघान कसक्लि वासुदेव, २/2/23, 1/5
99 जातक–रोमन अनु० जिल्द 4, पृ० 28–29
जातक–हिन्दी अनु०, जिल्द 4, पृ० 227–229
100 जातक–रोमन अनु० जिल्द 6, पृ० 357–362
जातक–हि दी अनु० जिल्द 6 पृ० 402–408
101 जातक–रोमन अनु० जिल्द 5 पृ० 326
जातक–हि दी अनु० जिल्द 5 408
102 जातक–रोमन अनु० जिल्द 5 पृ० 123
जातक–हिन्दी अनु० जिल्द 5 पृ० 205
103 गाहासतसई–1/29 2/12, 2/14
104 सरस्वती कण्ठाभरण–5/263, 5/330 10/55
105 काव्यप्रकाश–10/541
106 प्राकृत पैंगलम–365/49, 421/109
107 उत्तरपुराण–64 से 89 छन्द तक
108 सूर पूर्व व्रजभाषा और उनका साहित्य डॉ० शिवप्रसाद सिंह पृ० 291
109 एनशियण्ट इण्डिया–मेगस्थनीज एण्ड आय एम क्रिण्डल, पृ० 200–205
110 हि दी काव्य का विकास मुरारीलाल शर्मा, पृ० 34
111 व्रज का इतिहास (प्रथम खण्ड) श्री कृष्णदत्त वाजपेयी, पृ० 114
112 हि दी कृष्ण काव्य का स्वरूप विकास मुरारीलाल शर्मा, पृ– 35
113 भारतीय मूर्तिकला रामकृष्णदास पृ० 113
114 आर्कियोलाजिकल सर्वे रिपोट (1922–23) पृ० 103
115 गुप्तकालीन देवगढ़ के मदिर का माधव स्वरूप'
116 उद्धत–हिन्दी कृष्णकाव्य का स्वरूप मुरारीलाल शर्मा, पृ० 36
117 पृथ्वीराज रासो–पृ० 351
118 तद्वैव–पृ० 352
119 बीसलदेव रासो नरपति नाल्ह छन्द 55–57
120 मध्यकालीन कृष्ण काव्य डा कृष्णदेव झारी, पृ० 20

121 हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य की पृष्ठभूमि डॉ० गिरधारीलाल शास्त्री, पृ० 202
122 शुद्धाद्वैत-मार्तण्ड श्री गिरधर जी
123 सूरसागर सूरदास, ना० प्रा० स० सस्करण, प० 340
124 ब्रज माधुरी वियोगी हरि, प० 18
125 रासपंचाध्यायी नन्ददास, प्र० अध्याय, छन्द 55
126 विलसत विविध विलास हास, नीवी कुच परसत।
सरसत प्रेम अवेग रग नव घन ज्यों बरसत ।। रासपंचाध्यायी, नन्ददास
127 छगन मगन बारे कन्हैया ! नेकु उरेंको आई रे।
+ + +
जसुदा गहति धाइ धया माहन कर हैयाँ हैयाँ नन्ददास बलि जाई रे।।
—भवर गीत नन्ददास
128 धन्य धन्य ये लोग भजत हरि को जो ऐसे।
और कोऊ बिन रसहि प्रेम पावत हैं कैसे ।।
मेरे वा लघु ज्ञान कौं उर मे मद होइ व्याधि ।
अब जान्यो ब्रज प्रेम की लहत न आधी आधी ।।
—भवर गीत नन्ददास 65
129 भवर गीत नन्ददास, पद 69
130 हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० 177
131 परमानन्ददास पद सग्रह डा० दीनदयाल गुप्त, पृ० 702
132 हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, प० 177
133 अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय । डा० दीनदयाल गुप्त, पृ० 617
134 छीतस्वामी पद सग्रह डा० दीनदयाल गुप्त, पद 43
135 राधा सुधा निधि—श्लोक 212
136 हित चौरासी—पद 60
137 ब्र० भा० सा० वियोगी हरि, पृ० 92
138 हिन्दी काव्य में कृष्णचरित्र का भावात्मक स्वरूप विकास डॉ० तपेश्वरनाथ प्रसाद, प० 313
139 ब्र० भा० सा० वियोगी हरि, प० 93
140 दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता, पृ० 476
141 अकबरी दरबार के हिन्दी कवि, प० 399
142 रसिका प्रिया केशवदास—1/2
143 हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास प० अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', पृ० 282

144 मीरा पदावली स० विष्णुकुमारी, पद 121, पृ० 69–70
145 भागवत–दशम स्कन्ध पृ० 560
146 मिश्रबन्धु–विनोद, भाग–9, पृ० 237 तथा भाग–1, पृ० 697
147 कविराज गोपकृत–काव्य प्रभाकर किंवा रुक्मिणीहरण तथा अन्य ग्रंथ, पृ० 53
148 श्री विश्राम सागर, पृ० 3
149 रसवती–प्रो० राजनाथ पाण्डेय (लेख), सितम्बर 1968, पृ० 14
150 आधुनिक ब्रजभाषा काव्य डा० जगदीश वाजपेयी, पृ० 118
151 कनुप्रिया की भूमिका, पृ० 7
152 हिन्दी साहित्य कोश, भाग–2 पृ० 31

3
प्रियप्रवास की पृष्ठभूमि

कवि समाज का प्रतिभा सम्पन्न, सचेष्ट प्राणी होता है। वह तत्कालीन राजनीतिक आर्थिक धार्मिक परिस्थितियों से प्रभावित होकर अपने उत्तरदायित्व पर सजग होकर सच्चे स्वरूप को अपनी रचनाओं में प्रतिबिम्बित करता है तथा अपना सुख दुख को त्याग कर जन जीवन के लिए स्वस्थ भावभूमि का भी निर्माण करता है। इसके विपरीत कवि जब उत्तरदायित्व का निर्वाह न कर क्षणिक आवेश के प्रतिफल रूप में अपनी काव्य प्रतिभा को सीमित कर देता है तब सकीर्णता जन्म लेती है। रीतिकालीन कवियों की दृष्टि में कुछ ऐसा ही भाव था। महाकवि 'हरिऔध' भी युग से अप्रभावित नहीं रह सके। सरकारी सेवा में रहकर देश की दयनीय अवस्था का चित्रण एवं समाज पर चलन का स्थान स्थान पर सन्देश, उनका अद्भुत प्रदेय है। परिस्थितियों ने कहाँ तक उनकी कृति 'प्रियप्रवास' को प्रभावित किया, उनके अवलोकन से यह तथ्य स्पष्ट हो जायगा। अत विविध परिवेशों में इसका अध्ययन अपेक्षित है।

राजनैतिक पृष्ठभूमि

हरिऔध जी के समय में राजनीति क्षेत्र में विषम स्थिति थी। जन जन में शासन सत्ता के प्रति आक्रोश था। अत कवियों की लेखनी से भी राष्ट्रीय जागरण के स्वर में कविताएँ लिखी गयी।

हरिऔध जी ने अपने 'प्रियप्रवास' में मनुष्य को मानवता की शिक्षा देते हुए यह सिद्ध किया है कि भारतीय आदर्शों द्वारा ही समाज का कल्याण सम्भव है-

> अपूर्व आदर्श दिखा नरत्व का।
> प्रदान की है पशु को मनुष्यता।
> सिखा उन्होंने चित की समुच्चता।
> बना दिया मानव गोपवृन्द को।।[1]

धर्म, साहसादि सद्गुणों के द्वारा सभी प्राणियों को विपत्ति से उबारना कहीं मानव का सर्वप्रधान धर्म माना गया है।[2]

स्वजाति का कल्याण एव स्व कत य का निर्वाह अथवा उस काय म शरीर त्यागना सुकीर्तिदायी होता है। कत य करते हुए व्यक्ति जीवित रहे या मरे–दाना ही उत्तम माने जाते हैं–

बढो करो वीर स्व जाति का भला।
अपार दोनो विध लाभ है हम।
किया स्वकतव्य उबार जो लिया।
सुकीर्ति पाई यदि भस्म हो गय ॥[3]

आर्थिक पृष्ठभूमि

'प्रियप्रवास' रचना काल म देश की आर्थिक दशा छिन भिन हो गई थी। हि दी सहित्य म आधुनिक काल मे भारते दु जी एव उनक सहयोगियो ने राजभक्ति प्रदर्शित करते हुए भी देश की दयनीय दशा का चित्र प्रस्तुत किया। स्वतत्रता आ दोलन का गतिशील बनाने म आधुनिक युग के साहित्य कारा का बडा योगदान रहा है।

सामाजिक पृष्ठभूमि

'प्रियप्रवास रचना के समय समाज म बडी उथल पुथल थी। भारत वष मे अनेक कुप्रथाएँ व्याप्त थी इनम छुआछूत, बाल विवाह अनमेल विवाह विधवा विवाह निषध दहेज प्रथा स्त्री शिक्षा का विरोध, पर्दा प्रथा जाति एव वण भेद, अधविश्वास समुद्र यात्रा निषेध आदि विशिष्ट थे। अधिकाश *ब्राह्मण एव महान और उच्च तथा अ य जातियो का हेय तथा तुच्छ समझते* थे। ब्राह्मण के घर मे ज म लेना पूव ज मो के सुकृत्यो का परिणाम जाना जाता था।

हमारे नताओं ने राष्ट्रीय आ दोलन के साथ सामाजिक क्षेत्र मे भी जन जागति का मत्र फूँका। स्त्री शिक्षा पर्दा प्रथा का निवारण विधवा विवाह प्रचार अस्पश्यता निवारण, दहेज प्रथा उ मूलन छुआछूत नियत्रण आदि पर विशेष बल दिया गया। अनेक समाज सुधार के कायक्रम चलाये गय। स्त्रियाँ, जो मुसलमानो के शासनकाल से वासना की वस्तु मात्र बनकर रह गई थी, उ हें अबला कहकर सम्बोधित किया गया। नारी जागरण को सभी साहित्यकारा न रचना का विषय स्वीकार किया। रीतिकालीन कवि नारी के यौवन उसके अग प्रत्यग का स्थूल रूप एव नायिका भेद को प्रस्तुत करन म अपनी सफलता मान रह थ। वही नारी आधुनिक काल म धम प्रमिका, लोक सेविका, देश एव जाति प्रमिका आदि रूपा मे प्रस्तुत की गयी।

इस प्रकार सन 1900 ई० के आस पास देश की सामाजिक दशा बडी ही दुखद और दयनीय थी। अनेक कुरीतिया चुनौती के रूप म हमारे समक्ष खडी हुई थी। अग्रेज भी सुरक्षित शासन करने के लिए इन कुरीतियो को बढावा दे रहे थ किन्तु कुछ समय बाद जनता जागत हुई। राजनेता एव साहित्यकार सभी दृष्टि मे परिवतन आया। मानवतावादी दृष्टिकोण को बढावा मिला।

कृष्ण का भक्तिकाल में जो ब्रह्म रूप माना गया था, रीतिकाल म लौकिक नायक रूप म चित्रित किये गये, वही कृष्ण आधुनिक काल मे आदश महामानव के रूप में वण्य विषय बन। आधुनिक काल के कवियो ने इसी रूप को स्वीकार कर साहित्य सृजन किया, क्योकि समाज के सभी क्षेत्रो मे आमूल चूल परिवतन की आवश्यकता थी, जा बिना आदर्श मार्गावलम्बन के सम्भव हो नहीं था।

धार्मिक पृष्ठभूमि

उन्नीसवीं शताब्दी म नवीन धार्मिक आदोलनों से भारतीय जनमानस में नव चेतना जागृत हुई। हिन्दू धम के प्रति लागा मे आस्था और विश्वास की पुन वृद्धि हुई और जनता मे आशा की नई किरण प्रकाशित हुई। वैष्णव मतावलम्बी रामकृष्ण के प्रति पूण आस्थावान थे। राम और कृष्ण के ब्रह्म रूप को स्वीकार करते हुए ससार की असारता का प्रचार हुआ। अग्रेजा ने कृष्ण चरित्र की आलोचना की और उन पर चारित्रिक दोषों का आरोपण भी किया।

'द्विवदी युग' म कृष्ण के चरित्र को लेकर मानवीय आदशों का प्रस्तुत किया गया और तार्किक एव बौद्धिक आधार पर आध्यात्मिक शक्ति वैयक्तिक साधना म ऊपर उठकर मानव प्रम, दीनों की सेवा एव सत्य की खाज तक पहुँची। अब कृष्ण की अलौकिक सत्ता ने लौकिक मानवीय आदश को ग्रहण कर लिया। इसी काल म सिक्ख धम का प्रादुर्भाव हिन्दू मुसलमान की एकता को सुदढ करने के लिए हुआ, किन्तु मुसलमाना की धार्मिक सकीणता के कारण सिक्ख उनके घोर विरोधी हो गये। निम्न जाति के सम्बद्ध अनेक भारतवासियो ने सिक्ख को स्वीकार किया और सम्मानजनक ढग से अपना जीवन यापन करन लगे।

इस समय अनेक नवीन धार्मिक आदोलना और परम्परा से चली आ रही धार्मिक मान्यताओं ने हिन्दी साहित्य को प्रभावित किया। धार्मिक उतार चढाव, खण्डन-मण्डन के घात प्रतिघातों से प्रभावित साहित्य सजकों द्वारा प्रचुर ग्रन्थों का प्रणयन किया गया।

साहित्यिक पृष्ठभूमि

किसी भी साहित्य को तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक और धार्मिक परिस्थितियाँ पूर्णरूपेण प्रभावित करती हैं। 'प्रियप्रवास कालीन' हिन्दी साहित्य उक्त परिस्थितियों से पूर्ण प्रभावित है। द्विवेदी युगीन साहित्य पर विचार करने से पूर्व उसके पृष्ठभूमि में रीतिकालीन साहित्य का अध्ययन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उस समय की कविता भोग विलास, नायक-नायिका के प्रेमालाप और राधा कृष्ण के नाम पर आश्रयदाताओं की वासना तुष्टि में सीमित थी। कवि आश्रयदाताओं के अनुकूल रचनाएँ कर रहे थे। कविता उनकी आजीविका का साधन थी। कवियों की रचनाओं का विषय सामाजिक उत्थान एवं कर्तव्यपरायणता की शिक्षा न होकर पाण्डित्य प्रदर्शन एवं आचार्यत्व की प्रतिष्ठा करना था।

सन 1857 ई० के स्वतन्त्रता-आन्दोलन और अंग्रेजों के भेद पूर्ण प्रशासन में साहित्यिक गतिविधियाँ परिवर्तन के लिए तिलमिला उठी। शृंगार कालीन रूढ़िग्रस्त कविता नवीन परिवेश के लिए लालायित हुई। अंग्रेजों के पक्षपातपूर्ण शासन ने भारतीय जनता के सुप्त स्वाभिमान को जागृत कर दिया। इन विषम परिस्थितियों में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र और उनके सहयोगियों ने अंग्रेजी शासन की प्रशंसा करते हुए जनता में देश प्रेम एवं भाषा प्रेम की भावना जागृत की। उन्हें स्वदेशी धन विदेश जाने के कारण बहुत पीड़ा थी। उन्होंने अपनी साहित्यिक प्रतिभा से नवीन विचारों को साहित्य में स्थान दिया और धीरे धीरे कविता रीतिकाव्य की विलासी वृत्ति से दूर हटती गई। वे स्वच्छन्द मनमौजी देश के प्रति जागरूक और सूक्ष्म दृष्टा थे। वे राजभक्त तो अवश्य थे किन्तु देश के प्रति उनके हृदय में अटूट प्रेम था।

मारकीन मलमल बिना चलत कछू नहिं काम।
परदेशी जुलहान के मानहु भये गुलाम ॥[4]

+ + +

निज भाषा निज धरम निज मान करम ब्योहार।
सबहि बढावहु वेगि मिलि कहत पुकार पुकार ॥[5]

+ + +

अंग्रेज राज सुखराज सब अति भारी।
पै धन विदेश चलि जात यहै अति ख्वारी ॥[6]

भारतेन्दु युग में कवियों ने प्रगतिशील और नवीन विषयों को अपनाया। इस प्रकार काव्य शैली में भी परिवर्तन हुआ। जहाँ रचनाकार

कविता मात्र ब्रजभाषा म रचते थे, अब व खडी बोली म भी रचनाएँ करने लगे। महापुरुषो के चरित्रो के आधार पर उपदेशात्मक साहित्य का सृजन हुआ। टैक्स, अकाल महँगाई विदेश को धन जाना, कायरता, खान-पान, भाषा राजनीतिक दासता आदि विषयो पर रचनाएँ होन लगी। निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल' का मत्र सवव्यापी हो गया। अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार म हिन्दुओ म एकता और राष्ट्रीयता की भावना जागत हुई। किसानो की दयनीय दशा के चित्र प्रस्तुत किये गये। विदेशी वस्तुओ को व्यवहार म लान की कटु आलोचना हुयी। 'जननी जन्मभूमि' की महत्ता के गीत गाये जाने लगे। कवियो न समाज के सुधारवादी आन्दोलनो को कविता का विषय बनाया तथा साहित्य की अनेक विधाओ का श्रीगणेश हुआ। इस युग म चूकि व्यापक रूप से नवोत्थान का आन्दोलन चल पडा था, जिसस ब्रजभाषा भी प्रभावित हुई। गद्य साहित्य खडी बोली मे लिखा गया। पद्य रचना ब्रजभाषा और खडी बोली दोनो म होने लगी। कुछ साहित्यकार कविता म खडी बोली प्रयोग के पक्ष म नही थ। प० प्रतापनारायण मिश्र जी ने नवीन हिन्दी को वाम' और ब्रजभाषा को ईख' की सज्ञा प्रदान की थी। चूकि खडी बोली का पद्य रचना के क्षेत्र म नया परिधान धारण किया था, इसलिए उसम काव्योचित गुणो का कुछ अभाव-सा दृष्टिगत होता है।

द्विवेदी जी ने असगत और अव्यवस्थित खडी बोली को कविता के क्षेत्र म व्यवस्थित और परिनिष्ठित रूप देने का सफल प्रयास किया। उन्होन अपन प्रभावी व्यक्तित्व स नये युग का सूत्रपात किया, जिससे साहित्यकार खडी बोली म रचना करना अपना गौरव समझने लगे। सरस्वती पत्रिका के माध्यम से द्विवेदी जी न जो साहित्य की सेवा की है, वह हिन्दी साहित्य-धारा म जल भरे मघ क समान है तथा वे अपन गुणो और कार्यों स समस्त सृष्टि को नव-जीवन और हरीतिमा प्रदान करते हैं।

द्विवेदी-युग म भाषा व्याकरण भाव विषयवस्तु छन्द, छन्द, अलकार आदि सभी क्षेत्रो म नव-जागरण की प्रवृत्ति दखी जाती है। उन्होन धम दशन एव व्यष्टि समष्टि—सभी का तकपूवक स्वीकार किया गया। पौराणिक अवतारवाद एव दैवी देवताओ को युगानुकूल आदश मानवीय रूप म प्रस्तुत किया गया। मथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत' में राम का मानव रूप म प्रदान किया है।

'हरिऔध' जी 'प्रियप्रवास' मे और भी उदात्त हो गये हैं। उन्होने द्विवेदी युगीन अन्य कवियो की भांति राधा एव कृष्ण मे भक्तिकालीन

परमशक्तिवान रूप तथा रीतिकालीन नायिका एव नायक रूप को आदश मानवीय रूप मे प्रस्तुत किया। राधा ब्रज प्रदेश एव समष्टि मानव जाति की सेविका हैं, इसलिए वे समस्त ब्रज की आराध्य बन गयी हैं—

> वे छाया थीं सुजन शिर की शासिका थी खलो की।
> कगाला की परमनिधि थी औषधि पीडितों की॥
> दीनों की थी बहिन, जननी थीं अनाथाश्रिता की।
> आराध्य थीं ब्रज अवनि की प्रेमिका विश्व की थीं॥[1]

हरिऔध जी ने प्रियप्रवास मे राधा के युगानुरूप नायिका भेद की परम्परा से पथक देश, जाति, ज म भूमि आदि की प्रेमिका के रूप को चित्रित किया है। द्विवेदी युगीन समाज म सवत्र दुव्यवस्था व्याप्त थी, इसलिए समाज के सभी वग शासन यवस्था स अस तुष्ट थे। इन कवियो की दष्टि सुधारवादी और नव जागरण का शख ध्वनि करने वाली थी। अतएव उ होने श्रमिक किसान, दलित वग देश की पराधीनता नारी की दयनीय दशा बेकारी, भुखमरी सामाजिक त्रुटियाँ आदि विषयों को लेकर मानवतावादी धरातल पर रचनाएँ प्रस्तुत की।

भारतीय जनमानस पर सदियो से घनघोर अत्याचार हो रहे थे। उसका स्वाभिमान और व्यक्तित्व सभी कुछ पराश्रित था। इसलिए इस युग म मानवधम को विश्व का सबसे महान् धम माना गया। यहाँ तक कि मानवता की सेवा ही ईश्वर प्राप्ति का साधन स्वीकार किया गया। चूँकि मनुष्य ईश्वर का अश है इसलिए मानव धम ही आध्यात्मिकता है, इ ही मा यताओं से प्रेरणा लेकर हरिऔध के 'प्रियप्रवास म राधाकृष्ण को आदश एव लोकसेवक रूप म प्रस्तुत किया गया।

इस प्रकार हम द्विवेदी जी के आरम्भिक समय मे सवत्र नव जागरण दिखाई पड रहा था। भाषा, शली, विषय रस छ द अलकार मानवीय मूल्य सामाजिकता राजनीति, अथ नीति आदि प्राचीन परिपाटी और मा यताओ से मुक्त होन के लिए सभी प्रयासरत थे। साहित्यकार की दष्टि विशेष रूप से राज्याश्रय और रूढिया को छिन्न भिन्न करने मे लगी हुई थी। हमारे देश की जनता इन महापुरुषा की चिरऋणी रहेगी क्योकि सभी क्षेत्रो म इन कवियो और साहित्यकारो ने नव जागति का स्वर फू क दिया। उपाध्याय जी ने इ ही प्रवत्तिया से प्रभावित होकर कृष्ण के चरित्र को नवीन मूल्यो के द्वारा आदश रूप प्रदान कर लोक के लिए अनुकरणीय बनाया है। राधा का लोक सविका एव विश्व प्रेमिका रूप हि दी साहित्य के लिए आदश एव महान हैं।

कथा-स्रोत

कवि समाज को विषय बनाकर उसके लिए रचना करता है। उसके द्वारा किया गया वणन या तो वतमान समाज से सम्बन्धित होता है या उस समाज मे प्रचलित कथानको से। ये कथानक काल्पनिक पौराणिक एव ऐतिहासिक होते हैं। कवि युगीन परिस्थितिया के आधार पर विषय का सयोजन करता है। कवि प्रतिभा के अनुसार, वस्तु वणन मे उसका एक रूप उभर कर सामने आता है। कभी कभी वह रूप पूणत मौलिक प्रतीत होने लगता है। यद्यपि उसकी वणन शैली मे पूर्व काव्यो में प्राप्त कथानको से बहुत भिन्नता नही होती। हरिऔध जी ने 'प्रियप्रवास' महाकाव्य की रचना करते समय कृष्ण चरित्र को इसी प्रकार की मौलिकता प्रदान की है। कृष्ण कथा का मूलाधार 'श्रीमदभागवत' का दशम स्कन्ध है, जो समस्त हिन्दी कृष्ण काव्य का स्रोत है। जयदेव, विद्यापति, चन्दवरदायी, चण्डीदास, सूर, रीतिकालीन कवि, भारतेन्दु जी आदि कवियो ने कृष्ण के विभिन्न रूपों को अपने अन्त एव बाह्य ज्ञान के अनुसार चित्रित किया है।

हरिऔध जी ने श्रीमदभागवत के कथानक—कृष्ण चरित्र को—नवीन रूप प्रदान करने का प्रयास किया है। जहाँ भागवत मे कृष्ण जन्म से लेकर सम्पूण जीवन का क्रमबद्ध विवेचन है, वही प्रियप्रवास म कृष्ण को मथुरा ले जाने के लिए अक्रूर के ब्रज-आगमन से कथा प्रारम्भ होती है। ब्रज में कृष्ण के द्वारा किये गये समस्त काय ज्ञान का स देश दने वाले उद्धव को ब्रजवासी स्मति रूप में सुनाते हैं।

यह सत्य है कि प्रियप्रवास के कथानक का मूल आधार श्रीमद भागवत् है। रचनाकार किसी रचना को, कुछ उद्देश्यो को लेकर रचता है। उद्देश्यो की पूर्ति के लिए यदि कवि पौराणिक या ऐतिहासिक कथासूत्र मे कल्पना का सम्मिश्रण करता है तो वह अपने युग के लिए सफल और उपयोगी सिद्ध होता है। हरिऔध जी का युग मानवतावाद का युग था। श्रीकृष्ण, जो युग पुरुष, परब्रह्म परमेश्वर रूप मे प्रतिष्ठित थे, उन पर विदेशी विचारको और आयसमाजियों द्वारा कठोर प्रहार हो रहा था। रीतिकाल म कृष्ण का रूप और भी विकृत हो गया। हरिऔध जी सनातन धर्मी थे। उन्हें कृष्ण के ब्रह्मत्व पर आस्था थी, किन्तु कृष्ण की आलोचना उन्हें सह्य न थी। इसलिए उन्होने श्रीकृष्ण क पौराणिक एव मध्ययुगीन पूण ब्रह्मत्व रूप को मानवतावादी रूप प्रदान करन के लिए प्रियप्रवास महाकाव्य का सजन किया।

हृदय चरण में तो मैं चढा ही चुकी हूँ,
सविधि वरण की थी कामना और मेरी।
पर सफल हम सो है न होती दिखाती,
वह कब टलता है भाल मे जो लिखा है ।।[29]

राधा की दशा वियोग की आशका मे विचित्र हो गयी है । वे भाग्य वादी होकर पूजा आराधना[30] व्रत उपवास आदि सब कुछ करती हैं, किन्तु पति रूप मे कृष्ण को पाने की आशक अब क्षीण हो चली है ।

कृष्ण की अक्रूर के साथ मथुरा गमन की तैयारी हो रही है । हरि औध जी ने व्रजवासियो का व्यथित और विह्वल रूप मे चित्र प्रस्तुत किया है, वह भागवत से कही अधिक ममस्पर्शी और हृदय द्रावक है । व्रज प्रदेश का अपार जन समूह प्रात होते ही नन्द गृह के समीप एकत्र हो गया है । लोगो के मन मे अनेक प्रकार की आशकाएँ उठ रही हैं । नेत्रो से अश्रु गिरना चाहते हैं किन्तु प्रयाण काल मे इसे अशुभ जानकर आँसू रोकना चाहते हैं–

रोना महा अशुभ जान प्रयाण काल ।
आँसू न ढाल सकती निज नेत्र से थी ।
रोये बिना न छन भी मन मानता था ।
डूबी द्विधा जलधि मे जन मण्डली थी ।।[31]

भागवत के कृष्ण जगतपति सृष्टि के नियता और पूर्ण समर्थ हैं । अक्रूर जी कृष्ण की परम सत्ता को सवत्र स्वीकार करते हैं । 'प्रियप्रवास' मे कृष्ण के मथुरा प्रस्थान का दृश्य भागवत पर ही आधारित है । गोपियों के अश्रुपूरित नेत्र रुकते नहीं हैं । वे मन ही मन अक्रूर की भत्सना करती हुई सखी से कहती हैं–

मतद्विधस्या करुणस्य नामभूदक्रूर इत्येतदतीव दारुण ।
योऽसावनाश्वास्य सुदु खितजन प्रियात्प्रिय नेष्यति पारमध्वन ।।[32]

भागवत की गोपियाँ कृष्ण की रूपमाधुरी पर मुग्ध ह । विधाता ने उन्हे श्रीकृष्ण सयोग का सुअवसर प्रदान किया था अभी उनकी अभिलाषाएँ पूर्ण भी न हो पायी थी कि उनके जीवन मे वियोग ने आकर निवास कर लिया–

यस्त्व प्रदर्श्यासित कुन्तलाकत मुकुन्द वक्त्र सुकपोलमुन्नसम् ।
शोकापनोदास्मित लेशसुन्दरम, करोषि पारोक्ष्यमसाधुवै कतम ।।[33]

प्रियप्रवास म गोप गोपी यशोदा, राधा, रोगी वृद्ध–सभी कृष्ण के मथुरा जाने की स्थिति मे अत्यन्त दुखी है–

"कोई रोया सलिल न रुका लाख रोके दगों का।
कोई आहें सदुख भरता हो गया बावला सा॥
कोई बोला सकल ब्रज के जीवनाधार प्यारे।
यो लोगों को व्यथित करके आज जाते कहाँ हो॥"[33]

एक वृद्ध श्याम के सानिध्य में रहने के लिए अपना सर्वस्व देने को उद्यत है–

"रत्नों की है न तनिक कमी आप लें रत्न ढेरों।
सोना चाँदी सहित धन भी गाड़ियाँ आप ले लें॥
गायें ले लें गज तुरग भी आप ले लें अनेकों।
लेवें मेरे न निज धन को हाथ मैं जोड़ता हूँ॥"[34]

यहाँ कवि का मौलिक चिन्तन दृष्टिगोचर होता है। कृष्ण यान पर बैठ गए, किन्तु उन्हें कोई छोड़ना नहीं चाहता। इसीलिए सभी ने आकर रथ को घेर लिया। कुछ लोग रथ के चक्रों को पकड़कर बैठ गए, यही नहीं, कुछ तो रथ के समक्ष लेट भी गए–

"घेराआ के सकल जन ने यान को देख जाता।
नाना बातें दुखमय कहीं पत्थरों को रुलाया॥
हा हा खाया बहु विनय की औ कहा खिन्न हो के।
जो जाते हो कुँवर मथुरा ले चलो तो सभी को॥
बीसों बैठे पकड़ रथ का चक्र दोनों करों से।
रासें ऊँचे तुरग युग की थाम ली सैकड़ों ने॥
सोये भू के चपल रथ के सामने आ अनेकों।
जाना होता अति अप्रिय था बालकों का सबों को॥"[36]

कृष्ण वियोग की सम्भावना से ब्रज प्रदेश का कारुणिक दृश्य देखकर अक्रूर का हृदय प्रेम और ममता से भर जाता है। कर्तव्य भार से विवश होने के कारण कृष्ण को छोड़कर जा भी नहीं सकते। वे कृष्ण को रथ पर बैठा कर नन्द बाबा के साथ चल पड़ते हैं। श्रीमदभागवत में विरह व्यथित ब्रज-बालाएँ टकटकी लगाकर उस समय तक देखती रहती हैं, जब तक रथ का कोई चिह्न भी दृष्टिगोचर होता है–

भावबलस्यते केतुर्यावद् रेणुरथस्य च।
अनुप्रस्थापितात्मानो लेख्यानीवोपलक्षिता॥
ता निराशा निववतुर्गोविन्द विनिवर्तने।
विशोक अहनी निन्युर्गायन्त्य प्रियचेष्टितम्॥"[37]

प्रियप्रवास' में यह चित्र और भी मर्मस्पर्शी है। "कृष्ण के प्रस्थान

करने पर एक बाला को मनुष्य योनि प्राप्त करने पर ग्लानि होती है। यदि आज उसे अश्वयोनि, यान अथवा ध्वजा रूप प्राप्त होता तो कृष्ण का सयोग पाकर अपने को धन्य मानती।'[38]

कृष्ण के जाने के मार्ग की ओर देखते हुए ज्वाला अत्यधिक बढ़ती जा रही है। घोड़ो के टापों की ध्वनि, उनसे उड़ती हुई धूल और ऊची पताकाएँ जब तक दृष्टिगत होती रहीं, तब तक सभी ब्रजवासी उसी ओर देखते रहे—

'टापो का नाद जब तक था कान मे स्थान पाता।
देखी जाती जब तक रहा यान ऊँची पताका॥
थोड़ी सी जब तक रही व्योम मे धूलि छाती।
यो ही बातें विविध कहते लोग ऊबे खड़े थे॥''[39]

उक्त कथानक भागवत के समान ही प्रियप्रवास म वर्णित है।

श्रीमद्भागवत की तरह प्रियप्रवास म श्रीकृष्ण को राज्य काय मे व्यस्त प्रस्तुत किया गया है। नन्द बाबा का स्नेह माता का नवनीत आदि का कलेवा देना कदम्ब की सघन छाया में मुरली वादन गोप गोपिकाओ के साथ रास क्रीडा आदि सब कुछ कृष्ण के मानस पटल पर अकित है। प्रात साय एकान्त मे बठने पर ब्रज की सुखद अनुभूतियाँ उन्हें अत्यधिक कष्ट देती हैं। वे एक बार ब्रज जाकर सबको सान्त्वना देना और स्वय सबका दर्शन करना चाहते हैं किन्तु नित्य नयी समस्यायें उन्हें इस प्रकार उलझा देती हैं कि जाने का सौभाग्य ही प्राप्त नही कर पाते। विवश होकर सखा उद्धव द्वारा ब्रजवासियो के लिए कृष्ण स देश भेजते हैं—

गच्छोद्धव ब्रज सौम्य पित्रो नौ प्रीतिमावह।
गोपीना मद्वियोगाधि मत्सदेशैर्विमोचय॥
ताम मनस्का मत्प्राणा मदर्थे त्यक्त दहिका।
ये त्यक्त लोकधर्माश्च मदर्थे तान विभर्म्यहम॥''[40]

हरिऔध जी ने किसी भी घटना का परम्परागत रूप से अक्षरश अनुकरण नही किया है। उनकी दृष्टि मौलिक है। इसलिए "भागवत से प्रियप्रवास की उक्त कथानक म भी थोड़ी भिन्नता रही है। भागवत मे कृष्ण स्वय अपने हृदय की व्यथा अभिव्यक्ति करते हैं किन्तु प्रियप्रवास' म ज्ञान स्वरूप उद्धव कृष्ण को एकाकी चिन्तित मुद्रा मे देखकर इसका कारण पूछते हैं।''[41] कृष्ण अतीत ब्रज के स्वच्छन्द सुखद जीवन का वर्णन करते हुए ब्रजवासी एव नन्द यशोदा से मिलन की उत्कट अभिलाषा व्यक्त करते हैं। यह स्पष्ट करते हुए कि किस प्रकार व्यक्ति काल धर्म के अधीन है। कृष्ण

सभी ब्रजवासियों के लिए ज्ञानमार्ग के उपदेशक उद्धव को सांत्वना देने के लिए भेजते हैं–

"देखो यद्यपि है अपार ब्रज के प्रस्थान की कामना।
होता मैं तव भी निरस्त हूँ व्यापी द्विधा में पड़ा।।
ऊधौ दग्ध वियोग से ब्रजधरा है हो रही नित्यश।
जाओ, सिक्त करो उस सदय को आमूल ज्ञानाम्बु से।।"[42]

'प्रियप्रवास' में कृष्ण उद्धव को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि "हे उद्धव, इस प्रकार सभी लोगों को ज्ञान के उपदेशों द्वारा सन्तुष्ट कर देना कि वियोगाग्नि में जलते हुए लोग शान्त हो जाएँ। उन्हें माता यशोदा और नन्द बाबा का विशेष ध्यान है।"[43] राधा से उनका विशेष प्रेम है। राधा जो अद्वितीय सौन्दर्य से परिपूर्ण है और व्रज तथा समस्त स्त्री जाति की शोभा हैं, उसकी विचित्र दशा मेरे वियोग में हो गयी होगी उसे यथासम्भव ताप से मुक्ति दिलाने का प्रयास करना।

श्रीमदभागवत में कृष्ण द्वारा उद्धव को ब्रज जाने का निर्देश देना, उनका ब्रज में पहुचना और वहाँ की प्रकृति की शोभा का संक्षिप्त रूप में उल्लेख है। इसका आधार लेकर हरिऔध जी ने प्रियप्रवास के नवम सर्ग के 14वें छन्द से लेकर 112वें छन्द तक मात्र वहाँ की प्राकृतिक सुषमा का चित्र ही प्रस्तुत किया है।

कवि ने स्थान स्थान पर भक्तिकाल के कृष्ण के पारलौकिक ब्रह्मत्व रूप को लौकिक मानवीय धरातल पर प्रस्तुत किया है। गोवर्द्धन धारण और दावानल प्रसंगों को बौद्धिक आधार देकर कृष्ण के मानवीय रूप की स्थापना की है–

"लख अपार प्रसार गिरी द्रुम
ब्रज धराधिप के प्रिय पुत्र का
सकल लोग कहने लगे उसे
रख लिया उँगली पर श्याम ने।।"[44]

किन्तु भागवत में इन्द्र के कोप से प्रलयकारी वर्षा से बचाने के लिए भगवान कृष्ण ने बरसाती छत्ते के पुष्प के समान उखाड़कर गोवर्धन को उँगली पर रख लिया–

इत्युक्त्वैकेनहस्तेन कृत्वा गोवर्धनाचलम्।
दधार लीलया कृष्णश्छत्राकमिव बालकः।।'[45]

हरिऔध जी ने कालिया नाग और दावानल प्रसंग को प्रियप्रवास के ग्यारहवें सर्ग में प्रस्तुत किया है। घटनाओं को चित्रित करने में भागवत

जसी क्रमबद्धता नही है और न ही कृष्ण के अलौकिक स्वरूप के विवेचन का प्रयास ही किया है। कृष्ण जनता के सच्चे प्रतिनिधि हैं। वे लोकसवक, समाज के आदश समदर्शी, मानवीय दु खो क निवारक और सच्चे अर्थों म मानवता के आराधक हैं। वे मानवीय दु खा से दुखी होकर जन प्रतिनिधि रूप मे यमुना से कालिनाग को बाहर निकालने के लिए कूद पडते हैं। उन्होन अलौकिक शक्ति स नहीं वरन वेणुवादन और अ य युवतियो से उसे वशीभूत कर यमुना को विष मुक्त कर दिया—

> व्रजेन्द्र के अद्भुत वेणु नाद से
> सतक सचालन से सु युक्ति से
> हुए वशीभूत समस्त सर्प थे
> न अल्प होते प्रतिकूल थ कभी।[47]

दावानल प्रसग को भी कवि न भागवत मे सकेत रूप म ग्रहण करके मौलिक वणन किया है। दावाग्नि की प्रचण्डता से आकुल व्याकुल व्रजप्रदेश को देखकर कृष्ण करुणा से भर जाते हैं। वे व्रजवासियो को सम्बोधित करते हुए विपत्ति मे लडने के लिए उत्साहित करते है, किन्तु किसी व्यक्ति म विपत्ति से लडने का साहस न देख स्वय प्रचण्ड अग्नि मे कूद कर दावाग्नि को शा त कर देते हैं—

> स्वसाथियो की यह देख दुदशा।
> प्रचण्ड दावानल म प्रवीर स।
> स्वय घसे श्याम तुरन्त वेग से।
> चमत्कृता सी बन भूमि को बना॥
> \+ \+ \+
> अलौकिक स्फूर्ति दिखा त्रिलोक को।
> वसुन्धरा मे कल कीति बेलि बो॥[48]

भागवत म ग्रीष्म की प्रचण्डता एव दावाग्नि की दाहकता से व्यथित व्रजवासी भगवान की शरण मे आए और उनसे प्राथना करने लगे। भगवान स्वजनो की पीडा का देखकर भयकर अग्नि को पी गये—

> इत्थ स्वजनवकलव्य निरीक्ष्य जगदीश्वर ।
> तमाग्निमपि वप्तीव्रमव तोडन तशक्ति घक ॥[49]

इस प्रकार दावानल प्रसग के चित्रण मे भागवत और प्रियप्रवास मे पर्याप्त अ तर दृष्टिगोचर होता है।

भागवत में नवधा भक्ति[50] का प्रतिपादन हिरण्यकशिपु और प्रह्लाद के माध्यम के सवादों से हुआ है।

'रामचरितमानस'[51] म तुलसीदास जी ने भागवत के आधार पर नवधा भक्ति को प्रस्तुत किया है, जिसमे राम ने लक्ष्मण के प्रति उसका उप देश वया है । प्रियप्रवासकार ने नवधा भक्ति के उन्ही 'नौ रूपो'[52] को स्वी कार किया है किन्तु उसके प्रतिपादन मे पर्याप्त भिन्नता है–

बना किसी की यक मूर्ति कल्पिता
करे उसी की पद सेवनादि जो
न तुल्य होगा वह बुद्धि दृष्टि से
स्वय उसी की पद अचनादि क ।।

\+ \+ \+

जो से सारा कथन सुनना आत उत्पीडिता का ।
रोगी प्राणी व्यथित जन का लोक उन्नायको का ।।
सच्छास्त्रा का श्रवण, सुनना वाक्य सत्सगियो का ।
मानी जाती श्रवण अभिधा भक्ति है सज्जनो मे ।।[53]

हरिऔध जी ने नवधा भक्ति का, जो भक्त को भगवान का सान्निध्य प्रदान कराने वाली है, नवीन रूप म प्रस्तुत किया है । कवि ने कृष्ण को ब्रह्म न मानकर उन्हें नैतिक मच पर प्रतिष्ठित किया है । वे ईश्वर भक्ति का वास्तविक रूप मनुष्य एव मनुष्येत्तर प्राणियो की सेवा मे स्वीकार करते है ।

भारतीय काव्य म दूत प्रेषण का एक सुदीघ इतिहास है । पवन दूत प्रसग के रचना की प्रेरणा कवि न कालिदास के 'मेघदूत' और कवि धोई के पवनदूत' से ग्रहण की है । चूकि कालिदास का दूत मेघ (पुरुष) है और 'प्रियप्रवास' का पवन है । दोना प्रकृति के ही तत्व हैं । मेघ सतप्ता को शीतलता प्रदान करने वाला है तथा पवन है प्राणि मात्र को प्राणवान करने वाला । धोई कवि जिन्होंने 'मेघदूत' के आधार पर 'पवनदूत' की रचना की है उसका भाव, भाषा, अलकार पद, शैली, छन्द आदि सब कुछ मेघ दूत से प्रभावित है । मधदूत में यक्ष अपना सदेश ले जाने के लिए मेघ की प्रशसा करता हुआ कहता है–

तेनार्थित्व त्वयि विधिवशाद् दूरब धुगतोऽह ।
याचामोघा वरमधि गुणे नाधमे लब्धकामा ।।[54]

इसी प्रकार पवनदूत मे कुवलयवती भी पवन स निवेदन करती है–

तस्मादेव त्वयि खलु मया सप्रणीतोऽर्थिभाव ।
प्रायोभिक्षा भवति विफला नैव युष्मद्विधेषु ।।[55]

दोनों काव्या से प्रभावित हरिऔध जी को राधा पवन की प्रशसा करती हुई कहती है किन्तु तीव्र गति वाली है, तुम पर मुझे पूर्ण विश्वास है, इसलिए किसी भी दशा म मरी बिगडी हुई बात अवश्य बना दो–

तू जाती है सकल थल ही वेगवाली बड़ी है।
तू है सीधी तरल हृदया ताप उन्मीलती है ॥
मैं हूँ जी मे बहुत रखती वायु तेरा भरोसा।
जैसे हो ए भागिनि बिगड़ी बात मेरी बना दे ॥[56]

राधा को पवन पर भरोसा है। उसे इस बात की आशका भी है कि ऐसा न हो कि सुखद कुंजो की सुगंधि और उसकी मदुल छाया उसे अपने आकर्षण से आकृष्ट करके रोक न ले। अतएव राधा सचेष्ट करती हुई कहती हैं—

ज्यों ही मेरा भवन तज तू अल्प आगे बढ़ेगी।
शोभा वाली सुखद कितनी मंजु कुंजें मिलेंगी॥
प्यारी छाया मदुल स्वर से मोह लेगी तुझे वे।
तो भी मेरा दुख लख वहाँ जा न विश्राम लेना ॥[57]

'प्रियप्रवास' का वह प्रसग मेघदूत' के यक्ष द्वारा मेघ से सन्देश ले जाने मे विलम्ब न करने की प्रार्थना पर ही आधारित है।[58] कुवलयवती मलयानिल को सर्प के पी जाने का भय दिखाकर अविलम्ब प्रस्थान कर देने के लिए आग्रह करती है।[59]

'प्रियप्रवास' के पवनदूती प्रसग और कालिदास के मेघदूत' प्रसग दोनो मे अनेक स्थलो पर वर्णन साम्य है। जैसे—लज्जाशीला पथिक[60] को गोद मे लेकर उसकी थकान और मुख की मलीनता को मिटाने, मन्दिरो मे पूजा के समय पहुँच कर वहाँ के माधुर्य को बढ़ाना[61] आदि प्रसग मेघदूत'[62] से ही गृहीत हैं। 'पवनदूती' की परिकल्पना आलोच्य कवि ने कालिदास और उनके परवर्ती कवि धोई के पवनदूत के आधार पर की है किन्तु कालिदास और हरिऔध की परिस्थितियो म पर्याप्त अन्तर है। इसलिए बहुत कुछ समता होते हुए भी 'प्रियप्रवास म कवि द्वारा अपनी प्रवत्ति के अनुसार इस प्रसग को भी मौलिक रूप प्रदान किया गया है।

हरिऔध जी कवि ही नहीं अध्येता और विद्वान भी थ। उन्होंने श्रीमदभागवत के अतिरिक्त अन्य सस्कृत ग्रन्थो का समुचित अध्ययन और मनन किया था। कवि ने ब्रजजनो को उदबोधित और प्रोत्साहित करने की प्रेरणा श्रीमदभागवद गीता[63] से ग्रहण की है। उनका कथन है—

बढ़ो करो वीर स्वजाति का भला।
अपार दोनो विधि लाभ है हमें ॥
किया स्व कर्तव्य उबार जो लिया।
सुकीर्ति पायी यदि भस्म हो गये ॥[64]

हिंदी साहित्य के कृष्ण सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों से कुछ न कुछ प्रेरणा लेकर कवि प्रियप्रवास को महाकाव्य रूप देने में सफल हो सका है। इनमें विद्यापति, जायसी, मतिराम, बिहारी, घनानन्द आदि की रचनाओं का किसी न किसी रूप में प्रियप्रवास पर प्रभाव पड़ा है। यदि सूरसागर श्रीमद्-भागवत की तरह कृष्ण के समग्र जीवन का चित्र प्रस्तुत करने वाला है तो प्रियप्रवास का कथानक अत्यल्प है फिर भी जिन घटनाक्रमों को आधार लेकर कवि ने आलोच्य ग्रन्थ की रचना की है वे सूरसागर से समता रखते हुए भी नवीन हैं। सूर का वात्सल्य वर्णन हिंदी साहित्य में विशिष्ट है, परन्तु हरिऔध जी का प्रयास भी इस क्षेत्र में सफल है–

"सिखवति चलन जशोदा मैया।
अरबराय कर पानि गहावत डगमगाइ धरनी धरै पैया।"[65]

और–

'ठुमुकते गिरते पड़ते हुए जननि के कर की उँगली गहे।"[66]

कृष्ण के घुटनों के सहारे चलने, उनके धूल धूसरित शरीर को पोंछने आदि अनेक स्थलों के वात्सल्य वर्णन में सूरसागर और प्रियप्रवास दोनों में एकरूपता विद्यमान है। यही नहीं, दावानल प्रसंग, कृष्ण के रूप सौंदर्य को निरख कर ब्रज बालाओं का आत्म विभोर हो जाना, कृष्ण द्वारा मथुरा में उद्धव से ब्रजवासियों का प्रेमवर्णन आदि ऐसे प्रसंग हैं जिनमें पर्याप्त समानता पाई जाती है। दावानल की प्रचण्डता का दृश्य द्रष्टव्य है–

'ब्रज के लोग उठे अकुलाई।
ज्वाल देखि अकास बराबरि, दसहु दिसा कहूँ पार न पाई॥

\+ \+ \+

लटकि जात जरि जरि द्रुम बेली। परकट बास कास कुसताल।
उचटत भरि अगार गगन लौं। सूर निरखि ब्रज जन बेहाल॥"[67]

और–

'नितांत ही थी बनती भयंकरी, प्रचंड दावा प्रलयंकारी सभा।
अनन्त थे पादप दग्ध हो रहे। असंख्य शाखें फटती सशब्द थीं।
विशेषतः वंश अपार वंश की। बनी महा शक्ति थी वनस्थली॥'[68]

बंगला भाषा में मेघनाद वध के रचयिता माइकेल मधुसूदन दत्त भिन्न तुकान्त संस्कृत भाषा के प्रयोग के कारण नये युग का श्रीगणेश करने वाले हैं। कवि हरिऔध को नवीन भाषा शैली, विषय को प्रियप्रवास में प्रस्तुत करने की प्रेरणा इन्हीं से मिली। इस प्रकार प्रियप्रवास पर अनेक

ग्रन्था के प्रभाव को देखकर कवि की बहुज्ञता और इस ग्रन्थ के प्रेरणा स्रोता का स्पष्ट चित्र सामने प्रस्तुत हो जाता है।

उपाध्याय जी के व्यक्तित्व पर दृष्टिपात करने से यह ज्ञात होता है कि उनका परिवार परम वष्णव था। उनकी माता जी स्वय सुखसागर एव रामचरितमानस का पाठ किया करती थी और उनको सुनाया करती थीं। इनके चाचा प० ब्रह्मा सिंह धमनिष्ठ कतव्य परायण, सदाचारी एव विद्वान व्यक्ति थे। माता और चाचा के कुशल सरक्षण के कारण हरिऔध जी अध्ययनशील उदार, धमनिष्ठ सयमी और कतव्य परायण हो गये। इनके पूव कृष्ण चरित्र को लेकर भारतेन्दु आदि कवि रचनाएँ कर रहे थे। कृष्ण सम्ब धी रचनाओ और पारिवारिक सस्कार ने इ ह कृष्ण चरित्रपरक रचना हेतु प्रेरित किया। श्रीकृष्ण के ब्रह्मत्व को प्रारम्भिक रचनाओं म स्वीकारते हुए कवि ने श्रीकृष्ण शतक' (1882) के बाद प्रमाम्बुवारिधि' प्रेमाम्बु प्रस्रवण' प्रमाम्बु प्रवाह' तथा प्रेम प्रपच' की रचना की। इन का य सग्रहो मे कृष्ण के अलौकिक रूप का सकेत प्राप्त है। इमम कृष्ण की भक्ति के साथ भाव विह्वल अनुभूतियो का सु दर चित्रांकन है।

हरिऔध और उनके पूव कृष्ण का जो रूप कवियो द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा था उनम शृगार की प्रधानता थी। रीतिकाल में तो कृष्ण राधा लौकिक नायक नायिका रूप म चित्रित किये जा रहे थे। विदेशी आलोचको द्वारा ऐसे ब्रह्म रूप कृष्ण का उपहास किया जा रहा था। देश में कायरता कामपरता और भाग्यवादिता का बोल बोला था। हरिऔध जी का भावुक हृदय समाज की दुदशा देखकर करुणाद्र हो उठा। इसलिए उन्होने श्रीकृष्ण के ब्रह्मत्व को व्यापक बनाने के लिए उन्होने महापुरुष रूप में चित्रित किया।

समाज की तमाम विसगतियो ने श्रीकृष्ण के मानवीय लोक विश्रुत परोपकारी और कर्मवीर रूप को सवारा। उनका कथन है– मैंने श्री कृष्ण चन्द्र को इस ग्रन्थ में एक महापुरुष की भाँति अंकित किया है ब्रह्म करके नहीं।" अवतारवाद के मूल में मैं श्रीमदभग्वतगीता का यह श्लोक मानता हू–

"यद् यद् विभूतिमत्सत्व श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्त देवावगच्छत्व मम तेजोंशसंभवम ॥"[69]

अतएव जो महापुरुष है उनका अवतार होना निश्चित है। मैंने भगवान श्रीकृष्ण का जो चरित्र अंकित किया है, उस चरित्र का अनुवादन करके आप स्वय विचार करें कि वे क्या थे ? मैंने यदि लिखकर आपको बतलाया कि वे ब्रह्म थे और तब आपने उनको पहचाना तो क्या बात रही।

आधुनिक विचारों के लोगों को यह प्रिय नहीं कि आप पवित पवित्र में तो भगवान श्रीकृष्ण को ब्रह्म लिखते चलें और चरित्र लिखने के समय 'कर्तुं म-कर्तुं मन्यथ कर्तुं समथ प्रभु' के रंग में रंग कर ऐसे कार्यों का कर्त्ता उन्हें बनावें कि जिनके करने में एक साधारण विचार के मनुष्य को घृणा होवे।[70]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जहाँ कवि ने संस्कृत और हिन्दी के अनेक ग्रंथों से 'प्रियप्रवास' की कथावस्तु को ग्रहण किया है, वहीं पर यह भी स्वीकार करना पड रहा है कि 'हरिऔध' जी को परिवार, समाज, राजनीति साहित्य, धर्म युग सभी ने कृष्ण को मानवीय रूप में चित्रित करने की प्रेरणा दी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 प्रिय प्रवास-13/14
2 तदव-11/85
3 प्रियप्रवास-11/87
4 भारतेन्दु ग्रन्थावली ब्रजरत्न दास, भाग-2, पृ० 698
5 वही, पृ० 738
6 तदव, पृ० 811
7 प्रियप्रवास हरिऔध, 17/49
8 वही, 2/13
9 श्रीमदभागवत-10/309/10 11
10 प्रियप्रवास-3/86
11 तदैव-2/34-35
12 तदव-2/36-43
13 14 15 तदव-2/46
16 तदव-7/26
17 तदव-11/36-54
18 तदव-11/58
19 तदैव-2/48
20 तन्व-11/68
21 श्रीमदभागवत-10/6/2
22 तन्व-10/7/20-28
23 तन्व-10/7/5-8
24 तदैव-10/10/25-28

चतुर्थ अध्याय

प्रियप्रवास मे भाव अभिव्यक्ति

(खण्ड–क)

प्रियप्रवास मे प्रेम सौन्दर्य-रस अभिव्यक्ति

मानव और उनमे अन्तर्निहित भावो का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। यह मानव हृदय मे स्थायी और सस्कारजन्य भी होते हैं जिनके द्वारा कवि हृदय के उदगारों का बाह्य जगत स सम्बन्ध स्थापित कर उन्हें अन्तर्मुखी दृष्टि से चित्रित करता है। मानव प्रेम सौन्दर्य, रस सस्कृति एव प्रकृति आदि से आजीवन सम्बद्ध रहता है। अत काव्य म कवि द्वारा उनका समावेश वर्ण्यविषयानुसार अथवा अपनी प्रकृति के अनुसार होना स्वाभाविक ही है। इन सभी का मानव जीवन मे इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि उनके अभाव म जीवन सम्भव ही नही है। इनके आधार पर कवि की प्रियप्रवास के सन्दर्भ म भावाभिव्यक्ति से परिचय अपेक्षित है।

प्रेम-अभिव्यक्ति

प्रेम व्यक्ति के जीवन का आलोकमय एव पावन तत्व है। वह मनुष्य को उदार बनाता है इसम त्याग और समर्पण के अतिरिक्त कुछ नही है। प्रेम का उदात्त स्वरूप प्रिय और प्रेमी के बीच जन्म जन्मान्तर का सम्बन्ध स्थापित करता है। यह स्वार्थ की भाव भूमि से ऊपर उठकर व्यक्ति के अन्त करण म आत्मोत्सर्ग की पराकाष्ठा का भाव भरता है। प्रेम जगत का रग इतना पक्का होता है कि लाख प्रयास करने पर भी नही छूट सकता है। प्रेम के स्वरूप पर डा० भाटी न विचार व्यक्त किये हैं–' प्रेम प्रिय शब्द का भाव वाचक रूप है। प्रिय शब्द का अर्थ है–तृप्तिकारक आह्लादक आदि प्रीणाति इति प्रिय'। अत प्रेम शब्द हृदय की तृप्तिकारिणी, आह्लादिनी आदि अवस्थाओं का सूचक है। प्रेम उस भाव को कहा जाता है, जो मानव मन का आह्लाद या तृप्ति के द्वारा उन्नयन करे।"[1]

प्रेम के लौकिक अलौकिक दो रूप होते हैं। यह दोनो रूप प्रियप्रवास में उपलब्ध हैं। लौकिक रूप म हरिऔध जी ने राधा कृष्ण एव गोप गोपिकाओ

का प्रेम, देश एव राष्ट्र तथा विश्व प्रेम के रूप म निरूपित किया है। अलौकिक प्रेम के सम्बन्ध में प्रियप्रवास म कवि ईश्वर के प्रति पूण आस्थावान है, जबकि कुछ आलोचक उसकी आस्था पर सन्देह करते हैं।[2] इसका सफलतापूर्वक प्रियप्रवास में निरूपण हुआ है।

(अ) राधा कृष्ण, गोप गोपिका प्रेम अभिव्यक्ति–हरिऔध जी न प्रियप्रवास' म राधा कृष्ण प्रेम का जो रूप प्रस्तुत किया है वह सात्विक है। दोनो के दाम्पत्य प्रेम का आदश रूप इस ग्रन्थ म प्राप्त है–

> हृदय चरण म तो मैं चढ़ा ही चुकी हूँ
> सविधि वरण की थी कामना और मेरी ।।[3]

राधा अपना सवस्व श्रीकृष्ण के लिए अर्पित कर चुकी हैं। हृदय में उन्हें पति रूप मे पाने की अभिलाषा शेष है। इसके पूण न होने पर आजीवन युवती राधा ने कौमार्य व्रत के सकल्प का निर्वाह किया है। यही नहीं कृष्ण के पद चिह्नों पर चलती हुई राधा व्रज प्रदेश की ही नहीं, नारी जाति की आराध्य रूप म मान्य हो गयी। राधा की कृष्ण के प्रति प्रेम की प्रबलता का प्रस्तुतीकरण कवि ने मनोवैज्ञानिक आधार पर किया है। नन्द और वृषभानु के पारिवारिक घनिष्ठ सम्बन्ध[5] और अबोधावस्था से ही श्रीकृष्ण का राधा के यहाँ क्रीडारत[6] रहने के कारण दोनो का मैत्री सम्बन्ध होना स्वाभाविक था। यही मत्री सम्बन्ध काल और अवस्था का सयोग पाकर प्रणय मे परिणत हो गया–

> युगलवय साथ स्नेह भी ।
> निपट नीरवता सह था बढ़ा ।
> फिर यही वर बाल सनेह ही ।
> प्रणय में परिवर्तित था हुआ ।।[7]

राधा प्रम पूणता प्राप्त कर दाम्पत्य सूत्र म बधन की प्रतीक्षा में थी कि इसी बीच एक विनाशकारी घटना घटी जिसमें कृष्ण को मथुरा ले जाने के लिए अक्रूर आ पहुँचे। सारा व्रज प्रदेश वियोग की आशका से विरहाग्नि म जलने लगा। राधा जो कृष्ण की अनन्य प्रिया हैं अत उनकी दशा और भी दयनीय हो गयी है।[8] कृष्ण मथुरा चले गये हैं किन्तु राधा का वियोग उन्हें निरन्तर अशान्त बनाये रखता है। उनके लिए जो सन्देश कृष्ण ने उद्धव के द्वारा भेजा है उसमे प्रेम का विपुल और गम्भीर रूप विद्यमान है।

> जो राधा वृषभानु भूप तनया स्वर्गीय दिव्यागना
> शोभा है व्रज प्रान्त की अवनि की स्त्री जाति की वश की।

होगी हा ! वह भग्नभूत अति ही मेरे वियोगाब्धि में।
जो हो सभव तात पोत बन के तो त्राण देना उसे ।।[8]

राधा और कृष्ण का यह प्रेम उदात्त होकर लोक सेवा, परोपकार और सर्वभूत हित में परिणत हो जाता है। व्यक्तिगत सुख भोग को दोनों हेय मानकर निष्काम कर्म में लीन हो गये हैं। एक ओर कृष्ण लोक हित रत होकर दुखी एवं पीडित प्राणियों की रक्षा, दुष्ट, कुकर्मियों को उनके दुष्कर्मों का फल देने आदि कार्यों में लगे रहते हैं, दूसरी ओर राधा रुग्ण जनों की सेवा, दीन अबलाओं और विधवाओं के दुखों का निवारण[9] कर कलहमुक्त घर में शांति स्थापित करती थीं। मानवेतर प्राणियों के प्रति भी उनका विशेष प्रेम था। वह चींटियों को आटा देती, पक्षियों को दाना पानी देती यहाँ तक कि कीटादि का भी विशेष ध्यान रखती थी।[10] राधा और कृष्ण एक दूसरे से दूर अवश्य हैं किन्तु दोनों के कार्य कलापों में इतनी समता है कि दूरी दृष्टिगत नहीं होती। वास्तव में आदर्श प्रेमी का व्यापार यही है कि वह प्रिय के अनुरूप उसके आचरण और कर्तव्यों को जीवन में स्वीकार करके वैसा ही जीवन व्यतीत करे। हरिऔध जी ने राधा कृष्ण के प्रेम का नवीन रूप प्रस्तुत करते हुए आदर्शों की स्थापना की है। दोनों का यह प्रेम युगानुकूल और अनुकरणीय है।

श्रीकृष्ण परम सुंदर अगणित कलाओं से युक्त और बाल्यावस्था में ही अनेक दुष्टों का संहार करने वाले हैं। इसलिए केवल राधा के ही नहीं, ब्रज धरा के लिए वे अत्यधिक लोक प्रिय हो गये हैं। उद्धव के आने पर अपनी व्यथा को कहने के लिए उनके पास पंक्तिबद्ध होकर ब्रजवासी खड़े रहते हैं। जहाँ एक गोप ने अपनी बात समाप्त नहीं कर पायी, दूसरे ने अपने व्यथित हृदय की व्यथा और कृष्ण के सद्गुणों की कथा का गान करना आरम्भ कर दिया।[11] इस प्रकार केवल राधा ही नहीं जितने भी गोप गोपी हैं, उन सबको कृष्ण अत्यन्त प्रिय हैं।

(आ) देश प्रेम एवं राष्ट्र प्रेम अभिव्यक्ति–ब्रज एवं मथुरा के समीप कालियनाग, तृणावर्त अघासुर, बकासुर के सदृश अनेक दुष्टात्मा समाज को आतंकित किये हुए थे। कवि ने कृष्ण चरित्र में वीर रस का समावेश करके स्वदेश और स्वजाति-प्रेम का आदर्श प्रस्तुत किया है। कालियनाग के द्वारा फैलाये गये विषाक्त वातावरण से आकुल व्याकुल जनता को त्राण देने के लिए कृष्ण यमुना में कूद पड़े और यत्नपूर्वक उसे वहाँ से अलग कर दिया। हरिऔध जी ने ऐसे स्थलों पर कृष्ण को अलौकिक रूप में नहीं

मानव को अपने कर्तव्यों के प्रति सचेष्ट करने के लिए मानव रूप मे प्रस्तुत किया है। उन्हें जन्मभूमि एव स्वजाति के प्रति अटूट प्रेम है। उसकी रक्षा के लिए उनकी नाड़ियों मे शेष अन्तिम रक्त की बूँद तक सर्वभूतहित करने के लिए दृढ सकल्प सन्निहित है।[12] दावानल प्रसग में कवि ने श्रीकृष्ण के द्वारा राष्ट्र प्रेम और राष्ट्रीय आन्दोलन का उच्च स्वर आलाप किया है–

अत सखा से यह श्याम ने कहा।
स्वजाति उद्धार का महान धर्म है।
चलो करें पावक में प्रवेश औ
सधेनु लेवें निज जाति को बचा॥[13]
एव–
बढ़ा करो वीर स्वजाति का भला।
अपार दोनों विधि लाभ है हमे।
किया स्वकर्तव्य उबार जो लिया।
सुकीर्ति पायी यदि भस्म हो गये॥[14]

सभी ग्वाल बाला को सम्बोधित करते हुए कृष्ण स्वजाति (स्वदेश) की रक्षा को ही महान् धर्म का उपदेश देते हैं। पाप कर्मियो द्वारा जो भी अनिष्ट हो रहे हैं, उनसे समाज की सुरक्षा करना किसी भी दशा म श्रेयस्कर है। स्वजाति, स्वधर्म, स्वराष्ट्र की रक्षा हेतु प्राणो का न्योछावर करने के लिए सम्पूर्ण ब्रजप्रदेश का आह्वान करते हैं।

यद्यपि हरिऔध जी गाँधी जी की अहिंसा के पक्षधर हैं किन्तु उनकी दृष्टि म क्षमा और अहिंसा उन्हीं के लिए है जो राष्ट्र की प्रगति मे किसी प्रकार की बाधा न उत्पन्न करें–

अवश्य हिंसा अति निंद्य कर्म है।
तथापि कर्तव्य प्रधान है यही।
न सद्म हो पूरित सर्प आदि से।
वसुन्धरा में पनपें न पातकी॥[15]
एव–
समाज उत्पीड़क धर्म विप्लवी।
स्वजाति का शत्रु दुरन्त पातकी।
मनुष्य द्रोही भव प्राणि पुंज का।
न है क्षमा योग्य वरच वध्य है॥[16]

मानवता, समाज, देश एव राष्ट्र के प्रति समर्पित कृष्ण-व्यक्तित्व सहज ही व्यक्ति को अपनी ओर आकृष्ट कर लेने वाला है। उनके

सदव्यवहार एव साहसी कार्यों से छोटी अवस्था मे ही व्रज भूमि के सच्चे नेता बन जाते हैं। राधा म जनहित की भावना इस प्रकार से भर जाती है कि उसके समक्ष प्रिय के सयाग का उनकी दृष्टि मे कोई महत्त्व नही रहता–

प्यार जीवें जगहित करें गेह चाहे न आवें।[17]

इस प्रकार प्रियप्रवास के नायक कृष्ण और नायिका राधा दोनो विषम परिस्थितियो म दृढता से धैर्य धारण किए हुए मानवीय सेवा म सलग्न हैं। यही मानवता का उच्च आदश है, यही देश और राष्ट्र प्रेम भी है।

(इ) विश्वप्रम-अभिव्यक्ति–हरिऔध जी के युग म जहाँ एक ओर देश और राष्ट्र के समक्ष अनेक चुनौतियाँ थीं, वहां विश्व बन्धुत्व के आन्दोलन म भी उन्ह आन्दोलित किया। प्रियप्रवास के कृष्ण परिवार जाति और प्राण प्रिय व्रजभूमि क हित का त्याग करके जगत् हित व्रत क व्रती बन जाते हैं–

जो होता है निरत तप मे मुक्ति की कामना से।
आत्मार्थी है न कह सकते हैं उसे आत्मत्यागी।
जी से प्यारा जगतहित औ लोक सेवा जिसे है।
प्यारी सच्चा अवनितल म आत्मत्यागी वही है।[18]

कवि जगत हित के समक्ष मोक्ष प्राप्त करने की कामना से की गयी तपस्या को भी तुच्छ और स्वार्थसिद्धि की सज्ञा देता है। प्रियप्रवास क कृष्ण पथ्वीतल क इतन बडे हितैषी हो गये हैं। कि उनक लिए विश्व का प्रेम प्राणा से बढकर हो गया है–

वे जी से है अवनिजन के प्राणियो के हितैषी।
प्राणो से है अधिक उनको विश्व का प्रेम प्यारा ॥[19]

व्रज की गोपियाँ एव राधा सभी यह समझ गय है कि श्रीकृष्ण को विश्वप्रम से बढकर ससार मे कुछ भी नहीं है। राधा, जो कृष्ण की अन्यतम प्रियतमा हैं उन्ह तो विश्व के समस्त पदार्थों म कृष्ण का रूप सौन्दय एव आचरण दृष्टिगोचर होता है। वे कृष्ण प्रेम को साधक सिद्ध करती हुई यह स्वीकार करती हैं कि मेरे अन्तराल म भी विश्व प्रेम जाग उठा है–

मेरे जी मे हृदय विजयी विश्व का प्रम जागा।
मैंने देखा परमप्रभु को स्वीय प्राणेश ही म ॥[20]

कवि की दृष्टि इतनी पैनी होती है उसकी दृष्टि से समाज या विश्व का कोई तत्त्व या तथ्य छूट नहीं सकता। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का

स्वर तत्कालीन समाज मे मुखरित हुआ था उसे कवि ने प्रियप्रवास के माध्यम से शब्दध्वनि करता हुआ जन जन की भावना तक पहुँचाने का प्रयास किया है। लोक विश्रुत, पुराणों एवं भक्तिकाल के ब्रह्म श्रीकृष्ण के चरित्र के माध्यम से एकरूपता समता और हृदय की उदात्तता से युक्त विश्व प्रेम का ऐसा चित्र प्रस्तुत किया है जिसे पढकर मानव को सच्चे आत्मस्वरूप का दर्शन होता है और व्यक्ति मानवजीवन का धर्म स्वीकार करता है। ग्रन्थ का अन्तिम छन्द राधा कृष्ण दोनो के उदात्त रूप को उजागर करता है एवं कवि ऐसे महापुरुषों के बार बार जन्म लेने की अभिलाषा विश्व कल्याण के लिए ही करता है–

> सच्चे स्नेही अवनिजन के देश के श्याम जसे।
> राधा जसी सदय हृदया विश्वप्रेमा अनुरक्ता।
> हे विश्वात्मा! भारत भुव के अंक में और आवें।
> ऐसी व्यापी विरह घटना किन्तु कोई न होवे ॥[2]

सौन्दर्य-अभिव्यक्ति

विश्व मानवता के अतीत की ओर दृष्टिपात करने से यह तथ्य प्रकाश मे आता है कि अनादिकाल से विभिन्न संस्कृति, सभ्यता और विचार धाराएं विविध रूपों मे सरिता प्रवाह सदृश प्रवाहित होती रही, किन्तु सौन्दर्य प्रिय मानव की इस दृष्टि में कोई परिवर्तन न हुआ। सृष्टि के आदि से मानव का सौन्दर्य प्रेमी होना इस बात की पुष्टि करता है कि सौन्दर्य प्रियता मानव का स्वाभाविक प्रवृत्ति है। सौन्दर्य वह तत्व है जो सरलता एवं प्रसन्नता प्रदान करने के साथ मन पर गम्भीर प्रभाव भी डालता है। सौन्दर्य तत्व के समान काव्य भी मानव हृदय मे सरसता का संचार करते हैं और उसे गम्भीरता से प्रभावित करते हैं। काव्य में सत्य शिव के साथ सुन्दरतम की अनिवार्यता पर बल दिया गया है। इसलिए काव्य में सौन्दर्य निरूपण मानव और प्रकृति के माध्यम से होता रहा है। प्रियप्रवास मे दोनों रूपों मे सौन्दर्य का चित्रण किया गया है।

(अ) मानवीय सौन्दर्य अभिव्यक्ति–इसके अन्तर्गत श्रीकृष्ण और राधा के अप्रतिम रूप सौन्दर्य का वर्णन यथास्थान कवि ने पूर्ण भावना एवं मनोयोग से किया है। श्रीकृष्ण गायें चराकर लौट रहे हैं उस समय उनकी आभा दर्शनीय है। उनकी कान्ति श्यामल नवल नीरद के समान सुकुमार एवं सरस है–

> अतसि पुष्प अलंकृत कारिणी।
> शरद नील सरोरुह रंजिनी।

नवल सुदर श्याम शरीर की।
सजल नीरद सी कल काति थी।।[22]

कृष्ण के अग प्रत्यग अत्यन्त आकर्षक[23] थे। अनेक वस्त्र आभूषणों से सुसज्जित[24] सहज ही मन को आकृष्ट कर लेने वाली मुस्कान एव उनका मदु भाषण[25] मधु वर्षिणी मुरली के मधुर स्वर[26] से युक्त श्रीकृष्ण ने किशोरावस्था मे ही सम्पूर्ण ब्रज को मोह लिया था। गोपियाँ कृष्ण को समक्ष पाकर अपलक दृष्टि से देखा करती थीं–

पलक लोचन की पड़ती न थी।
हिल नही सकता तन लोम था।
छबिरता बनिता सब यों बनी।
उबल निर्मित पुत्तलिका यथा।।[27]

भागवत के समान ही प्रियप्रवास मे श्रीकृष्ण के अनन्य सौन्दर्य का वर्णन है। कवि ने उनके कटि प्रदेश पर लहराते हुए पीताम्बर सुदर कधे मकराकृति कुण्डल श्वेतरत्न चन्द्रिका सा सुशोभित मोरमुकुट लम्बी भुजाएँ उन्नत वक्ष का मनमोहक और आकर्षक चित्र प्रस्तुत किया है–

विलसता कटि मे पट पीत था।
रुचिर वस्त्र विभूषित गात था।
+ + +
सबल जानु विलम्बित बाहु थी।
अति सुपुष्ट समुन्नत वक्ष था।।[28]

राधा पवन को दूती रूप मे प्रेषित करते समय उसको विविध प्रकार से समझाती हुई, मार्ग के विघ्न बाधाओं से मुक्त होकर, मथुरा की ओर बढने के लिए कहती है। साथ ही उसी से अपने प्रिय कृष्ण के सौन्दर्य उनकी आभा और सुकुमारता का परिचय कराती हैं। वह पवन दूती से कहती है कि मथुरा जाकर तू बादल सी कान्ति वाले प्रिय शरीर को देखोगी जिनके अद्भुत ज्योति वाले नेत्र एव सौम्य मुखमुद्रा मदु वचनो से सभी को सिंचित करते हुए तथा पीताम्बर धारण किए हुए सहज ही अपनी आभा से लोगों को आकृष्ट कर रहे होंगे। यही नहीं कवि ने लोहा को स्वर्ण बनाने वाले पारस पत्थर से कृष्ण की उपमा दी है–

तू देखेगी जलद तन को जा वहीं तदगता हो।
होंगे लोने नयन उनके ज्योति उत्कीर्णकारी।
+ + +
देते होंगे प्रथित गुण वे देख सदृष्टि द्वारा।
लोहा को छू कलित कर से स्वर्ण होंगे बनाते।।[29]

इस प्रकार कवि ने ईश्वर रूप कृष्ण को न प्रस्तुत करते हुए भी उनके प्रिय सौदय का निरूपण किया है। उनके अग प्रत्यगों की रचना एव उनकी समरूपता को चित्रित करने मे कवि पूण सफल है। रूप सौदय और उस पर धारण किय गये वस्त्र आभूषण तो कामदेव को लज्जित करन वाले है। ब्रज प्रदेश की युवक-युवतियाँ बालक वद्ध सभी श्रीकृष्ण के अपूव सौदय पर मोहित हो उनकी विरुदावली सबके सब सदैव गाते रहते हैं—

> रमणियाँ सब ल गहबालिका।
> पुरुष लेकर बालक मडली।
> कथन थे करते कल कठ से।
> ब्रज विभूषण की विरुदावली ॥[30]

साथ ही कृष्ण का पराक्रमी-शौय रूप, जिसमे उन्होने ब्रज म आने वाली प्रलयकारी अनेक भीषणताओ का डटकर सामना किया है और ब्रज जन के प्राणो की रक्षा की है। उनका प्राणो की परवाह न करके सदैव लोकहित में रत रहना उनके सौदय मे चार चाँद लगा देता है। श्रीकृष्ण अदभुत और अलौकिक शक्ति से युक्त हैं। कालीयनाग प्रसग' मे इसका मूर्तिमान स्वरूप दष्टिगोचर होता है। जब व वेणुनाद से मुग्ध करके स्वय बाहर दिखाई पडते हैं तो उस समय उनका वह सौदय अपूव ही लगता है। जहाँ सवत्र निराशा, विषाद का वातावरण फैला हुआ था, वहीं कृष्ण के दष्टिगत होते ही सभी आनन्द स विभोर हो गये—

> फणीश शीशोपरि राजती रही।
> सुमूर्ति शोभा मय श्री मुकुन्द की।
> विकीणकारी कल ज्योति चक्षु थे।
> अतीव उत्फुल्ल मुखारविन्द था ॥
> विचित्र थी शीश किरीट की प्रभा।
> कसी हुई थी कटि मे सु काछनी।
> दुकूल से शोभित कान्त काय था।
> विलम्बिता थी वन-माल कण्ठ म ॥[31]

श्रीकृष्ण को राधा अन्य गोप गोपिकाओ, नन्द यशोदा, यहाँ तक कि मानवेतर प्राणी के अत्यधिक प्रिय हैं। उनका सहज स्वभाव, सम्पूण ब्रज के हित में रत रहना एव अनुलनीय सौदय ब्रजवासियों के लिए जीवनदायी है। हरिऔध जी ने राधा क सौन्दय वणन म अपनी कलात्मकता का परिचय दिया है। उन्होंने उस अनेक विशेषणो स विभूषित किया है—

रूपोद्यान प्रफुल्ल प्राय कलिका राकेन्दु बिम्बना।
तन्वगी कल हासिनी सुरसिका क्रीडा कला पुत्तली।[32]
+ + +
सदभावातिरता अनन्य हृदया सत्प्रेम सपोषिका।
राधा थीं सुमना प्रसन्नवदना स्त्रीजाति रत्नोपमा।।[33]

कवि ने राधा के सौन्दय का वणन करते हुए, उन्हे स्त्री जाति के रत्न के रूप मे स्वीकार किया है। उनकी मुख मण्डल दीप्ति प्रफुल्लित होने वाली कली की आभा दे रही है, उनकी क्रीडा मदुभाषण मग नेत्र स्वर्णिम गात आह्लादक मुस्कान कुंचित अलकें एव भाव विभावो से पूरित चेष्टाए सभी को आनन्दित करने वाली हैं।

यह राधा का आरम्भिक प्रेम है किन्तु जब उद्धव राधा के पास कृष्ण का सन्देश लेकर आते हैं, उस समय राधा जिस वाटिका म विचरण करती हैं, वह वाटिका तपोभूमि सदृश आभावान हो जाती है। वियोग से व्यथित राधा एकान्त मे ही रहा करती है और तपस्वी सा जीवन बिताया करती है। उनके मखमण्डल में वियोग विधुरा होने के बाद भी इतनी आभा है कि वह अलिव द से आवत्त हैं। मुखमण्डल पर म्लानता अवश्य है फिर भी देविया जैसी दिव्यता विद्यमान है। उनके मुख मण्डल पर प्रफुल्लता और आकुलता का समन्वित रूप उनके रूप माधुय मे अलौकिक सौन्दय का आभास दिलाता है–

प्रशान्त म्लाना वषभानु कन्यका।
सुमूर्ति देवी सम दिव्यतामयी।
विलोक हो भावित भक्ति भाव स।
विचित्र ऊधो उर की दशा हुई।।
अतीव थी कोमल कान्ति नेत्र की।
परन्तु थी शान्ति विषाद अंकिता।
विचित्र मुद्रा मुख पद्म की मिली।
प्रफुल्लता आकुलता समन्विता ।।[34]

ग्रथ के अन्तिम भाग मे राधा का प्रेम कृष्ण के प्रति उदात्त होकर उनके सौन्दय को और भी बढ़ा देता है जब उनका लक्ष्य मात्र अनाथा वद्धों और विधवाओं की सेवा करना ही रह जाता है।

राधा और कृष्ण दोना के बाल एव यौवन के रूप सौन्दय और उनकी कत्तव्य परायता उनके साहस धय आदि गुणों से समन्वित चरित्र को प्रस्तुत कर कवि ने अपनी सौन्दय प्रियता एव सहृदयता दोनो का परिचय दिया है। इस प्रकार कवि मानवीय सौन्दय वणन म पूण सफल है।

(आ) प्राकृतिक सौन्दय अभिव्यक्ति–प्रकृति के प्रागण म ही मानव का जन्म हुआ है, उसी मे उसका लालन पालन हुआ है और वह उसी मे फला फूला है। प्रकृति के अनेक रूपो से मानव को आश्चय होता है। वह कभी कभी शत्रुवत् व्यवहार करती हुई प्रतीत होती है और कभी कभी विविधताओ और विचित्रताओ से सहज ही मन को आकृष्ट कर लेती है। मानवता के विकास के साथ मनुष्य ने प्रकृति को सहायिका रूप मे स्वीकार किया। भारत देश का प्राकृतिक एव भौतिक स्वरूप विचित्रताओ से भरा है। उत्ताल तरगो से युक्त लहराता हुआ सागर तथा उत्तर म सहस्रो मील लम्बी पवत शृखलाएँ एव उन पर कल कल निनादित झरने, म थर और तीव्र वेग से प्रवाहित हैं।

नदियो द्वारा सिंचित हरीतिमा स उन्मत्त लहराती हुई सस्य श्यामला धरती सहज ही *मन मे अगणित भावनाओ का सचार करती है। यही कारण* है कि आदिकाल से लेकर अब तक के कवियो न मुक्त कण्ठ से प्रकृति के सुकुमार दश्यो का चित्र प्रस्तुत किया है। अ य कवियो की भाँति हरिऔध जी भी प्रकृति के नाना रूपों एव विविधताओ से प्रभावित हुए हैं, जिसकी अभिव्यक्ति प्रियप्रवास म हुई है। कवि न तो प्राचीन स्तुतिपरक परिपाटी को छोडकर ग्र थ का श्रीगणश ही प्रकृति चित्रण से किया है।"[35] इसी से उसके अ तराल को प्राकृतिक उपादानो ने कितना आकृष्ट किया है, स्पष्ट हो जाता है। सम्पूण ग्र थ प्रकृति की विविधताओ से ओत प्रोत है। कवि ने प्रात, शरद, वस त, वर्षा, सरोवर, कमल आदि जो सहज ही मन को लुभा लेने वाले हैं, उनका आकषक चित्र प्रस्तुत किया है। प्रकृति के प्रति प्रेम, कवि क व्यक्तित्व की सबसे बडी विशेषता है। प्रकृति के विविध रूपा का विस्तत विवेचन अगल खण्ड मे किया गया है। प्रकृति के अदभुत एव अपूव सौन्दय का सहज निरूपण कवि क अ तजगत भाव भूमि का सहज ही परिचय करा दता है। जन्म से लकर अ त तक क सम्पूण जीवन की सहचरी प्रकृति क साथ ऐसा भाव स्वाभाविक ही है।

भाव और रस अभिव्यक्ति

भाव मानव हृदय क अनुभवजन्य अभिन्न अग हैं, यह मनुष्य के अन्तराल की स्वाभाविक वत्ति हैं जिनक रूप अन त हैं। भाव इन्द्रियजन्य, प्रभावात्मक और गुणात्मक होत हैं। इनका अनुभव विभाव अनुभाव सचारी-भाव द्वारा होता है। काव्य म वर्णित मानसिक विकृतियो, सवेदनाओ, दृष्टा के दृश्यों, आश्चयचकित करने वाले दृश्यों एव सौन्दय के उपकरणो को देख

कर विभिन्न प्रकार के भाव उद्दीप्त होते हैं। यही विविध भाव अनेक रसों की सृष्टि करते हैं।

संस्कृत आचार्यों ने काव्य सन्दर्भ में विभिन्न सम्प्रदायों का प्रतिपादन किया है। सभी आचार्य अपने-अपने सम्प्रदायों की विशिष्टता स्वीकार करते हैं। आचार्य भरतमुनि और आचार्य विश्वनाथ ने रस की महत्ता को स्वीकार करते हुए उसको काव्य की आत्मा कहा है। 'वाक्यम् रसात्मकं काव्यं' के आधार पर काव्य में रसात्मकता अनिवार्य है। रसों का अनुभव हृदय में प्राप्त स्थायी भावों के उद्दीप्त होने से होता है। वे इस प्रकार हैं–रति (शृंगार) हास (हास्य) शोक (करुण), क्रोध (रौद्र), उत्साह (वीर) भय (भयानक) जुगुप्सा (वीभत्स) विस्मय (अद्भुत) निर्वेद (शान्त), वत्सल (वात्सल्य)।

इन सभी भावों एवं उनसे उद्दीप्त रसों में प्रियप्रवास में रतिभाव (शृंगार रस) की अधिक व्यंजना हुई है। शृंगार रस के संयोग और विप्रलम्भ–दोनों रूपों में विप्रलम्भ शृंगार का रूप प्राप्त है। वियोग शृंगार के–पूर्वराग मान प्रवास और करुण चार भेदों में प्रियप्रवास में प्रवास की प्रधानता है। प्रिय का किसी कारणवश, शापवश अथवा सम्भ्रम देशान्तर गमन (प्रवास) आश्रय के हृदय में वियोग शृंगार की उत्पत्ति करता है। चूँकि प्रियप्रवास का आरम्भ ही सर्केता से होता है और कृष्ण के प्रवास की दशा में प्रियप्रवास महाकाव्य प्रारम्भ से ही आश्रय के तज्जन्य विचारों से आपूरित है। इसलिए निश्चित ही अधिकांश स्थलों पर प्रवास के दर्शन होते हैं। अन्यत्र वर्ण्य विषय के सम्यक् निर्वाह हेतु परिस्थितियों के अनुसार अन्य रसों का भी प्रियप्रवास में समुचित सन्निवेश है।

(अ) संयोग शृंगार–प्रियप्रवास में अक्रूर के आगमन का समाचार मिलने से पूर्व संयोग शृंगार का सुन्दर चित्र दृष्टिगोचर होता है। सायंकालीन अनुरंजनकारिणी लालिमा कृष्ण की रूप माधुरी रसवर्षिणी वंशी, उनकी मनमोहक मुस्कान एवं उनके बंकिम नेत्र–सभी कुछ मन मोह लेने वाले हैं। कृष्ण के रूप लावण्य और क्रिया कलापों पर समस्त व्रज मण्डल अपना सर्वस्व न्योछावर कर रहा है। व्रज बालायें मूर्तिवत अनिमेषदृष्ट्या कृष्ण की रूप माधुरी का निहारती रहती हैं–

मुदित गोकुल की जन मण्डली।
जब ब्रजाधिप सम्मुख जा पड़ी।
निरखने मुख की छवि यों लगी।
तृषित चातक ज्यों घन की घटा॥

पलक लोचन की पडती न थी।
हिल नहीं सकता तन लोम था।
छविरता वनिता सब यो बनी।
उपल निर्मित पुत्तलिका यथा।।''[36]

श्रीकृष्ण के अपरूप रूप के दर्शन में इतना आनन्द है, जो मुग्धकारी एवं वर्णनातीत है। जो बाला उन्हें देखती है, कुतूहल और विस्मय में पडकर तृण तोडने लगती है। मुरली की ध्वनि के साथ अन्य वाद्य-यन्त्र निनादित होकर सम्पूर्ण ब्रज को विमुग्ध कर रहे हैं।[37] इस प्रकार प्रियप्रवास के प्रारम्भ में संयोग शृंगार की छटा सर्वत्र दर्शनीय है।

(आ) वियोग या विप्रलम्भ शृंगार–जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है श्रीकृष्ण के प्रवास के कारण सम्पूर्ण 'प्रियप्रवास' वियोग वेदना से आपूरित है। राधा, यशोदा नन्द, गोप गोपियों, गायों आदि के लिए प्रिय कृष्ण की अनुपस्थिति अत्यधिक कष्टकारी है। इस ग्रन्थ के चार, छ चौदह पन्द्रह सोलह एवं सत्रहवें सर्गों में गोप गोपिकाओं एवं राधा की विरह-व्यथा का तथा नौ, चौदह एवं सोलहवें सर्ग में कृष्ण की वेदनानुभूति वर्णित है। राधा ने अभी प्रिय प्रवास का समाचार ही सुना है कि उनकी दशा अत्यन्त दयनीय हो गयी है–

'विकसिता कलिका हिमपात से।
तुरत ज्यों बनती अति म्लान है।
सुन प्रसंग मुकुन्द प्रवास की।
मलिन त्यों वृषभानुसुता हुई।।''[38]

राधा के लिए प्रकृति अनिष्टकारी प्रतीत होने लगी है। प्राची की उषा-लालिमा में युवती के रक्त वर्ण का आभास होने लगा है अथवा ऐसा लगता है मानो दिशाओं में आग की ज्वाला फूट रही है–

'क्षितिज निकट कैसी लालिमा दीखती है।
वह रुधिर रहा है कौन सी कामिनी का।
विहग विकल से हो बोलने क्यों लगे हैं।
सखि सकल दिशा में आग सी क्यों लगी है।।'[39]

हरिऔध जी ने परम्परागत वियोग की दशाओं–अभिलाषा, चिन्ता, गुणकथन, उद्वेग प्रलाप व्याधि, जड़ता, मरण को प्रस्तुत नहीं किया है किन्तु पवन दूती प्रसंग में अप्रत्यक्ष रूप में वियोग विधुरा राधा के कथन और कथनों में ये दशाएँ दृष्टिगोचर होती हैं। राधा की यह अभिलाषा है कि यदि पवन अपने क्रिया कलापों द्वारा उनको मेरा स्मरण करा दे तो

निश्चित ही उनकी दृष्टि इधर घूमेगी। वह पवन से प्रार्थना करने लगती हैं। '40 राधा का शरीर वियोग की व्यथा से व्याधियुक्त होकर पीला पड गया है। पवनदूतो के माध्यम से राधा स्वव्याधिग्रस्ता दशा का ज्ञान प्रिय को कराना चाहती हैं–

कोई पत्ता नवल तरु का पीत जो हो रहा हो।
तो प्यार के दृग युगल के सामने ला उसे ही।
धीरे-धीरे सभल रखना औ उन्हें यो बताना।
पीला होना प्रबल दुख से प्रोषिता सा हमारा।। 41

इन प्रसगो म राधा की विरह वेदना अत्यधिक बढी हुई और प्रिय कृष्ण से मिलन की उत्कट अभिलाषा दृष्टिगोचर होती है, जिसमे स्त्र्युचित स्वाभाविकता, वाकपटुता और मिलन की युक्ति से भिन्न राधा के दर्शन होते हैं। पवन द्वारा भेजे गये सन्देश म उसका विरहिणी रूप लुप्त सा हो जाता है, वह एक चतुर रमणी प्रतीत होती है, क्योकि उनम व्यथित हृदय के गाम्भीर्य का अभाव है। इसीलिए वियोग की सभी दशायें भी यहाँ व्यक्त नही हो सकीं।

'विरहिणी राधा का उज्ज्वल एव उदात्त रूप उद्धव सवाद मे उभरता है। यह प्रियप्रवास' मे पूर्ववर्ती काव्यो से कही अधिक उदार कारुणिक लोकहितरत और विश्व मगल की भावना से ओत प्रोत है। यहाँ वह न तो जयदेव एव विद्यापति की राधा की तरह कुसुमाकर के बाणो स बिद्ध होकर विलास कामना स अपूर्ण रह जाने पर व्यथित एव बेचैन दिखाई देती है न सूरदास नददास आदि कृष्ण भक्त कवियो की राधावत अहर्निश अश्रु नही बहाती हुई हा कृष्ण! हा कृष्ण! की रट लगाती रहती हैं और न रात दिन साकेत की उर्मिला की तरह करवटें बदलती हुई अपनी विरह वेदना को व्यक्त करती है, अपितु यहाँ राधा विश्व प्रेम, विश्व मत्री एव करुणा की उदार मूर्ति के रूप म दिखाई देती है।"42 उद्धव द्वारा प्रियतम कृष्ण का सन्देश पाकर राधा पर ऐसा प्रभाव पडता है कि उसे निखिल विश्व म प्रियतम की व्याप्ति का आभास होने लगता है–

'मैंने की हैं कथन जितनी शास्त्र विज्ञात बातें।
वे बातें हैं प्रकट करती ब्रह्म है विश्व रूपी।
व्यापी है विश्व प्रियतम म विश्व म प्राण प्यारा।
यो ही मैंने जगत पति को श्याम मे है विलोका।।' 43

राधा को प्रकृति के विविध रूपो–तारा कुजा, भ्रमर, कमल उषा की लालिमा, वर्षा आदि म श्रीकृष्ण की रूप माधुरी दृष्टिगोचर होने

लगती है ।[44] राधा का वियोग इतना उदात्त हो जाता है कि वह लोक-सेवा करके ही अपने को सफल प्रेमी स्वीकार करती है । वह प्रीतम श्रीकृष्ण के जीवन की अभिलाषा करती हुई उन्हें भी जगत हित मे प्रवत्त रहने की इच्छा प्रकट करती है ।[45] प्रियप्रवास की राधा ने मानव कल्याण म ही लीन नहीं है, अपितु उन्होंने कीट पतग, पशु पक्षी सभी के दु खो को दूर करना ही अपना लक्ष्य बना लिया है । इसलिए वह ब्रजधरा की आराध्या और नारी जगत की आदर्श बन गयी हैं ।

कवि गोप गोपी-विरह वणन म परम्परावादी हो गया है । यहाँ गोप गोपियाँ प्रकृति के मनोहारी रूपो को देख कृष्ण की केलि-क्रीडाओ का स्मरण कर बिलखती हैं । उन्हें अपने प्रियतम कृष्ण पर ऐसा दृढ प्रेम है कि असम्भाव्य घटनाओ के घटित होने के बाद भी वे किसी दशा म कृष्ण को छोडने के लिए तयार नहीं हैं । कृष्ण की वह रूप माधुरी प्राणिमात्र के अन्तस्तल म समायी हुई है । नत्रो म भी वही मूर्ति रमी है तब उस भला कोई कैसे ओझल कर सकता है—

जो प्यारा है अखिल ब्रज के प्राणियो का बडा ही ।
रोमो की भी अवलि जिसके रग ही मे रगी है ।
कोई देही बन अवनि में भूला कसे उसे दे ।
जो प्राणों म हृदयतल मे लोचनो म रमा है ।।[46]

गोपियाँ कृष्ण को सवव्यापी मानते हुए कहती हैं कि उनके अभाव म ब्रजभूमि मृतप्राय होती जा रही है । वे कहती हैं कि हे उद्धव आप कोई उपाय करके इन्हें जीवन दान देने की कृपा करें ।[47] इस प्रकार गोपियो की विरह व्यथा अत्यन्त मार्मिक और कारुणिक हो जाती है । एक गोपी अपने वियोग की व्यथा को पुष्प और उस पर मडराने हुए भौंरे से कहती है और जब भौंरा उसकी बातो की उपेक्षा करता हुआ अपनी मस्ती म गुन गुनाता रहता है तो वह उसकी भर्त्सना करती हुई, उस ढीठ, चपल और स्वार्थी कहती है—

अयि अलि तुझम भी सौम्यता हूँ न पाती ।
मम दुख सुनता है चित्त देके नहीं तू ।।
अति चपल बडा ही ढीठ औ कौतुकी है ।
थिर तनक न होता है किसी पुष्प म भी ।।[48]

विरह की दशा म वियोगी की दशा असामान्य हो जाती है । प्रकृति के उपादान कभी दुखद और कभी सहानुभूति प्रदान करते हुए प्रतीत होने हैं । गोपी को कोकिला का स्वर अचानक सुनाई पडता है किन्तु उस निज-

वत कोकिला भी दुःख विषाद से पीड़ित दिखाई पड़ती है। इस प्रकार हरिऔध जी वियोग वर्णन में नवीन मूल्यों का स्वीकार करते हुए कहीं कहीं परम्परावादी हो गये हैं। ग्रंथ में आद्यन्त वियोगपूरित व्यथाओं से 'प्रियप्रवास' की सार्थकता में किसी प्रकार का सन्देह नहीं रह जाता। उन्होंने राधा एवं गोपियों की विरहपूर्ण व्यथा के अनूठे चित्र अंकित किये हैं। उनकी विरहिणियाँ अत्यन्त आकुल व्याकुल और बेचैन हैं।[49]

(इ) वात्सल्य–'वात्सल्य भाव मनुष्य की स्वाभाविक एवं मूल प्रवृत्ति है। चूँकि इसका सम्बन्ध आत्म स्वरूप अपनी सन्तान से है, इसलिए सहज ही मानवमन इसमें विभोर हो जाता है। प्राचीनकाल से साहित्य में इसके प्रयुक्त होने पर भी इसे 'रस' की पंक्ति में नहीं रखा गया, यह आश्चर्य की बात है। हिन्दी के वर्तमान आलोचक डा० नगेन्द्र जी इसकी रसवत्ता स्वीकार करते हुए कहते हैं–' वात्सल्य का पक्ष निश्चय ही अधिक प्रबल है। वात्सल्य भाव मातवृत्ति या मनोमय अनुभव है और मातवृत्ति निश्चय ही जीवन की अत्यन्त मौलिक वृत्ति है। अतः वात्सल्य के रसत्व का निषेध सम्भव नहीं है, न उसका शृंगार आदि में अन्तर्भाव उचित है और न केवल भाव कोटि तक ही उसका विकास मानना ठीक होगा।"[50]

वत्सल भाव को रस रूप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय वात्सल्य सम्राट सूर को है। हरिऔध जी सूर के समान वात्सल्य रस के चित्रण में पूर्ण सफल हैं। उन्होंने वात्सल्य को शृंगार की भाँति संयोग वियोग दोनों रूपों में प्रस्तुत किया है। प्रियप्रवास के तृतीय सर्ग में संयोग वात्सल्य का रूप प्राप्त है। कृष्ण का मथुरा गमन निश्चित हो जाने पर वियोग की आशंका ने नन्द यशोदा दोनों को व्यथित कर दिया है–

जब कभी बढ़ती उर की व्यथा।
निकट जा करके तब द्वार के।
वह रहे नभ नीरव देखते।
निशि घटी अवधारणा के लिए।।

× × ×

हरि न जाग उठें इस सोच से।
सिसिकतीं कभी वह थीं नहीं।
इसलिए उनका दुख वेग से।
हृदय था शतधा अब हो रहा।।[51]

इस संयोग में भी माता पिता को सुखानुभूति नहीं हो पाती। सूर की यशोदा बालकृष्ण के अनेक क्रिया-कलापों पर हजारों खुशियाँ न्यौछावर

करती थी, पर तु हरिऔध की यशोदा को यह सौभाग्य न प्राप्त हो सका, वे तो सयोग म भी वियोग की तरह रात के तारे गिन रही हैं।

कृष्ण के मथुरा प्रस्थान करने पर यशोदा की विक्षिप्तवत् दशा हो जाती है। वह माग में बालका की सुख सुविधा का ध्यान रखने के लिए नन्द को सचेत करती हुई कहती हैं–

लख कर मुख सूखा सूखता है कलेजा।
उर विचलित होता है विलोक दुखों को।
शिर पर सुत के जो आपदा नाथ आयी।
यह अवनि फटेगी औ समा जाऊँगी मैं ॥[52]

अक्रूर कृष्ण और बलराम के साथ नद को भी ले जाते हैं। नन्द बाबा जब मथुरा से एकाकी लौटते है तो उनकी दशा वन के लिए राम को भेज कर लौटे सुमत जी की सी होती है। अकेला पति को आया हुआ देख कर यशोदा का हृदय अत्य त व्याकुल हो उठता है और वे विलाप करने लगती हैं। उनके इस विलाप म जो कसक, टीस और करुणा भरी हुई है, उससे पाषाण भी द्रवित हो उठते हैं–

प्रिय पति वह मरा प्राण प्यारा कहाँ है।
दुख जलधि निमग्नता का सहारा कहाँ है।
अब तक जिसको मैं देख के जी सकी हूँ।
वह हृदय हमारा नत्र तारा कहाँ है ॥[53]

(ई) वात्सल्य वियोग म माता का विलाप करुणा का दृश्य प्रस्तुत कर देता है। माता रोती विलखती हुई पुन कृष्ण को वृद्धा के सहारे, प्राणा के प्यारे गृह शोभा और नत्र के तारे कहती है। अब प्रिय पुत्र के वियोग में उन्हें जीवन की आशा भी जाती रही। उनको मात्र यही खेद मारे डाल रहा है कि मरन के पहले एक बार पुन का दशन कर पातीं–

कसे होवे अलग तुमसे आज भी मैं बची हूँ।
जा मैं ही हूँ समझ न सकी तो तुम्हे क्या बताऊँ।
हाँ जीऊँगी अब न पर है वेदना एक होती।
तेरा प्यारे वदन मरती बार मैंने न देखा ॥[54]

सन्देश लेकर उद्धव के जाने पर कृष्ण का न आना निश्चय मानकर माता यशोदा का हृदय विदीर्ण हो जाता है। कृष्ण के चले जाने के बाद पुन वापस न लौटने के कारण माता शारीरिक, मानसिक दोनो रूपा म अत्यधिक शिथिल हो गयी हैं। उनके नेत्रा की ज्योति जाती रही है। व काना स पुत्र की मधुर वाणी के अतिरिक्त कुछ सुन नहीं सकतीं। कृष्ण की

क्रीडाएँ, गोपियों के प्रति प्रेम समय समय पर किये गये अनेक अलौकिक साहसी कार्यों आदि का वर्णन करती हुई यशोदा वियोग वात्सल्य की सरिता प्रवाहित करती है परम ज्ञानी उद्धव भी उसी में डुबकियाँ लगाने लगते हैं। इस प्रकार कवि द्वारा प्रस्तुत वात्सल्य मार्मिक और हृदयस्पर्शी है। हरिऔध जी के *प्रियप्रवास में भावुकतावश वियोग वात्सल्य में करुण रस का सा* आभास होने लगता है।

(उ) वीर रस—जब किसी पात्र में दीनों की रक्षा या धर्म की रक्षा के लिए 'उत्साह' उत्पन्न होकर क्रियाशील हो जाता है, तब वीर रस की निष्पत्ति होती है। प्रियप्रवास में दानवीर, धर्मवीर, युद्धवीर और दयावीर—चारों रूपों के दर्शन होते हैं।

(क) दानवीर—यमुना में कालियानाग का विष इस प्रकार फैल गया कि उसका जल ग्रहण करने पर भी कोई प्राणी जीवित नहीं बचता था। इससे सम्पूर्ण ब्रजप्रदेश भयाकुल रहता था। ब्रज की यह दुर्दशा देख दृढ़व्रती श्रीकृष्ण संकल्प बद्ध हो कहने लगे कि जब तक मेरे श्वास चलते रहेंगे धमनियों में रक्त का एक बूँद शेष रहेगा, तब तक मैं सर्वभूत हित में लगा रहूँगा—

> प्रवाह होते तक शेष श्वास के।
> स-रक्त होते तक एक भी शिरा।
> स-शक्त होते तक एक लोम के।
> किया करूँगा हित सर्वभूत का।।[55]

(ख) *दयावीर—श्रीकृष्ण ब्रजवासियों की दुर्दशा न देख सके।* अपने उत्साह से उनके दुखों के निवारण के लिए कदम्ब पर चढ़कर हाथ में मुरली लिए हुए यमुना में कूद पड़े। यमुना का जल उनके कूदने से प्रकम्पित हो उठा और आकाश तक वह ध्वनि गूँज उठी—

> कँपा सु शाखा बहु पुष्प का गिरा।
> पुन पड़े कूद प्रसिद्ध कुण्ड में।
> हुआ समुद्भिन्न प्रवाह वारि का।
> प्रकम्पकारी रव व्योम में उठा।।[56]

(ग) धर्मवीर—आगत विपत्ति से बचाने के लिए श्रीकृष्ण परम उत्साही हो स्वजाति की रक्षा और विपत्ति में उनकी सहायता को ही सर्वप्रधान धर्म घोषित करते हुए कहने लगे कि त्याग के बिना न हम किसी कार्य में सफलता पा सकते हैं और न ही त्याग के बिना मानवयोनि की सार्थकता ही सिद्ध होती है—

विपत्ति से रक्षक सर्वभूत का।
सहाय होना असहाय जीव का।
उबारना संकट से स्वजाति का।
मनुष्य का सर्वप्रधान धर्म है।
बिना न त्यागे ममता स्वप्राण की।
बिना न जाये ज्वलदाग्नि में पड़े।
न हो सका विश्व महान कार्य है।
न सिद्ध होता भव जन्म-हेतु है।।[57]

(घ) युद्धवीर–श्रीकृष्ण ने यह घोषणा करते हुए– पातकी, दुष्ट और समाज उत्पीड़क के लिए क्षमा नहीं है'–व्योमासुर को ललकारते हुए सावधान किया। व्योम ने कृष्ण पर प्रहार किया। श्रीकृष्ण ने उसी की यष्टि छीनकर उस पर प्रहार करके उसकी लीला समाप्त कर दी–

अपूर्व आस्फालन साथ श्याम ने।
अतीव लाठी वह यष्टि छीन ली।
पुनः उसी के प्रबल प्रहार से।
निपात उत्पात निकेत को किया।।[58]

(ङ) रौद्र रस–रौद्र रस का संचार शत्रु अथवा विपक्षी के कार्य, अपकार अथवा गुरुजनों की निन्दा होने के कारण उत्पन्न क्रोध से होता है। इसका स्थायी भाव क्रोध है। श्रीकृष्ण की दर्पयुक्त बातें सुनकर पराक्रमी व्योम अत्यधिक क्रोधित हो उठा और उसने उन पर प्रहार कर दिया–

स दर्प बातें सुन श्याम मूर्ति की।
हुआ महा क्रोधित व्योम विक्रमी।
उठा स्वकीया गुरु दीर्घ यष्टि को।
तुरन्त मारा उसने व्रजेन्द्र को।।[59]

कवि ने श्रीकृष्ण द्वारा दुष्टों का संहार किये जाने के प्रसंगों मे अनेक स्थलों पर सफलतापूर्वक रौद्र रस का सफल चित्र प्रस्तुत किया है।

(ए) भयानक-रस–भयानक रस का उद्रेक किसी भयप्रद वस्तु या घटना के वर्णन एवं उनसे भयभीत व्यक्ति की वाणी, चेष्टा आदि के उल्लेख द्वारा होता है। प्रियप्रवास में कालिय-दमन प्रसंग दावानल-प्रसंग एवं अन्य दुष्टों की अपकारिता क्रूरता के परिणामस्वरूप अनेक स्थलों पर भयावह दृश्य देखा जा सकता है। सर्वप्रथम रात्रि के भीषण वातावरण का वर्णन करते हुए कवि ने तृतीय सर्ग में ही इसकी सुन्दर अभिव्यंजना की है–

इस भयंकर घोर निशीथ में।
विकलता अति कातरतामयी।
विपुल थी परिवर्द्धित हो रही।
निपट नीरव नंद निकेत में॥[60]

प्रलम्ब नामक सर्प, जो बड़ा उपद्रवी था, अपने विषाक्त फुंकार से ब्रजवासियों को आतंकित कर अनेक पशुओं का नाश कर रहा था। उसे देखकर भयातुर हो प्राणी इधर उधर भाग रहे थे—

उन्हें वहीं से दिख पड़ा वहीं।
भयावना सर्प दुरंत काल सा।
दिखा बड़ी निष्ठुरता विभीषिका।
मृगादि का जो करता विनाश था।
उसे लख पा भय भाग थे रहे।
असंख्य प्राणी वन में इतस्ततः।
गिरे हुए थे महि में न चेत हो।
समीप के गोप सधेनु मण्डली॥[61]

(ए) अद्भुत रस—किसी व्यक्ति या वस्तु के असाधारणत्व के कारण मन में विस्मय (आश्चर्य) भाव जागृत होने से अद्भुत रस का संचार होता है। गोवर्धन धारण प्रसंग में कवि ने लौकिक ढंग से श्रीकृष्ण के जिस साहस, शौर्य पराक्रम और गुणवत्ता का परिचय दिया है, वह निश्चित रूप से विस्मयकारी है। जितनी पर्वत की गुफाओं में ब्रजवासियों का उन्होंने पहुँचाया था उन सभी लोगों के सहायतार्थ गुहाओं में पहुँचे रहते थे। उनके यत्न और सुप्रबन्ध से प्रसन्न एवं सुरक्षित गोप जन परस्पर वार्ता करते हुए कहने लगे मानो कृष्ण ने पर्वत को उँगली पर धारण कर लिया है—

लख अपार प्रसार गिरीन्द्र में।
ब्रज-धराधिप के प्रिय पुत्र का।
सकल लोग लगे कहने उसे।
रख लिया उँगली पर श्याम ने॥[62]

(ओ) वीभत्स रस—वीभत्स रस का संचार जुगुप्सा उत्पन्न करने वाली वस्तुओं के दर्शन श्रवण वर्णन आदि से होता है। यद्यपि हरिऔध जी ने घृणास्पद भावों और दृश्यों का निषेध किया है फिर भी कहीं कहीं ऐसे दृश्य देखे जा सकते हैं—

जला किसी का पग पूँछ आदि था।
पड़ा किसी का जलता शरीर था।

जले अनेकों जलते असख्य थे।
दिगन्त था आर्त्त निनाद से भरा ॥[63]

इसमे जले हुए घर, पूछ शरीर और जलते हुए अश घणा या जुगुप्सा भाव को उद्दीप्त करते हैं। इसलिए यहाँ वीभत्स रस है।

(ओ) शान्त रस–शान्त रस का सचार ससार की असारता, नश्वरता या ईश्वर के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त होने से चित्त को शान्ति मिलने पर होता है, जिसके मूल म विरक्ति भावना काय करती है। इसका स्थायी भाव निर्वेद है। 'प्रियप्रवास' म शान्त रस सचरित करने वाले कई छन्द हैं किन्तु परम्परागत वणन स उसका रूप भिन्न है। उ होने भक्ति की चरम परिणति लोक कल्याण और लोक सेवा में मानी है। उनकी दृष्टि समाज से विमुख होने की नहीं है–

विश्वात्मा जो परम प्रभु है रूप तो हैं उसी के।
सारे प्राणी सारे गिरि लता वेलियाँ वक्ष नाना।
रक्षा पूजा उचित उनका यत्न सम्मान सेवा।
भावोपेता परम प्रभु की भक्ति सर्वोत्तमा है ॥[64]

कवि का विचार है कि सम्पूर्ण विश्व का कण कण ब्रह्म का रूप है, इसलिए सारे प्राणी, पवत सरिता, वक्ष–उनकी रक्षा और सेवा ही परम भक्ति है और उसी म शान्त रस का उद्रेक होता है। परमप्रभु की लीलामयी जगत के रूप म सम्पूर्ण सत्ता का स्वीकार करते हुए कवि प्रेमपूर्ण मधुर, पवित्र उच्च अनोखी, आनन्ददायक और आकषक मानता है। प्रभु के इस स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर हृदय म सहज ही शान्त रस धारा प्रवाहित हो उठती है–

प्यारी सत्ता जगत गत की नित्य लीला मयी है।
स्नेहोपेता परम मधुरा पूतता म पगी है।
ऊँची न्यारी सरल सरसा ज्ञान गर्भा मनोज्ञा।
पूज्या माना हृदयतल की रजिनी उज्ज्वला है ॥[65]

(अ) हास्य रस–किसी व्यक्ति या वस्तु की विकृत आकृति विचित्र वेश भूषा, चेष्टाएं आदि स जो विनोद का भाव उत्पन्न होता है, वह 'हास' कहलाता है जिसके परिपुष्ट होने पर हास्य रस का सचार होता है [illegible] में ऐसे दृश्य न के बराबर हैं, इसीलिए कम भग [illegible] किया जा रहा है। श्रीकृष्ण गोप ग्वालों को मनोरजन करने के लिए [illegible] विविध

देवी देवताओं की कथाएँ सुनाया करते थे और सभी लोग आनन्द विभोर होते थे–

> वह विविध कथाएँ देवता दानवों की।
> अनुदित कहते थे मिष्टता मंजुता से।
> वह हँस हँस बातें थे अनूठी सुनाते।
> सुखकर तरु छाया में समासीन हो के ॥[66]

(अ) करुण रस–प्रिय व्यक्ति या इष्ट के नाश होने और अप्रिय या अनिष्ट वस्तु के प्राप्त होने से हृदय को क्षोभ या क्लेश होता है जिससे शोक भाव का उदय होता है और इसी भाव से करुण रस की अभिव्यंजना होती है। 'प्रियप्रवास' में वात्सल्य और विप्रलम्भ श्रृंगार का ऐसा रूप प्रस्तुत किया गया है जिससे कि पाठक को करुण रस का भ्रम हो जाता है। करुण रस इष्ट के नाश या अनिष्ट के कारण उद्दीप्त होता है पर तु प्रिय प्रवास में ऐसा कोई स्थल नहीं है। यही नहीं करुण का स्थायी भाव शोक है, इसमें सबको शोक के स्थान पर स्नेह की अजस्र धारा प्रवाहित है। तृतीय सर्ग में वियोग की आशंका से सप्तम सर्ग में यशोदा के विलाप में एवं अन्य गोप गोपियों की भाव धारा की अभिव्यक्ति में स्नेह ही प्रधान है क्योंकि कहीं पर अनिष्ट के नाश और पुनः प्राप्त करने के प्रति निराशा नहीं देखी जाती।

डा० द्वारका प्रसाद सक्सेना उक्त मत से सहमत न होकर अंगीरस रूप में करुण रस को स्वीकार करते हैं–'प्रियप्रवास में विरह का इतना व्यापक और मार्मिक वर्णन किया है जिसे देखकर ज्ञात होता है कि यहाँ पर प्रवास जन्य विप्रलम्भ श्रृंगार अपनी सीमा का अतिक्रमण करके करुण विप्रलम्भ श्रृंगार से भी आगे करुण रस का रूप धारण कर गया है।'[67] हरिऔध जी स्वयं भवभूति की भाँति करुण रस से ही अन्य रसों की उत्पत्ति 'एकोरसः करुण एव निमित्त भेदात भिन्नः पृथक्पृथगिवाश्रयते विवर्तान्' के आकार पर स्वीकार करते हैं।[68] मेरी दृष्टि में प्रियप्रवास में करुण विप्रलम्भ तो है किन्तु शुद्ध विप्रलम्भ का रूप इसमें ढूँढना व्यर्थ है क्योंकि मथुरा से द्वारका गमन तक समाचार मिलने पर भी राधा यशोदा और गोपियों को मिलन की आशा बनी रहती है। इस प्रकार 'प्रियप्रवास' की रसधारा में सहृदयों को अभिभूत करने की पूर्ण क्षमता है। अतः रस दृष्टि से यह महाकाव्य पूर्ण सफल है। इसमें महाकवि हरिऔध की भावुकता एवं रसपेशलता का परिचय सहज ही प्राप्त हो जाता है।

खण्ड–ख

प्रियप्रवास मे सास्कृतिक अभिव्यक्ति

सस्कृति के अभिप्राय से अवगत होने के पूर्व 'सस्कृति' की व्युत्पत्ति एव प्रयोगार्थ से अवगत होना आवश्यक है। सम् उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु से स्त्रियाँ क्तिन प्रत्यय से बना है।[69] सस्कृति–शुद्धि सफाई सस्कार सुधार किसी व्यक्ति जाति, राष्ट्र आदि की वे बातें जो उनका मन रुचि आचार विचार, कला कौशल तथा सभ्यता के क्षेत्र म बौद्धिक विकास का सूचक होता है (कल्चर)।[70] सस्कृति का मुख्यत प्रयोग सस्कार आचार विचार के अर्थ में किया जाता है। रवीन्द्रनाथ मुखर्जी ने इसे विशेषत साहित्यकारो के सन्दर्भ मे व्याख्यायित किया है।[71]

सस्कृति प्रकृति सिद्ध है जो आदिकाल से मानव विकास की निर्देशिका के समान स्थिति एव परिस्थिति का बोध कराती रही है। चूंकि सस्कृति एक व्यापक और गतिमान क्रिया है, इसलिए उसे सहज रूप मे परिभाषा की सीमा में बाँधना सम्भव नहीं है। इसके अन्तर्गत वे सभी तत्त्व समाहित हैं, जो मानव के विकास के शाश्वत सिद्धान्त हैं और उसे पुष्पित पल्लवित करने म सहायक होते हैं। जीवन का कोई भी अग इससे अछूता नहीं है। इसम साहित्य सगीत, कला दर्शन, धर्म, विज्ञान आदि सभी का समावेश है। डॉ० हरिवश लाल शर्मा का कथन है–'सस्कृति वह भावात्मक सूक्ष्म तत्त्व है जो हृदय की प्रेरणा से बाह्य आचारों म प्रस्फुटित होकर भी सूक्ष्मता के निकट ही अधिक रहता है।[72] सस्कृति के उदय एव विकास का कोई निश्चित समय नहीं है, वह अविभाज्य और सार्वकालिक है। उसकी आध्यात्मिकता समन्वय की भावना आदि विशिष्टताएँ हैं। यह सस्कृति गगा की धारा सदृश है, जिसमें अन्यान्य नदीनद रूप बौद्ध, जैन, द्रविड आभीर यूनानी मुस्लिम, अग्रजी आदि सस्कृतियाँ सम्मिलित हैं, फिर भी उसके पावन प्रवाह म कोई व्यवधान या अवरोध उत्पन्न नही हुआ है।

प्रियप्रवास की रचना उस समय हुई जब सस्कृति की रक्षा एव उसके प्रचार प्रसार के लिए अनेक सस्थाए कार्य कर रही थीं। उसमे ब्रह्म समाज आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन, थियोसिफीकल सोसाइटी प्रार्थना समाज आदि प्रमुख सस्थाऐं हैं जिनका उद्देश्य लोकोपकार देश सेवा, विश्व प्रेम ममता एकता आदि को बढ़ावा देकर भारतीय सस्कृति की अक्षुण्ण परम्परा को बनाए रखना था। हरिऔध ने उन सभी सिद्धान्तों और विचारों को प्रियप्रवास में स्थान दिया जो पूर्णरूपेण युगोचित थे। उनका

उद्देश्य राष्ट्रीय जागरण, देशोन्नति एव प्राचीन रूढिया को त्यागकर नवीन सामाजिक स दर्भों की स्थापना करना था। सस्कृति की यह नवचेतना मात्र हरिऔध क प्रियप्रवास मे ही नही अपितु मथिलीशरण गुप्त रामनरेश त्रिपाठी रूपनारायण पाण्डेय गोपालशरण सिंह मनन आदि। द्विवेदी युगीन कविया मे भी इसकी झलक पूणत देखी जाती है।

प्रियप्रवास प्राचीन वदिक सस्कृति एव नवीन तथा वैज्ञानिक दृष्टि का सम वय प्रस्तुत करता है। प्रियप्रवास को सस्कृति के बाह्य एव आभ्यातरिक पक्षो को लेकर विवेचित किया जा सकता है। उसके बाह्य रूप मे ही कवि नवीन मा यताओ का पोषक है, पर तु आभ्यातरिक रूपो के उद घाटन म वह परम्परावादी है। प्रियप्रवास म सस्कृति के विभिन्न पक्षो का महाकवि हरिऔध जी ने यथावसर समुचित रूप से प्रयोग किया है जिसका स्पष्टीकरण विस्तृत विवेचन से स्पष्ट हो जायेगा।

परिवार

परिवार भारतीय सस्कृति का मूल है। यह व्यक्ति की प्रथम पाठ शाला है और यही स्वस्थ समाज का नियामक भी है। परिवार और विशेष रूप से सयुक्त परिवार की भारतीय समाज क लिए महान उपयोगिता है। वह व्यक्ति के सु दर और उन्नत विचारो का निर्माण करता है। वह जीवन के सम्पूण रहस्यो को खोलकर आदश जीवन का माग प्रशस्त करता है। प्रियप्रवास मे ऐसे परिवार की कवि ने प्रतिष्ठा की है जिसमे यशोदा आदश माँ हैं जो पुत्र के लालन पालन में ही अपना पूरा समय व्यतीत करती हैं। प्रात होते ही मेवा पकवान और कजरी गाय का दूध पिलाती हैं। यशोदा वियोग की दशा मे पश्चात्ताप करती हुई कहती हैं—

मीठे मेवे मदुल नवनी और पक्वान्न नाना।
उत्कण्ठा के सहित सुत को कौन होगी खिलाती।
प्रात ! पीता सु-पय कजरी गाय का चाव से था।।
हा ! पाता है न अब उसको प्राण प्यारा हमारा।।
सकोची है अति सरल है धीर है लाल मेरा।
होती लज्जा अमित उसको माँगने म सदा थी।
जैसे ले के स रुचि सुत को अक म मैं खिलाती।
हा ! वसे ही अब नित खिला कौन माता सकेगी।।[37]

माँ के हृदय का बडा ही स्वाभाविक चित्र कवि न अकित किया है। यह सत्य है कि बच्चा माँ स अलग कितने ही सुखो का भोग कर रहा हो

परन्तु माता का ममत्व ऐसा होता है कि किसी भी प्रकार सतोष नही होता। यशोदा के इसी रूप का दृश्य प्रियप्रवास मे प्राप्त होता है। बच्चे बचपन मे बडे सकोची होते हैं। घर से बाहर भखे रहने पर भी बच्चे माँगकर नहो खा पाते हैं। श्रीकृष्ण की सकोची प्रकृति का स्मरण कर माँ यशोदा और भी अधिक कष्ट म हो जाती है। प्रियप्रवास में माता यशोदा को बहुत थोडे समय तक पुत्र सयोग प्राप्त हो सका है। तृतीय सग म वियोग की आशका से माता का हृदय बेहाल हो जाता है। पुत्र का वियोग न हो इसलिए देवी देवताओ की मनौती मनाती है। जगदम्बा माँ से पुत्र रक्षा के लिए प्रार्थना करती हैं—

सकल भाँति हम अब अम्बिके।
चरण पकज ही अवलम्ब है।
शरण जो न यहाँ जन को मिली।
जननि तो जगती तल शून्य ॥[74]

पुत्र के प्रति मात प्रेम की जो भावधारा इसम प्रवाहित है वह अगाध समुद्र की तरह गम्भीर है। माँ का पुत्र ही सवस्व होता है वही उसका जीवन और शक्ति भी वही होता है, यही नहीं उसके समक्ष न होने स रह रह करके चेतना भी खो बठती है।[75] आदश माता के साथ यशोदा आदर्श पत्नी भी हैं।

पिता नन्द का भी पुत्र कृष्ण के प्रति अगाध प्रेम है। उनके हृदय में पुत्र प्रेम और वात्सल्य के साथ कत्तव्य निष्ठा भी है। कस का यह सदेश पाकर कि उसने यज्ञ के लिए उन्हें दोनो पुत्रो के साथ आमन्त्रित किया है, नन्द उसकी दुरभिसन्धि से भयभीत हैं परन्तु कत्तव्यपरायण होने के नाते प्राणप्रिय पुत्रों को अक्रूर के साथ भेजने के लिए सहमत हो जाते है।[76] उनकी दशा भी विचित्र हो रही है रात्रि म उन्हे निद्रा नहीं आ रही है आहें भरते हुए उनके नेत्र सजल हैं और व्याकुल होकर कभी छत की ओर देखते हैं कभी इधर उधर टहलते हैं—

शयित हो अति चचल नेत्र से।
छत कभी वह थे अवलोकते।
टहलते फिरते स-विषाद थे।
वह कभी निज निजन कक्ष में ॥[77]

नन्द जी का आदश पिता के अतिरिक्त पति रूप भी दशनीय है। मथुरा स अकेले लौटने से उनकी स्थिति तो बस ही दयनीय है, यशोदा को देख करके और भी शोक-सन्तप्त हो जाते हैं। यशोदा की वियोगाग्नि

उनके द्वारा सह्य नहीं है, इसलिए झूठा आश्वसन देकर उन्हें शान्ति प्रदान करना चाहते हैं। यह जानते हुए भी कि अब मथुरा से ब्रज के लिए कृष्ण का आना असम्भव है जिसकी उन्ह अत्यधिक पीड़ा है, पर तु प्रिय पत्नी की व्यथा को देख अपने दुख का हृदय म छिपाये हुए न द जी श्रीकृष्ण का दो ही दिना म लौटने की बात यशोदा से कहकर उन्ह ढाढस बँधाते हैं–

> सारी बातें व्यथित उर की भूल त नद बोले।
> हाँ आवेगा प्रिय सुत प्रिय गेह दो ही दिनों में।
> ऐसी बातें कथन कितनी और भी नद ने की।
> जैसे तैसे हरि जननि का धीरता से प्रबोधा ॥[78]

श्रीकृष्ण पुत्र रूप म भारतीय परिवार का प्रतिनिधित्व करते है। व मथुरा चले गये हैं, वहाँ उन्ह राज काज स ब्रज आने का अवसर नहीं प्राप्त हो रहा है जब कभी आने की बात सोचते हैं नई नई समस्यायें आकर उन्ह उलझा देती है[79] पर तु उन्ह ब्रजधरा गोप गोपिका माता पिता सभी की स्मृतियाँ निरन्तर व्यथित करती रहती हैं–

> शोभा सम्भ्रम शालिनी ब्रज धरा प्रेमास्पदा गोपिका।
> माता प्रीतिमयी प्रतीति प्रतिमा वात्सल्य धाता पिता।
> मेरे गोप कुमार प्रेम मणि के पाथोधि स गोप वे।
> भूले हैं न सदैव याद उनकी देती व्यथा है हमे ॥[80]

इस प्रकार माता पिता एव पुत्र के परस्पर प्रेम सम्बन्धो और कर्तव्यो का कवि ने अनूठा समन्वय प्रस्तुत किया है। परिवार के किसी भी सदस्य के कर्तव्य के निर्वाह करने मे हरिऔध जी सर्वदा सजग रहे हैं। उन्होने अपने ग्रन्थ म आदर्श परिवार की वर्तमान समाज के लिए अनुकरणीय झाँकी प्रस्तुत की है।

समाज

व्यक्ति के समूह का नाम समाज है। यह एक अमूर्त धारणा है जो एक समूह के सदस्यो के बीच पाये जाने वाले पारस्परिक सम्बन्धो का बोध कराती है। इसके अन्तर्गत परिवार के अतिरिक्त समाज के अन्य लोगो से सामाजिक आर्थिक धार्मिक एव राजनीतिक सम्बन्ध उनके रहन सहन खान पान रीति परम्पराएँ व्रत उपवास आदि सब कुछ समाहित है। हरिऔध जी ने समाज के उन सभी सम्बन्धो और मान्यताओं का उल्लेख किया है। यशोदा और नद के अतिरिक्त सम्पूर्ण ब्रज प्रदेश श्रीकृष्ण के रूप सौन्दर्य पर मुग्ध है। उनके प्रति इतना प्रेम, दुलार, ममत्व और बन्धुत्व भरा हुआ

है कि सायंकाल गोचारण से वंशी बजाते हुए लौटते समय सारा ब्रज समाज गृह कार्यों को भूलकर उनके दर्शन और मुरली की मधुवर्षिणी ध्वनि को सुनने के लिए दौड पडता है—

सुन पड़ा स्वर ज्यों कल वेणु का।
सकल ग्राम समुत्सुक हो उठा।
हृदय यंत्र निनादित हो उठा।
तुरत ही अनियंत्रित भाव से।
बहु युवा युवती गृह बालिका।
विपुल बालक वृद्ध वयस्क भी।
विवश से निकले निज गेह से।
स्वदृग का दुख मोचन के लिए।।[81]

श्रीकृष्ण ने अपनी छोटी सी अवस्था[82] में अटूट प्रेम, अगाध स्नेह और अथक परिश्रम से सम्पूर्ण ब्रज के निवासियों को परिवार का अभिन्न अंग बना लिया था। कृष्ण और ब्रज के लोगों में इतनी एकरूपता हो गई थी, जैसे—वे उनकी आत्मा हों और अन्य सभी लोग शरीर। इसीलिए तो मथुरा गमन का समाचार पाकर सारा ब्रज शोकाकुल होकर उनके कुशल क्षेम के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते हुए नेत्रों से अश्रुधारा बहाने लगता है।[83] यही नहीं ब्रज के अनुताप को देखकर रात्रि भी ओस के बहाने संतप्त होकर आँसू बहा रही है—

विकलता उनकी अवलोक के।
रजनि भी करती अनुताप थी।
निपट नीरव ही मिष ओस के।
नयन से गिरता बहु वारि था।।[84]

ब्रज प्रदेश और वहाँ के निवासियों के प्रति श्रीकृष्ण का प्रेम उस समय और भी स्पष्ट हो जाता है जब वे आपत्ति के समय उनकी रक्षा के लिए प्रत्येक बार तत्पर हो जाते हैं। कालियनाग को वश में करने, दावाग्नि के समय अपूर्व साहस, प्रलयकारी वर्षा के समय युक्तियों द्वारा ब्रज अवनि की रक्षा एवं अन्य दुष्टों का संहार वे अपूर्व धैर्य शौर्य और शक्ति से करते हैं। श्रीकृष्ण उदारता की प्रतिमूर्ति हैं, क्योंकि वे सुहृद बन्धुओं के साथ खेलते हुए जीत कर भी उनका मान रखने के लिए हार जाया करते थे, यही नहीं किसी को भूखा देखकर स्वयं वृक्षों पर चढ़कर मीठे फल खिलाते और माता के द्वारा भेजे गये व्यंजनों को सभी के साथ खाते थे। रोगी, दुखी या किसी प्रकार की आपत्ति में देखकर वे अपने हाथों से सेवा किया करते थे—

रोगी दुखी विपद आपद मे पडा की ।
सवा सदव करते निज हस्त से थ ।
ऐसा निकेत व्रज मे न मुझे दिखाया ।
कोई ऐसा दुखित हो पर वे न होवें ।।[85]

इस प्रकार वे सच्चे समाज सेवी, दीन हितकारी, लाक रजक थे। इसलिए सम्पूण व्रज धरा उन्हे और व्रज के सभी लोगा को व निता त प्रिय थे। वहाँ के वद्धजन उ ह अपना प्राणधन स्वीकार करत थ। अक्रूर के समक्ष व अपना सवस्व दे देने के लिए तैयार है, कि तु उ ह कृष्ण का वियोग किसी भी दशा म सह्य नही है।[86] एक वृद्धा तो कस के रूठने पर अपना निवास छोडकर जगलो मे भी निवास करन को उद्यत है, यही नहीं उसके द्वारा दिये गये करोडो दण्ड सहने घर सारी सम्पदा दे देने एव अपने प्राणा को भी न्याछावर करने को तैयार है, पर तु उसे प्रिय कृष्ण का वियाग किसी भी दशा मे सह्य नही है–

जा चाहेगा नपति मुझसे दड दू गी करोडो ।
लोटा थाली सहित तन क वस्त्र भी बेंच दू गी ।
जो मागेगा हृदय वह तो फाड दू गी उसे भी ।
बटा ! तेरा गमन मथुरा मैं न आँखो लखू गी ।।[87]

समाज के विभिन्न वर्गों पर दष्टिपात करन से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि श्रीकृष्ण अपने लोकप्रिय कार्यों, सच्चरित्र एव लोकोपकारिता के कारण सम्पूण व्रज का एकता के सुदृढ बधन म आबद्ध कर देते है। इ ही उपायो और साहसी कार्यों द्वारा एक सफल समाज की सरचना सम्भव है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि हरिऔध जी ने समाज की विसगतियो को श्रीकृष्ण क चरित्र के माध्यम से सम वय स्थापित करके ऐसे समाज के स्थापना की कल्पना करते हैं जो अनेक विभेदा के ऊपर उठकर एक अपना आदश रूप प्रस्तुत करता है।

हमारा भारतीय समाज धम के प्रति दढ आस्थावान है। व्रत पूजा तीर्थाटन एव तीर्थों के महत्त्व का वणन धम का एक अग है। मा यता है कि विभिन्न व्रतो क करने से वाछित फला की प्राप्ति होती है। पुराणा एव अ य धमशास्त्रा म व्रतों का महत्ता का विस्तारपूर्वक वणन है। पूजा के स दभ म भी कुछ ऐसी ही मा यता अतीत काल से चली आ रही है। ऐसा कहा जाता है कि शकर, दुर्गा भगवती आदि की पूजा करने से कुमारियाँ मन वाँछित पति प्राप्त करती है। रामचरितमानस मे सीता जी ने गौरी की

पूजा की और उन्होंने सीता को वांछित पति पाने का आशीर्वाद दिया। इसी प्रकार कुमारी राधा श्रीकृष्ण को पति रूप म प्राप्त करने हेतु विधि विधान म भगवती का पूजती और अनेक व्रत रखती हैं-

> सविधि भगवती को आज मैं पूजती हूँ।
> बहु व्रत रखती हू देवता हूँ मनाती।
> मम पति हरि होवें चाहती मैं यही हूँ।
> पर विफल हमारे पुण्य भी हो चले हैं ॥[18]

राधा ही नहीं, ब्रजधरा की जितनी भी बालाएँ थीं, व सभी श्रीकृष्ण को पति रूप मे पाने की अभिलाषा रखती थी। इसीलिए व विविध देवा की पूजा और सैकडो व्रत वर्षों तक करती रही-

> पूजायें त्यो विविध व्रत औ सैकडा ही क्रियायें।
> सालों की है परम श्रम से भक्ति द्वारा उन्होंने ॥[19]

ऐसा देखा गया है कि स्त्रियाँ अधिक आस्थावान होती हैं। श्रीकृष्ण के चले जाने के बाद यशोदा का दशा बडी विचित्र हो जाती है। पुत्र की प्राप्ति के लिए उन्हें कितनी यातनाएँ सहन करनी पडी थी अनेक यत्नो और व्रता को करने के परिणामस्वरूप यह पुत्ररत्न प्राप्त हुआ था, आज उसके वियोग म तडपती हुई, पति से बार बार प्रश्न करती हुई, श्रीकृष्ण के सबध म पूछती हैं-

> सहकर कितने ही कष्ट औ सकटा का।
> बहु यजन कराके पूज के निर्जरों को।
> यक सुअन मिला है जो मुझे यत्न द्वारा।
> प्रियतम वह मेरा कृष्ण प्यारा कहाँ है ॥[20]

मानव जीवन म उत्सवा और पर्वों का बडा महत्व है क्योंकि व्यक्ति स्वभाव से ही उत्सव प्रिय होता है। प्रत्येक देश काल समाज म उत्सव किसी न किसी रूप म अवश्य मनाये जाते हैं। भारतीय समाज मे व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त अनेक उत्सव प्रचलित हैं। प्रियप्रवास म कृष्ण जन्मोत्सव की धूम मची हुई है। सारा ब्रज ग्राम श्रीकृष्ण के जन्म के समय अत्यधिक प्रफुल्लित है। प्रत्येक घर वन्दनवारा से सुसज्जित है विभिन्न मूल्यवान वस्तुओ स युक्त ब्रजपुरी अलकापुरी की शोभा पा रही है-

> जब हुआ ब्रज जीवन जन्म था।
> ब्रज प्रफुल्लित था कितना हुआ।
>
> \+ + +

विपणि हो वरवस्तु विभूषिता।
मणिमयी अलका सम थी लसी।
वर वितान विमंडित ग्राम की।
सु छवि थी अमरावति रजनी।।

+ + +

प्रचुरता धन रत्न प्रदान की।
अति मनोरम औ रमणीय थी।।[91]

भारत मे अनेक पर्व और उत्सव मानये जाते है, पर तु पुत्र जन्मोत्सव उनसे सर्वोपरि है। कवि ने कृष्ण के जन्म के समय का जो चित्र प्रस्तुत किया है वह स्वाभाविक एव सजीव है और भारत की सांस्कृतिक परम्परा का सवाहक है।

भोजन, पात्र, वस्त्राभूषण एव भवन—भारतीय सस्कृति और साहित्य मे प्रचलित खान पान वस्त्राभूषणो और भवनो का अतीतकाल से चित्रण होता रहा है। किसी भी युग के वस्त्र आभूषण भवन एव खान पान के वस्त्र आभूषण भवन एव खान पान के पात्र उस युग की संस्कृति का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करते है। इसलिए सस्कृति के पक्ष मे इनका बहुत बडा महत्व है।

खान पान के स दर्भ मे हरिऔध जी ने उस समय का दृश्य प्रस्तुत किया है जब श्रीकृष्ण अक्रूर के साथ जाने के लिए उद्यत हैं। नद साथ जा रहे हैं इसलिए बार-बार यशोदा उन्हे स्मरण कराती हुई कहती हैं—

मधुर फल खिलाना दृश्य नाना दिखाना।[92]
विमल जल मगाना देख प्यासा पिलाना।
कुछ क्षुधित हुए ही व्यजनो को खिलाना।।[93]

श्रीकृष्ण के मथुरा चले जाने पर अत्यधिक विरह विह्वलता होकर उनके आगमन की प्रतीक्षा मे माता प्रात से दिवस अवसान तक द्वार पर बैठी रहती थी एव उस ओर आने वाले सभी पथिको से पुत्र के आगमन का समाचार पूछती थी। व उन भोज्य पदार्थों को, जिन्हे युवा श्रीकृष्ण अति प्रेम से ग्रहण करते थे, को दिनभर सजाकर पथ श्रम परिहार के लिए रखती थी—

अति अनुपम मेवे औ रसीले फलों को।
+ + +
प्रतिदिन रखती थी भाजनो मे सजा के।[94]

उद्धव द्वारा सदेश लेकर आने पर माँ का वात्सल्य प्रेम और भी जाग्रत हो जाता है। उनका कुशल क्षेम पूछने के बाद आतरिक भावना को अभिव्यक्ति करती हुई कहती है कि जिस चाव से विभिन्न पकवान्न, मेवा आदि को मैं खिलाया करती थी, कजरी गाय का दूध पिलाती थी, अब आग्रह पूर्वक कौन उसे खिलाता पिलाता होगा। श्रीकृष्ण खाने और खिलाने दोनो मे बड कुशल थ। एक गोप उनके चरित्र का वर्णन करता हुआ कहता है कि किसी को भूखा व नहीं देख पाते थे, उसके दुखो के निवारण के लिए स्वत वृक्ष से फलो को तोड लाते थ, यही नहीं माता के द्वारा भेजे गये विविध व्यजनो को बडे प्रेम स गोपजनो को खिलाते थे–

वह अतिशय भूखा देख क बालको को।
तरु पर चढ जाते थे बडी शीघ्रता मे।
निज कमल करो स तोड मीठे फलो को।
वह समुद खिलाते थ उन्हे यत्न द्वारा ॥[95]

खान पान के ये दृश्य माता का पुत्र के प्रति अगाध प्रेम निदर्शित करते हैं। श्रीकृष्ण की अपने सखा सम्बन्धियो के प्रति सदभावना है। उन्हें लोकोपकारिता का ज्ञान प्रदान करने के जिन रूपों का इसम उल्लेख है, व सहज स्वाभाविक और सस्कृति के सुन्दर अग हैं।

प्रियप्रवास म श्रीकृष्ण क मथुरा-गमन से पूर्व उन्ह रोकन क लिए गोपियाँ सवस्व अर्पित करने के लिए तत्पर है, वह अपने भोजन के पात्रो को भी दान मे नही हिचकेगी–

जो चाहेगा नृपति मुझसे दण्ड दूँगी करोडो।
लोटा थाली सहित तन के वस्त्र भी बेच दूँगी ॥[9]

भोजन के लिए प्रयोग म लाये जा रहे बर्तनो का सांस्कृतिक परम्परा के अनुसार कवि ने उल्लेख किया है।

सजल नीरद की कल कान्ति वाले श्याम सुन्दर के अग प्रत्यगो में इतना आकर्षण इतनी आभा फूट रही है, लगता है कि सुकुमारता मूर्तिमान हो गई है। इस अप्रतिम सौन्दर्य पर विविध प्रकार के वस्त्र और आभूषणो से सुसज्जित वे अतीव शोभा पा रहे थ। कटि प्रदेश मे पीताम्बर वक्ष पर वनमाला कधे पर दुपट्टा, मन को रजनकारी प्रतीत कराने वाले मकराकृत कुण्डल कानो म धारण किये हुए श्रीकृष्ण की अलकावली शोभित हो रही थी–

मकर केतन के कल केतु स।
लसित थे वर कुण्डल कान मे।

घिर रही जिनकी सब ओर से।
विविध भावमयी अलकावली॥[98]

कवि मथुरा के सुख समृद्धि का वर्णन करते हुए वहाँ के उद्यान में कार्यरत मालिनों के अनेक पुष्प अलंकारों से अलङ्कृत चित्रित करता है—

तू पावेगी कुसुम गहने कान्तता साथ पहने।
उद्यानों में वर नगर के सुन्दरी मालिनों को॥[99]

राधा पवन से अपने प्रियतम कृष्ण का परिचय कराने के लिए उनके गात, वस्त्र, आभूषणों और अलकावली का वर्णन करती हैं।[100]

ब्रज युवतियों का आभूषण वस्त्र से आभूषित चित्रण, वहाँ की सम्पन्नता की झलक देता है जब यशोदा नन्द के द्वारा कृष्ण को मथुरा छोड़कर अकेले लौटने पर नितान्त व्यथित हो उठती है। स्मृति रूप में प्रिय पुत्र के संयोग का दृश्य प्रस्तुत करती हुई कहती हैं कि उस समय उसकी आभा देखने के लिए विविध वस्त्र आभूषणों को धारण किये हुए प्रसन्न चित्त युवतियाँ आकर अपने सौन्दर्य से सबको आनन्दित करती थीं।[101]

श्रीकृष्ण जब कभी ग्राम में विहार करते उस समय भी सुन्दर वस्त्राभूषणों से अलंकृत रहते थे।[102] यशोदा पुनः अपनी व्यथा की कहानी उद्धव से कहते हुए प्रिय सुत द्वारा धारण किये हुए वस्त्राभूषणों का वर्णन करती है।[103]

इसी प्रकार राधा को भी कवि ने विविध वस्त्र एवं अलंकारों से युक्त सद्गुणी, चित्त प्रेम की भण्डार और प्रसन्न चित्त वाली रानी ब्रज की गर्विता और परोपकारी रूप में प्रस्तुत किया है। उनके रूप सौन्दर्य और गुणों में मणि कांचन संयोग है—

सद्वस्त्रा सदलंकृता गुणयुता सर्वत्र सम्मानिता।
रोगी वृद्ध जनोपकार निरता सच्छास्त्र चिन्तापरा।
सद्भावातिरता अनन्य हृदया सत्प्रेम संपोषिका।
राधा थी सुमना प्रसन्नवदना स्त्रीजाति रत्नोपमा॥[104]

श्रीकृष्ण स्वयं भी विविध वस्त्राभूषणों को धारण करते हुए थे साथ ही वे अपने हाथों से नित्य पुष्पों की माला एवं दूसरे प्रकार के आकर्षक मकरनिका तथा पुष्पाभूषण श्याम सखाओं को पहनाकर आनन्द निमग्न रहते थे—

अभिनव कलिका से पुष्प से पल्लवों से।
रच अनुपम माला भव्य आभूषणों का।

वह निज कर स थ बालका को पिन्हाते।
वह सुखित बनात यो सखा व द को थे ।।[105]

इस प्रकार कवि ने श्रीकृष्ण, राधा, गोप, गोपिकाओ सभी क द्वारा प्रयोग किय जा रह अलकरणा एव वस्त्रा का उल्लेख मनमोहक ढग से किया है।

श्रीकृष्ण का सौन्दय एव उनके वणु वादन से सम्पूण व्रजधरा कलनाद स निमादित थी। गली गली म मधुवपण हो रहा था, वहाँ की शोभा अतुलनीय थी–

प्रति निकेतन स कल नाद की।
निकलती लहरी इस काल थी।
मधुमयी गलिया सब थी बनी।
ध्वनित सा कुल गोकुल ग्राम था ।।[106]

राधा गाकुल ग्राम क समीप जिस गाँव म रहती थी वह गाव और राजा वषभानु उप द्र के समान पूण सम्मान और प्रतिष्ठा स निवास कर रहे थे।[107]

राजा वृषभानु की पुत्री सुखा की आगार थी, उनका आवास स्वग की शोभा पा रहा था, पर तु कृष्ण के मथुरा गमन का समाचार पाकर वह दुख सागर म डूबन लगी–

सव सुखाकर श्री वषभानुजा।
सदन सज्जित शोभन स्वग सा।
तुरत ही दुख के लवलश से।
मलिन शोक निमज्जित हा गया ।।[108]

कृष्ण मथुरा गमन का समाचार पाकर सारे व्रज प्रदेश म हाहाकार मच गया। नन्द के घर क चारा ओर सूय के निकलन के पूव ही सवत्र लागा की भीड ही दष्टिगत हा रही थी। घर से मात्र वद्ध, रागी, नवागत वधुए ही दिखाई पड रही थी। उस समय म सदन एव गह का कवि न उल्लेख किया है–

थ दीखते परम वद्ध नितात रोगी।
या थी नवागत वधू गह म दिखाती।
काई न और इनका तज क कहा था।
सूने सभी सदन गाकुल क हुए थ ।।[109]

राधा मथुरा नगर क रम्य उद्यान, ऊँची-ऊँची पक्तिबद्ध अट्टालिकाओ एव वहाँ के सौन्दय का वणन सदेशवाहिका पवनदूती स करती हैं–

कालिन्दी के तट पर घन रम्य उद्यान वाला।
ऊँचे ऊचे धवल गह की पत्तिया से प्रशोभी।
जो बना है प्यारा नगर मथुरा प्राण प्यारा वही है।
मरा सूना सदन तज के तू वहाँ शीघ्र ही जा ॥[110]

राधा के द्वारा अनेक छ दो म मथुरा क प्रासादो के सौ दय एव समद्धि का सजीव चित्र प्रस्तुत किया गया है 'वनस्थली म पुर मध्य ग्राम मे। अनेक ऐसे थल हैं सुहावन।[111] के द्वारा कवि श्रीकृष्ण की लीलास्थली की स्थिति का ज्ञान कराता है। इस प्रकार व्रज और मथुरा के विभिन्न प्रकार के भवना, उनके सौन्दय का वणन कवि ने बड़ी सजीवता स प्रस्तुत किया है।

(आ) शकुन अपशकुन–भारतीय सस्कृति मे कुछ मायताओं के आधार पर शकुन अपशकुन का विचार दैनिक जीवन म बड महत्व का है। कुछ मायताएँ शुभसूचक हैं और कुछ अशुभ सूचक। जैसे कौआ या कोयल की घर के ऊपर होने वाली बोली प्रिय के आगमन का सूचक है और छींक होना, प्रस्थान करते समय किसी ऐसे व्यक्ति को देखना जो अशुभ माने जाते हो, आँख फडकना आदि अशुभ सूचक हैं। कौवे को शुभ मानकर हिन्दी साहित्य के अनेक कवियो ने उसे शकुन रूप म प्रस्तुत किया है–

काक भाल निज भासहरे पहु आओत मोरा।
खीर खाइ भोजन देव रे भरि कनक कटोरा।

लोकगीतो म नायिकाओ द्वारा कौवे के चाच का सोने स मढान और उस दूध भात खिलाने का प्रयोग मिलता है। प्रियप्रवास मे भी काग को शुभ माना गया है। कौआ गोकुल के किसी घर पर आकर जब बैठ जाता था तो उससे घर की स्त्रियाँ यही कहती थी कि यदि प्रिय कृष्ण का आगमन हुआ तो तुझे दूध भात खिलाऊगी–

आके कागा यदि सदन म बठता कही भी।
तो त वगी उस सदन की या उस थी सुनातीं।
जो आते हो कुवर उड के काक तो बैठ जा तू।
मैं खाने को प्रतिदिन तुझे दूध और भात दूँगी ॥[112]

(इ) भाग्यवादिता–भारत अतीतकाल स भाग्यवादी रहा है। अधिकाश लोगो की मा यता है कि जो भाग्य म लिखा है, वही होगा, सस्कृत स लकर हिन्दी साहित्य के साहित्यकारो की रचनाओ म भाग्यवादी प्रवृत्ति देखी गयी है। 'भाग्य फलति सवत्र न विद्या न च पौरुषम' के आधार पर भाग्य क ही अनुसार फल की प्राप्ति होती है। हरिऔध जी के प्रियप्रवास

मे इस प्रवत्ति का पर्याप्त उल्लेख है। अक्रूर द्वारा यह समाचार कि यज्ञ म भाग लेने के लिए नन्द बाबा के साथ कृष्ण और बलराम को कस ने बुलाया है, सुनकर ब्रज के सभी लोग चिंतित हो जाते है। कस द्वारा आमन्त्रित किये जाने पर लोग शका व्यक्त करते हैं, क्योंकि ऐसा लगता है कि उसने कोई षडयन्त्र रच रखा है। ब्रज प्रदेश पर विधि की कुदृष्टि है हम लोग भाग्यहीन हैं, इसीलिए ता यहाँ नित्य व्याधियाँ व्यथित करती रहती हैं–

विवश है करती विधि वामता।
कुछ बुरे दिन हैं ब्रज भूमि के।
हम सभी अति ही हतभाग्य हैं।
उपजती नित जो नव-व्याधि हैं।।[114]

तृतीय सग मे माता यशोदा पुत्र का किसी प्रकार अनिष्ट न हो इसके लिए अनेक देवी देवताओ की प्रार्थना करती हैं। अन्त म उन्हें यह स्वीकार करना पडता है कि जो कुछ विधि के विधान म है, उसे यथावत देशकाल परिस्थिति के अनसार होना ही है फिर भी प्रभु मैं सेविका रूप म आपसे निवेदन कर रही हू–

प्रभु कभी भवदीय विधान म।
तनिक अतर हो सकता नही।
यह निवेदन सादर नाथ से।
तदपि है करती तव सेविका।[115]

ब्रज निवास करते समय कृष्ण को अनेक यातनाएँ सहन करनी पडीं। अपने सद्व्यवहार एव श्रेष्ठ साहसी कार्यों से उन्होंने सभी को वश म कर लिया है। यद्यपि कृष्ण ब्रज में नही, मथुरा म हैं, अपनी विवशताओ को बताकर उन्होने उद्धव का सन्देश देकर भेजा है परन्तु उन्हें उत्तर यही मिलता है कि यहाँ के सभी निवासियों अन्न प्राण आदि म कृष्ण सदैव रमे रहते हैं। कुछ भाग्य की विडम्बना ऐसी है जो हम सभी लोगो को उनमे पृथक किये हुए है–

विडम्बना है विधि की बलीयसी।
अखण्डनीया-लिपि है ललाट की।
भला नही तो तुहिनाभिभूत हो।
विनष्ट होता रवि बधु कज क्या।।[116]

श्रीकृष्ण का वियोग कितना कष्टकारी है ब्रज की दशा देख शब्दो की सीमा में उसे बाँधना असम्भव है। भावुक कवि अपनी भावना को

अभिव्यक्त करते हुए मुहावरे द्वारा खोटे न्दिवस और फूटे भाग्य का परिणाम श्रीकृष्ण के वियोग की व्यथा स्वीकार करता है–

> खोटे होते न्दिवस जब हैं भाग्य जो फूटता है।
> कोई साथी अवनितल म है किसी का न होता ॥[117]

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रियप्रवास म कवि पूण भाग्यवादी है। यद्यपि उमने क्त य परायणता को जागत कर श्रीकृष्ण के अनेक महान कार्यों का सकेत किया है फिर भी भाग्य या विधि की असीम सत्ता को हरिऔधजी ने अनक स्थना पर स्वीकार किया है।

(ई) आतिथ्य सत्कार–आतिथ्य सत्कार हमारे सस्कृति की अमूल्य निधि है। अतिथि देवोभव' के आधार पर प्रत्येक युग और समय म अतिथि सत्कार की परम्परा अबोध गति से चलती रही है। अतिथि रूप म उद्धव ब्रज म आते हैं। उद्धव का दूर से आता हुआ देखकर श्रीकृष्ण के आने का भ्रम हो जाने से सभी ब्रजवासी उत्सुक हो अपने अपने कार्यों को छोडकर दशन हेतु चल देते हैं। निकट जाकर प्रिय को न पाकर सभी निराश और दुखी होकर लौट आते हैं। प्रियप्रवास' से पूववर्ती कृष्णकाय में उद्धव जब गोपियों को ज्ञान माग का उपदेश देने लगते हैं तो गोपियाँ आवेश में आकर उद्धव को खरी खोटी कहने लगती हैं पर तु प्रस्तुत ग्र थ मे ऐसा नही है। प्राचीन परम्परा के अनुसार उद्धव को दूर से आता हुआ देखकर उनका भी श्रीकृष्ण का भ्रम होता है और वे अपने सारे काम काज छोडकर दौड पडते हैं। गोप बालाएँ जो कूप म से जल निकाल रही थीं उ होने रस्सी सहित घडे को कुए ही म छोड दिया किसी का घडा सिर से गिर पडा। यहाँ तक कि वयस्क, वृद्ध बालक सभी रूप सौ दय के दशन क लिए पूण उत्कठा से लालायित हो उठे–

> निकालती जो जल कूप से रही।
> स–रज्जु सो भी तज कूप म घडा।
> \+ \+ \+
> वयस्क वृद्धे पुर बाल बालिका।
> सभी समुत्कठित और अधीर हो।
> सवेग आये ढिग मजु यान के।
> स्व लोचना की निधि चारु लूटने ॥[118]

उद्धव का प्रियप्रवास' मे गोप कुमारो एव राधा द्वारा सम्मान किया गया है। ब्रजधरा मे घूम घूमकर वह उनकी दु ख और व्यथा देखकर व्यथित होते है। एक दिन जब प्राकृतिक सौ दय से परिपूण यमुना के किनारे भावुक

गोप बैठे थे, उसी बीच मे उद्धव वहाँ पहुँच गये। वे चूँकि अतिथि हैं, इसलिए उनके पहुँचते ही सभक्ति सादर उन्हे प्रणाम किया और फिर करुण हृदय से प्रिय कृष्ण का सदेश पूछने लगे–

प्रथम सकल गोपा ने उन्हें भक्ति द्वारा।
स विधि शिर नवाया प्रेम के साथ पूजा।
भर भर निज आँखो म कई बार आँसू।
फिर कह मृदु बातें श्याम सन्देश पूछा ॥[119]

यद्यपि राधा कृष्ण वियोग म अत्यधिक विह्वल हो गयी हैं। उद्धव राधा की यह दशा देख भक्ति भावना से भावित हो जाते हैं फिर भी जब नीरव कुटिया म उद्धव पहुँचते हैं तो वह बडे आदर से उनके आगमन का स्वागत करती हैं–

सप्रीति वे आदर के लिए उठीं।
विलोक आया ब्रज देव बन्धु को
पुन उन्हाने निज शान्त कुंज मे।
उन्हे बिठाया अति भक्ति भाव से ॥[120]

इस प्रकार हरिऔध जी ने कृष्ण काव्य म उद्धव के आगमन पर गोप गोपिकाओ एव राधा आदि पात्रो मे उनका आदर एव सम्मान कराकर नवीन मूल्यो की स्थापना की है। और इसके द्वारा भारतीय सस्कृति की मान्यता को सुदृढ किया है।

(उ) दलित वर्ग एव नारी महत्व–हरिऔध जी के समय में छुआ छूत और जाति पाँति के विभेदों को दूर करने के लिए आन्दोलन चल रहे थे। साहित्यकार अनेक समाज सेवी सस्थाओ से प्रेरणा लेकर मानवता को सकुचित परिधि मे ऊपर उठान की बात कर रहे थे। हरिऔध जी ने नवधा भक्ति को नये साँचे मे ढालकर 'दासता' नामक भक्ति के अन्तर्गत निम्न जाति की सेवा और उन्हें प्रत्येक दृष्टि से सम्मान देना स्वीकार किया है–

जो बातें हैं भव हितकारी सब भूतोपकारी।
जो चेष्टायें मलिन गिरती जातियाँ हैं उठाती।
हो सेवा में निरत उनके अथ उत्सर्ग होना।
विश्वात्मा भक्ति भव सुखदा दासता सज्ञ का है ॥[121]

कृष्ण के व्यक्तित्व में छोटे बडे का भेद नहीं है। वह सभी की सेवा अपने हाथों करते एव किसी को तुच्छ समझकर ठुकराते नहीं। ब्रज का ऐसा कोई घर नहीं है, जहाँ किसी पर कोई विपत्ति आये और श्रीकृष्ण उपस्थित न हो।[122] श्रीकृष्ण ब्रजाधिपति के परम स्नेही पुत्र हैं, उनका रूप सौन्दर्य

सहज ही व्यक्ति को आकृष्ट कर लेने वाला है, उनमे अपूर्व शक्ति और क्षमता है, फिर भी सभी के प्रति उनकी दृष्टि समान है। इस रूप मे श्रीकृष्ण के चरित्र का चित्रांकन कर कवि ने निश्चित रूप से छुआ छूत की भावना से ऊपर उठने और इस भयानक रोग से मुक्ति पाने की ओर सकेत किया है।

हमारे देश मे अतीत काल से नारियो की महत्ता को स्वीकार किया गया है। वह केवल जन्मदाता मां' ही नही जीवन मे विभिन्न रूपो मे व्याप्त है। माता के अतिरिक्त पत्नी भगिनी पुत्री आदि अनेक सम्बन्ध है। माता का रूप उसका त्याग ममता और वात्सल्य से भरा हुआ है। सन्तान की सुख सुविधा के लिए वह अपना सवस्व त्यागने को तत्पर रहती है। वास्तव मे नारी अपने लिए नही अपनी सन्तान एव परिवार के अन्य सदस्यो के लिए जीवन धारण करती है। महाभारत मे उसकी महत्ता स्वीकार करते हुए कहा गया है कि पत्नी के बिना पुरुष का जीवन अपूर्ण है, वह उसका अभिन्न मित्र हैं एव उसी को परिवार का उद्धारक माना गया है—

अध भार्या मनुष्यस्य भार्या श्रेष्ठतम सखा।
भार्या मूल त्रिवर्गस्य भार्या मूत्र तरिष्यत ॥[123]

हरिऔध जी का ऐसा समय था जब नारियो के प्रति परम्परा से हो रहे अत्याचारो से मुक्त कराने का एक अभियान चल पडा था। उस रीतिकालीन साहित्य की वासना से ऊपर उठाकर समाज मे उचित स्थान दिलाने मे हरिऔध जी और मथिलीशरण गुप्त सबसे आगे थे। उन्होंने यशोदा को आदश माता राधा को आदश प्रेमिका एव अन्य गापियो को आदश सहचरी रूप मे प्रस्तुत किया। माता यशोदा को श्रीकृष्ण से किसी प्रकार की कोई अभिलाषा नही है मात्र पुत्र का कुशल क्षेम चाहती हैं परन्तु कृष्ण के मथुरा जाने का समाचार और पुत्र का वियोग पाकर उनकी स्थिति बडी ही दयनीय हो जाती है। वह तो पुत्र वियोग मे जीने की भी कामना नही करती। वह आँखों से अश्रु बहाती हुई रह रहकर अचेत हो जाती हैं।[124]

महाकाव्य के आरम्भ में तो राधा वियोग की व्यथा से व्यथित हैं परन्तु उद्धव द्वारा सन्देश पाकर उनका प्रेम उदात्त प्रेम मे परिवर्तित हो जाता है। वे अत्यन्त शान्ता धीरा, सहृदया प्रेम रूपा लोक और दोनों की सेविका बन जाती हैं। विश्व प्रेम और सद्भावना से पूर्ण होकर राधा वासना एव सभी ऐन्द्रिय इच्छाओ का शमन करके ब्रज की आराध्या देवी' की उपाधि प्राप्त कर लेती हैं। प्रियप्रवास का अन्तिम सग नारी आदश

और उसके गौरव का ही सग है । राधा चरित्र का एक दृश्य दष्टव्य है–

वे छाया थीं सुजन सिर की शासिका थी खलो की ।
कगालो की परम निधि थी औषधी पीडितो की ।
दीना की थी बहिन जननी थी अनाथाश्रितो की ।
आराध्या थी ब्रज अवनि की प्रमिका विश्व की थी ॥[125]

हरिऔध जी ने प्रियप्रवास म नारी के रूप को प्रस्तुत करन म भारतीय सस्कृति के निर्वाह के साथ नवीन मूल्यो की स्थापना करत हुए उसे आदश के उच्च शिखर पर पहुचाने का सफल प्रयास किया है ।

(ऊ) देश प्रेम–भारतवष का अतीत इस बात का साक्षी है कि यहाँ के लोगो ने देश, राष्ट्र या जाति के लिए प्राणो को योछावर करने मे कभी भी सकोच नही किया है । भगवान कृष्ण ने अजुन को उपदेश देत हुए यह तथ्य स्पष्ट किया है कि स्वराष्ट्र अथवा स्वधम की रक्षा के लिए जो व्यक्ति प्राणो को न्योछावर करता है, वह वीर गति को प्राप्त कर मुक्ति प्राप्त कर लेता है ।[126] इसलिए राष्ट्र या देश रक्षा घोर तपस्या से भी बढ़कर है ।

हिदी साहित्य मे प्रवत्तिगत नवी अवधारणाओ को स्वीकार करते हुए साहित्य को रीतिकालीन मासल श्रृगारिकता से निकाल कर हरिऔध जी ने देश और राष्ट्र के प्रति अटूट प्रेम किया है । इस सदभ मे यमुना से कालिय निस्सारण के अवसर पर हरिऔध जी के कृष्ण के वचन प्रमाण हैं–

अत करूँगा यह काय मैं स्वय ।
स्व हस्त मे दुलभ प्राण क लिए ।
स्वजाति औ जन्म धरा निमित्त मैं ।
न भीत हूँगा विकराल-व्याल से ॥[127]

श्रीकृष्ण के द्वारा यह उदघोषण–'उबारना सकट से स्वजाति का मनुष्य का सवप्रधान धम है'[128]–राष्ट्र प्रेम से परिपूण है । चरितनायक कृष्ण के रूप में कवि के जीवन का भी स्वत उदघाटन हो जाता है । गीता के समान कवि ने भी भस्म होकर स्वजाति रक्षा को श्रेयस्कर कम बताया है–

बढो करो वीर स्वजाति का भला ।
अपार दोना विधि लाभ है हमे ।
किया स्वकत्तव्य उबार जो लिया ।
सुकीर्ति पायी यदि भस्म हो गय ॥[129]

श्रीकृष्ण सम्भ्रात परिवार के सदस्य होकर भी अनक दीन दुखिया के घर जाकर उनके दुखों का निवारण कर उनका मन प्रसान्न करत थे–

वे राज पुत्र उनमें मन्द था न तो भी।
वे दीन के सदन थे अधिकांश जाते।
बातें मनोरम सुना दुख जानते थे।
औ थे विमोचन उसे करते कृपा से।

कवि ने यह प्रस्तुत करने की चेष्टा की है कि जब तक व्यक्ति मे दीन दुखिया के कष्ट निवारण की चिन्ता नहीं होगी, तब तक वह सफल समाजसेवी नहीं हो सकता। इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि के अन्तराल मे देश पर किए जा रहे राक्षस (अत्याचारियों) द्वारा अत्याचार के प्रति अपार क्षोभ और पीड़ा है जिससे मुक्ति पाने के लिए वह श्रीकृष्ण के माध्यम से जनमानस को अनेकश सम्बोधित एवं उत्प्रेरित किया है।

दर्शन धर्म

किसी देश काल या साहित्य में सांस्कृतिक स्वरूप के मूल तत्व को जानने के लिए आध्यात्मिक स्वरूप का ज्ञान आवश्यक है। आध्यात्मिकता या ईश्वर के प्रति आस्थावान होना यहाँ के लोगों की स्वभावगत वृत्ति है। हमारे धर्मशास्त्र चिन्तक अनादि काल से हम ब्रह्म, जीवन, जगत आदि दार्शनिक तत्वों का ज्ञान कराते रहे हैं जिसकी परम्परा आज भी वर्तमान है। उपनिषदकारों ने लौकिक जीवन की क्षणभंगुरता पर बल देते हुए आध्यात्मिक जीवन की महत्ता एवं सत्यता का प्रतिपादन किया है।[130] यह भी स्पष्ट किया गया है कि सम्पूर्ण सुख दुख का भोक्ता आत्मा है। जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति एवं तुरीय नामक चारों अवस्थाएं एवं वैश्वानर तैजस प्राज्ञ एवं ईश्वर नामक चारों रूप इसी आत्मा के हैं। यह अपने सूक्ष्म, स्थूल कारण आदि शरीरों मे स्थित रहता हुआ शुद्ध चैतन्य है।[131] इस प्रकार आत्म तत्व को सर्वशक्तिमान ब्रह्म रूप मानकर हमारे मनीषियों ने उसी को श्रेष्ठ माना है।

आध्यात्मिक स्वरूप को प्रियप्रवासकार ने अपने ढंग से नवीन रूप में प्रस्तुत किया है। इस कवि ने युग की जागरूकता के साथ बौद्धिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान करने का प्रयास किया है। इसमें ऐसे आध्यात्मिक जीवन की ओर संकेत है, जिसके द्वारा संसार का समस्त प्राणी सांसारिक विकारों का परित्याग कर सहज ही आनन्द की अनुभूति कर सकता है। उद्धव के माध्यम से कवि ने यह व्यवस्था दी है कि योग साधना के परम लक्ष्य लोभ मोह का त्याग कर विश्व प्रेम अथवा लोकहित की भावना में लीन रहना है। वासना त्याग से ही दुःख शान्त होंगे और परम सुख की प्राप्ति होगी—

धीरे धीरे भ्रमित मन को योग द्वारा सम्भालो।
स्वार्थी को भी जगत हित के अथ सानद त्यागो।
भूलो माहो न तुम लख के वासना मर्तियों को।
या होवेगा दुख शमन औ शान्ति यारी मिलेगी।।[132]

आध्यात्मिक जगत मे त्याग को बहुत महत्व दिया गया है। हरिऔध जी की दष्टि से जो मुक्ति की कामना म तपस्या करते हैं वे आत्मत्यागी नही स्वार्थी है। पथ्वी तल मे जा लोक सवा समाज सवा एव जगतहित म लगे हुए हैं, वही सच्चे अर्थों म महान त्यागी और ईश्वर के अनन्य प्रेमी हैं–

जो होता है निरत तप म मुक्ति की कामना से।
आत्मार्थी है न वह सकते हैं उस आत्मत्यागी।
जी स प्यारा जगत हित और लोक सेवा जिसे है।
प्यारी सच्चा अवनितल म आत्मत्यागी वही है।।[133]

कवि की दष्टि म जगत हित और लाक सवा ही महान तप है। ऐस ही लोग आत्मत्यागी और मुक्ति के अधिकारी हो सकते है। श्रीकृष्ण को प्राणों से बढ़कर विश्व प्रेम प्यारा है वे जगत हित के सामने बड़े से बड़े सुख को तुच्छ समझते हैं। वे इतने महान् योगी हैं कि बडी से बडी अभिलाषाओ का स्वय मे शमन कर लते हैं।[134] उन्हीं की भाँति राधा ने भी समस्त लौकिक सुखा का परित्याग कर दीन हीन, रोगी वद्धादि की सेवा एव समस्त भूतों के उपकार का व्रत लेकर मनोविकारा पर विजय पाई है। वह स्वय पार्थिव सुख दुखात्म स्थिति से ऊपर उठ कर आनन्द और शान्ति का प्रकाश बिखेरती हैं। हरिऔध जी ने उसे सात्विकी वत्ति अपनाने हेतु स्वार्थ से परे निष्काम भाव से आत्मोत्सर्ग की सज्ञा दी है–

निष्कामी है भव सुखद है और है विश्व प्रेमी।
जो है भोगापरत वह है सात्विकी वत्ति शोभी।
एसी ही है श्रवण करने आदि की भी व्यवस्था।
आत्मोत्सर्गी हृदयदल की सात्विकी वत्ति ही है।।[135]

आध्यात्मिकता का चरम लक्ष्य जगत पति परात्पर ब्रह्म का आभास करना होता है। विश्व म जितने भी दश्य अदश्य पदार्थ हैं उन सभी मे विश्व रूप ब्रह्म की व्याप्ति है। ससार के समस्त क्रिया कलाप उसकी लीला का परिणाम है। ब्रह्म मे विश्व और विश्व म ब्रह्म मानने वाली राधा प्रिय कृष्ण म ही जगत्पति का दर्शन करती हैं–

व्यापी है विश्व प्रियतम मे, विश्व म प्राण प्यारा।
यो ही मैंने जगत पति को श्याम म है विलोका ।।[136]

इस प्रकार कवि ने युगानुकूलता को दष्टि म रखते हुए जो आध्यात्मिक स्वरूप हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है, सच्चे अर्थों म वही उपयोगी अनुकरणीय और ग्राह्य है। इसी मान्यता के द्वारा तो वह अपने उद्देश्यो की पूर्ति मे सफल भी है।

भारतीय सस्कृति म ईश्वर के अवतार–कच्छप मत्स्य वाराह, नसिह वामन परशुराम, राम कृष्ण आदि की कल्पना की गई है। इन रूपो मे अवतार की मान्यता के मूल म मानव के क्रमिक विकास का प्रच्छन्न इतिहास है। विद्वानों का ऐसा विश्वास है मानव का विकास जल जीवा स आरम्भ होकर नसिह, वामन फिर पूण मनुष्य रूप म हुआ। अवतारों पर दढ विश्वास और श्रद्धा रखते हुए भारतीय समाज म राम और कृष्ण विशेष रूप से पूज्य एव भक्तो के आदश हैं। आदि कवि वाल्मीकि एव वेदव्यास ने राम कृष्ण की अलौकिकता एव गुरुता को स्वीकार किया है। श्रीकृष्ण जो असाधारण, मानवतर और दुस्साध्य कर्मों द्वारा शशवावस्था म ही अनेक दुष्टो का सहार करते हैं, उनका हरिऔध जी ने लौकिक और मानवीय रूप मे प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। गोवद्धन धारण प्रसग मे वह स्थान स्थान पर उनके प्रयत्न, शक्ति क्षमता आदि गुणो का गान करते हुए कहते है–

प्रति दरी प्रति पवत कदरा।
निवसते जिनमे व्रज लोग थे।
वहु सुरक्षित थी व्रज देव के।
परम यत्न सु चारु प्रबन्ध से ।।[137]

इतना प्रयत्न करने के बाद भी कवि कृष्ण के प्रति अविचल श्रद्धा प्रम और विश्वास का बदल नहो पाता इसी प्रसग मे कृष्ण की अलौकिकता स्पष्ट हो जाती है–

लख अलौकिक स्फूर्ति सुदक्षता।
चकित स्तम्भित गोप समूह था।
अधिक वधता यह ध्यान था।
व्रज विभूषण है शतध बने ।।[138]

कालियनागा प्रसग मे कृष्ण के मुकुटे पीताम्बर और गले म माला धारण किये हुए श्रीकृष्ण क रूप म कवि विस्मत सा हो जाता है। वह यह बिल्कुल भूल जाता है कि यह कृष्ण का लौकिक रूप चित्रित कर रहा है या अलौकिक रूप–

विचित्र थी शीश किरीट की प्रभा ।
कसी हुई थी कटि मे सुकाछनी ।
दुकूल स शोभित का त कध था ।
विलम्बिता थी वनमाल कठ मे ।।[139]

इन प्रसगा म स्वय श्रीकृष्ण का अलौकिक ब्रह्म रूप ही स्पष्ट होता है क्याकि गोवधन धारण की स्फूर्ति और कालियनाग के शिर पर विराज मान अपूव शोभा वाला रूप दोनो उन्हे असाधारणत्व एव अलौकिकत्व प्रदान कर देते हैं। इसलिए यह घोषणा कि 'मैंने कृष्ण को अवतारी ब्रह्म रूप मे नही स्वीकार किया है अटपटी लगती है। राम और कृष्ण का ब्रह्म रूप जन मानस मे इस प्रकार व्याप्त है कि उसे व्यक्ति की भावना से हठात् विच्छिन्न कर दिया जाय, यह सम्भव ही नही है।

हरिऔध जी ईश्वर के प्रति पूण आस्थावान है। उसकी सत्ता, शक्ति और उसका विराट स्वरूप इस प्रकार स जन जन म व्याप्त है कि किसी आपत्ति या दुघटना से सतप्त होने पर वह उसी ब्रह्म से प्राथना करता है। प्रियप्रवास म कस के द्वारा कृष्ण को आमत्रित किये जाने पर अपने इष्ट देवी देवताओ को यशोदा श्रद्धा एव भक्ति से मनाती हैं। वे श्रीष्ण पर आन वाले सकटो का निवारण एव उनके कुशल क्षेम के लिए जगदम्बा और जग दीश्वर से बार बार याचना करती हैं–

सकल भाँति हमे अब अम्बिके !
चरण पकज ही अवलम्बन है।
शरण जो न यहाँ जन का मिली।
जननि तो जगतीतल शून्य है।[140]

यशादा क हृदय म करुण एव विषाद का पारावार लहरा रहा है जिसस व मुक्ति पान क लिए आतनाद करती हुई ईश्वर के प्रति अटल विश्वास का परिचय देती है। राधा न भी प्रभु की सत्ता और उसकी भक्ति की महत्ता का स्वीकार करते हुए, प्यारे कृष्ण को उसस अभिन्न माना है।[141]

वदिक ग्र था, गीता और अन्य धमशास्त्रा के अनुसार ब्रह्म सवव्यापी है, वह समस्त भूता मे स्थित है, वही सभी आदि, मध्य और अवसान है, साथ ही विष्णु सूय, मरुत एव सम्पूण सष्टि मे उसी की व्याप्ति है।[142] *प्रियप्रवास के सोलहवें सग म शास्त्रों का उल्लेख* करते हुए गीता के ही अनुसार सारे प्राणी अखिल जग की मूर्तियाँ है उसी को'[143] स्वीकार

किया गया है। ब्रह्म, तारे अग्नि, रत्ना, मणि की आभा, पृथ्वी जल पवन, आकाश वक्ष, पक्षी आदि सभी जड़ चेतन पदार्थों म विद्यमान है।[144] इस प्रकार हरिऔध जी ने ईश्वर की असीम सत्ता उसकी सर्व व्यापकता और प्रभुता का जो सजीव वणन प्रस्तुत किया है, वह भारतीय सस्कृति के अनुरूप है और उनक पूण श्रद्धावान एव आस्थावान होन का परिचय प्राप्त होता है।

भारतीय सस्कृति म सत्य अहिंसा ब्रह्मचय अपरिग्रह और आस्तेय इन पाँच नियमो को मानव जीवन के लिए महत्वपूण बताया गया है। प्रियप्रवास' म भी इनका निर्वाह यथास्थान किया गया है। भारतीय साहित्य और सस्कृति म सत्य को असाधारण महत्व देत हुए जीवन म अधिकाधिक व्यवहार करन का आग्रह किया गया है। वद उपनिषद एव अय प्राचीन साहित्य सत्य को आत्मस्वरूप मानत हैं। प्रियप्रवास' म श्रीकृष्ण सत्य क अधिष्ठाता हैं और असत्य भाषी का समाजघाती कहकर उसे दूर कर देना ही श्रेयस्कर मानते हैं।[145] अन्तिम छ द म पूरे ग्रथ क तत्त्व का विवेचन करते हुए अवनि जन के सच्चे स्नेही रूप मे श्रीकृष्ण का उल्लख है। व मात्र गोपिकाओ के नहीं अपितु पथ्वी तल क समस्त प्राणि जगत क प्रिय हैं और सत्य के उदघोषक हैं–

सच्चे स्नेही अवनिजन वे देश क श्याम जसे।
राधा जसी सत्य हृदया विश्व प्रेमानुरक्ता॥
हे विश्वात्मा! भरत भुव के अक मे और आवें।
एसी व्यापी विरह घटना किन्तु कोई न होव॥[146]

श्रीकृष्ण सत्यादश' की प्रतिमूर्ति है, इसलिए जब किसी व्यक्ति का कत्तव्यो म लीन देखत हैं तो अत्यधिक प्रसन्न होते हैं और कतव्यच्युत होकर अधम करन वाल व्यक्ति को देखकर उन्हें बहुत पीडा होती है यही नही वे उसे सन्माग पर चलने की शिक्षा दते हैं।[147]

लोक हित और विश्व प्रेम श्रीकृष्ण क जीवन मे इस प्रकार रम गया है कि इसक निवाह मे वे जीवन को चरम लक्ष्य मानते हैं। उनका यही सच्चा और दृढ व्रत है। इसलिए निष्काम होकर उन्होंन व्रजधरा को लोक हित के लिए प्रोत्साहित करत हुए सत्यता को ही जीवन का व्रत बना लिया है। उद्धव ने बड सुन्दर ढग से श्रीकृष्ण के चरित्र का उदघाटन किया है–

ऐसे एस जगत हित के काय हैं चक्षु आग।
है सारे ही विषय जिनके सामन श्याम भूले।
सच्चे जी स परम व्रत क वे व्रती हो चुके हैं।
निष्कामी स अमर कृति क कुलवर्ती अत हैं।[148]

कवि ने सत्य का जो व्यावहारिक पक्ष प्रस्तुत किया है वही भारतीय सस्कृति की मौलिकता है।

'अहिसा परमाधर्म' को स्वीकार करते हुए भारतीय सस्कृति म अहिसा को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। साख्य योग के यम नियमो म अहिसा को सर्वप्रथम माना गया है।[149] मनुस्मृति में दस यमो (ब्रह्मचर्य, दया क्षमा, ध्यान सत्य, नम्रता अहिसा चोरी का त्याग, मधुर स्वभाव और इन्द्रिय दमन) मे अहिसा की महत्ता स्वीकार की गयी है।[150] उस समय जब कोई व्यक्ति समाज का उत्पीडन कर रहा हो, कष्ट दे रहा हो अथवा किसी प्रकार से समाज को हानि पहुँचा रहा हो, ऐसी दशा म उसका विनाश करना हिंसा नही मानी जाती। भगवान कृष्ण ने गीता मे यह तथ्य स्वीकार किया है।[151] हरिऔध जी गीता के इस दर्शन के पूर्ण समर्थक हैं। *गांधी जी की अहिंसावादी विचारधारा से प्रभावित होकर हिंसा को निंदित* कर्म कहते अवश्य हैं किन्तु पापकर्मियो, समाज के उत्पीडितो, स्वजाति द्रोही, निंद्यकर्मी आदि ऐसे राक्षसी वृत्ति वालो के लिए क्षमा नही, उनका वध ही श्रेयस्कर स्वीकार करते हैं।[152]

ब्रह्मचर्य का अर्थ है—संयमपूर्वक जीवन व्यतीत करना। कुछ विद्वान् ब्रह्म का अर्थ महान विशाल और चर्य का अर्थ—चलना मानते हैं। अतएव 'ब्रह्म होने के लिए विषयो के छोटे छोटे रूपो से निकल कर आत्म तत्व के विराट रूप म अपने को अनुभव करने के लिए चल पडना 'ब्रह्मचर्य कहलाता है। जीवन के प्रारम्भिक काल म ज्ञानार्जन के लिए ब्रह्मचर्य पालन का भारतीय सस्कृति म विशेष महत्व प्रदान किया गया है। यम नियमो के अन्तर्गत ब्रह्मचर्य का समावेश है जिसका अर्थ है—इन्द्रिय निग्रह, जिसके निर्वाह की जीवन पर्यन्त आवश्यकता है। हरिऔध जी ने राधा कृष्ण दोनो को सयमी रूप में प्रस्तुत किया है। वे दोनो सासारिक भोग एव विलासिता से बिल्कुल दूर हैं। अन्त करण की क्षुद्र विषय वासनाओ से परे रह कर विराट रूप में आत्मतत्व का दर्शन करते हैं। राधा कौमार्य व्रत धारण करके अपना जीवन ही व्यतीत कर देती हैं। उनके इस व्रत की पूर्णता विश्व कार्य म लग जाने पर ही सम्भव है—

> आज्ञा भूलूँ न प्रियतम की विश्व के काम आऊँ।
> मेरा कौमार व्रत भव म पूर्णता प्राप्त होवे।।[153]

राधा ही नही ब्रज प्रदेश की समस्त गोपियाँ अपने ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए श्रीकृष्ण के आगमन की प्रतीक्षा म रत थीं। राधा अपने दिव्य

गुणो एव आत्मबल से शिक्षा देकर उन्हे सान्त्वना देती और उनके दुखो को दूर करती थी–

> जा थीं कौमार व्रत निरता बालिकाएँ अनेका ।
> वे भी पा के समय ब्रज म शांति विस्तारती थी ।
> श्रीराधा के हृदय बल से दिव्य शिक्षा गुणा मे ।
> वे भी छाया सदश उनकी वस्तुत हो गयी थी ।।[154]

श्रीकृष्ण न सयम एव धय के साथ अनेक दुष्टो रा सहार किया है और सारी मानवता को पाप कर्मी के प्रति विद्राह के लिए सचेष्ट किया है–

> अत सबा से यह श्याम न कहा ।
> स्व जाति उद्धार महान धम है ।
> चलो करें पावक म प्रवेश औ ।
> स धेनु लेवें निज जाति को बचा ।[155]

इस प्रकार कवि ने ब्रह्मचय को नवीन उदभावनाओ के साथ श्रीकृष्ण राधा एव गोपियो को जीवन के अश रूप म प्रस्तुत किया है ।

'अस्तेय' का अथ है अपना हित न सोचकर सदैव दूसरा क कल्याण का उपाय सोचना । प्रियप्रवास म अनेक पात्र स्तेय' अर्थात दुष्प्रवत्तियुक्त दुराचारी हैं, वे जन धन धा य का अपहरण करके सदव अपना कोष भरने म तत्पर रहने है । इसक विपरीत राधा और कृष्ण दोना विश्वहित क लिए आत्मोत्सग करते हुए अस्तेय का पूर्णरूपेण पालन करते हैं । उद्धव राधा का आत्म उत्सग की महत्ता बताते हुए उसी का जीवन सफल मानते हैं जो त्याग का ग्रहण कर भाग का त्याग करता है–

> है आत्मा का न सुख किसको विश्व क मध्य प्यारा ।
> सारे प्राणी स रुचि इसकी माधुरी म बधे हैं ।
> जो होता है न वश इसक आत्म उत्सग द्वारा ।
> ऐ कान्त है सफल अवनी मध्य आना उसी का ।।[156]

इस प्रकार कवि सवभूत हितकारी जीवन को महत्व प्रदान करते हुए 'अस्तेय' का व्यावहारिक पक्ष प्रस्तुत करने म सफल हुआ है ।

भारतीय सस्कृति म त्याग' की महत्ता को भी स्वीकार किया गया है । यहाँ भोग की अपेक्षा त्याग प्रवत्ति की अपेक्षा निवत्ति, ग्रहण की अपेक्षा दान और सग्रह की अपेक्षा अपरिग्रह को महत्व दिया गया है । यहाँ का नियम–भोग मे लिप्त न हाकर उस भोगकर हट जाओ । यही अपरिग्रह है ।[157] अपरिग्रह' त्यागपूवक जीवन का ओर सकेत करता है ।

प्रियप्रवास मे त्यागमय जीवन अपरिग्रह का पालन कर-व्यतीत करन पर विशेष बल दिया गया है। इसमे मुक्ति प्राप्त करन की कामना से किये गय कर्मों को भी त्यागने का निर्देश है। क्योंकि इस प्रकार की कामना से युक्त व्यक्ति आत्मार्थी कहा जाता है आत्मत्यागी नही। आत्म-त्यागी वह है जो सभी इच्छाओ का त्यागकर लाक सेवा मे लगा हो।[158] प्रियप्रवास मे श्रीकृष्ण त्याग की प्रतिमूर्ति हैं। वे सभी ब्रजवासियो को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि बिना मोह ममता का त्याग किये कोई भी विश्व का महान काय नही हो सका है और न ही त्याग के बिना हमारा ज म ही साथक हो सकता है–

> बिना न त्यागे ममता स्वप्राण की।
> बिना न जोखा ज्वलदाग्नि मे पड़े।
> न हो सका विश्व महान काय है।
> न सिद्ध होता भव-ज म हेतु है।।[159]

श्रीकृष्ण चरित्र पर जो नवीन पुट दिया है वह लोकोपकारक और विश्वसेवा का है। इसलिए वे योगियो की भाँति लिप्सा और लालसा को त्यागकर लाक हित मे सदव रत रहते है। उद्धव के द्वारा उनका भेजा हुआ सदेश पाकर राधा भी वैसा ही आचरण करने लगती हैं। वह ब्रजभूमि के समस्त प्राणियो के दुख निवारण म ही सदैव लगी रहती हैं। राधा का जो उदात्त रूप प्रियप्रवास म प्राप्त है, वह अ यत्र दुलभ है। वह विरह-व्यथित लोगो को सा त्वना देकर उनके कष्टो का निवारण करतीं और निर तर दीनो एव निबलो की सहायता म लगी रहती ह। उ ह अपने सुख एव हित की चि ता नही दूसरो के हितो के लिए सदव चि तित रहती है। इसीलिए देवी की भाँति उनकी पूजा होती है।[160]

सामञ्जस्य भाव

भारतीय सस्कृति विभिन्न सस्कृतियो का सगम स्थल है। ऋषियो महर्षियो, महात्माओ लाक नेताओ और अवतार धारण करने वाले महा पुरुषो ने मानवीय मूल्यो को दष्टि मे रखकर विश्व मे सम वय बनाये रखन के लिए समय समय पर उपदेश दिये हैं और नयी नयी मा यताएँ स्थापित की है। भगवान् राम, श्रीकृष्ण, गौतम बुद्ध आदि का चरित्र सम वय का आदश प्रस्तुत करता है। त्याग के साथ भक्ति, भौतिकता के साथ आध्यात्मिकता एव एकता के साथ अनेकता का भारतीय सस्कृति म स्वरूप विद्यमान है। यहाँ अनक विदेशी सस्कृतियों के गुणों को हमारी सस्कृति न अपन

म आत्मसात कर लिया है । विविध भाषा, जाति, धम, सम्प्रदाय स युक्त हमारा देश विविधता मे एकता का आदश प्रस्तुत करता है।

प्रियप्रवास मे श्रीकृष्ण के चरित्र म सम वय की भावना सवत्र विद्यमान है । उनकी दष्टि म कोई न बडा है न कोई छोटा । व सदैव विश्वहित का चिन्तन और उसी के सम्पादन म प्रवृत्त रहते हैं ।[16] राधा का चरित्र समन्वय का सु दर आदश प्रस्तुत करता है । उनमे त्याग, तपस्या, कम भक्ति, ज्ञान आदि का समन्वित रूप प्राप्त होता है । कवि ने विश्व म ब्रह्म और ब्रह्म म विश्व का दशन कराया है । जगत क पदाथ प्राणी-सभी विश्वात्मा स्वरूप है । जगत को ब्रह्मरूप स्वीकार करने से सत्य और परिवतनशील होने स उसे असत्य कहा गया है । इसमे सत्य और असत्य का भी सयोग विद्यमान है । इस प्रकार सम्पूण प्रियप्रवास की कथा के विविध घटना क्रमो मे समन्वय भाव क सफल प्रयोग का निर्वाह किया गया है ।

भक्ति

भक्ति का तात्पय इष्टदेव की उपासना से है । इसकी प्रवत्ति मानव समाज मे वैदिक युग स है । समय और कालक्रमानुसार इष्ट देव और उनकी उपासना पद्धतिया म परिवतन होता रहा है । वैदिक युग मे इन्द्र वरुण, अग्नि आदि उपास्यदेव रहे हैं, पुन ब्रह्मा विष्णु महेश की अभ्यचना की जाने लगी । कालान्तर म विष्णु के विविध अवतारो राम कृष्ण एव शिव दुर्गा आदि की उपासना का प्रादुर्भाव हुआ । यह भक्ति भगवान के सगुण साकार और निगु ण निराकार रूप मे प्रचलित हुई । पुराणकारो न विष्णु को परात्पर ब्रह्म मानकर उनके अवतार धारण करने की पुष्टि की है ।

प्रियप्रवास म नवधा भक्ति के उन्ही नामो का उल्लेख है जो मानस और भागवत मे विवेचित हैं, पर तु भक्ति के स्वरूप निर्धारण मे पर्याप्त अ तर है । कवि की यह भक्तिपूण मानवीय धरातल पर प्रतिष्ठित है, जिसम रोगी, उत्पीडित एव दुखी जनो की करुण पुकार सुनना, भले भटको को स माग दिखाना, सच्चरित्र गुणवान देश प्रमी गुरुजन एव आत्म त्यागी व्यक्ति के आग नतमस्तक होना, मानव कल्याण के लिए अपना सवस्व योछावर करना, श्रेष्ठ कार्यों का सम्पादन करना भयभ्रमित प्राणी को मुक्ति दिलाना मानवेतर जड चेतन पदार्थों के प्रति सहृदयता एव दीन हीन की सहायता करना आदि भक्ति के रूपो का चित्राकन नवधा भक्ति के अन्तगत किया गया है ।

'प्रियप्रवास' की भक्ति भारतीय मूल सिद्धान्तो का निर्वाह करते हुए

युगानुकूल और नवीन है। इसम प्राचीन आडम्बरा क स्थान पर बुद्धि एव तक सम्मत दप्टि प्रदान की गयी है। कवि का यह दप्टिकोण है कि इसके द्वारा वयक्तिक सुधार ही नही, सामाजिक जीवन के अनेक विभेद अपने आप समाप्त हा सकते है और ऐसी सस्कृति का प्रादुर्भाव हो सकता है जो प्राचीन आदश परम्पराओ का सम्वाहक हाकर नव्य और अन्य सभी दप्टिया से उपयोगी हो। इस रूप म नवधा भक्ति को प्रस्तुत करने का कवि का यही उद्देश्य है जिसमे वह पूण सफल है।

खण्ड–ग

पात्र-चरित्र-अभिव्यक्ति

काव्य म पात्रो का चरित्र चित्रण, एक प्रमुख तत्व होता है, जिसक अन्तगत नायक नायिका तथा अन्य पात्रा का वणन किया जाता है। 'प्रिय प्रवास' की कथावस्तु प्रयुक्त पात्रो का चरित्र चित्रण भी प्रशसनीय है। इनके पात्र सस्कृति के उन्नायक श्रीकृष्ण जी से सम्बद्ध है।

'प्रियप्रवास' म अनेक पात्र हैं जिनकी अपनी पथक पृथक चारित्रिक विशेषता एव महत्व है। यहाँ पर कोई पात्र अपनी किसी चारित्रिक विशेषता के कारण महत्व पाता है, तो कोई अपनी विरह वेदना अथवा हृदयानुभूति का चित्रण करता है। कोई वात्सल्य को अभिव्यजित करता है तथा अन्य दूसरे पात्रा के माध्यम स दाम्पत्य प्रेम की सरस धारा प्रवाहित हो रही है। कोई पात्र अपने प्रियतम के गुणो को वर्णित करते हुए प्रसन्न हो रहा है, तो कोई असीम विरह वेदना से पीडित होकर विक्षिप्त सा दिखलाई देता है। वस ता प्रियप्रवास मे अनेक बालक, वद्ध, गाप, गापिकाएँ, बलराम अक्रूर, व्याम तथा विभिन्न राक्षस आदि भी पात्र रूप म अवतरित हुए हैं, परन्तु मुख्य रूप स इसम पाच प्रमुख पात्र चरित्र की दप्टि म उल्लेखनीय हैं यथा–श्रीकृष्ण, राधा, नन्द, यशोदा और उद्धव। अत इन्ही पाँच पात्रो की चारित्रिक विशेषताओ का विस्तृत विवेचन करना अपेक्षित जान पडता है।

श्रीकृष्ण

'प्रियप्रवास म श्रीकृष्ण का युगानुकूल सवथा एक नवीन रूप म प्रस्तुत किया गया है। हरिऔध जी न इन्ह परब्रह्म लीलाधारी, अवतारी न मानकर एक पुरुष रत्न, लाक सवी, महापुरुष के रूप म चित्रित किया है। उनके इस रूप म चित्रित किये जान का प्रमुख कारण आधुनिक पाश्चात्य

शिक्षा का प्रसार है, जो कि अवतारवाद और अलौकिकता को स्वीकार न करके केवल तकसगत मता का स्वीकारता है। पाश्चात्य सम्यता स प्रभावित तथाकथित प्रगतिशील लोगा के बीच म लुप्त हुए श्रीकृष्ण क प्रभाव को पुन स्थापित करके इन सभी लागा के हृदय म कृष्ण के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करने की दष्टि स हरिऔध जी ने श्रीकृष्ण को एक महापुरुष के रूप म प्रतिष्ठित किया है।

हरिऔध जी न श्रीकृष्ण को मानव जीवन के सन्निकट लाने की दृष्टि स इनमे मानवता का चरम विकास दर्शाते हुए यह प्रमाणित करने का प्रयास किया है कि प्रारम्भिक मत्स्यावतार से लेकर श्रीकृष्ण क अवतार तक मानवता का क्रमिक विकास हुआ है और मानवता का यही चरम विकास ईश्वरत्व है। 'प्रियप्रवास' मे कही कही पर श्रीकृष्ण के बालक रूप का भी वणन मिलता है जिसम उ हें कुसुम की शैया पर पद पकज उछालते माता यशोदा को रिझाते, अपनी दतुलियो को दर्शाते, किलकारी मारते, गिरते पडते, ठुमक ठुमक कर चलने का अभ्यास करते तथा बलराम एव अ य गोप बालों के साथ क्रीडारत प्रस्तुत किया गया है। यथा—

जब रहे ब्रजच द छ मास क,
दशन दो मुख मे जब थे लसे।
तब पडे कुसुमोपम तल्प प,
वह उछाल रह पद कज थे।

\+ \+ \+

स बलराम स बाल मण्डली,
बिरहत बहु म दिर म रहे।
विचरते हरि थ अकेले कभी,
रुचिर वस्त्र विभूषण से सजे ॥[162]

(अ) प्रारम्भिक जीवन–प्रियप्रवास में श्रीकृष्ण सबस पहले एक गोप बालक, गोप मण्डली क नेता, गाय चराने वाले एक परम सु दर–अद्वितीय बालक के रूप म दिखाई पडते हैं। वे अपन अ य ग्वाल बालो के साथ गायो और बछडो को लकर गोकुल आ रहे है और उस समय उनके परम अलौकिक सौ दय का देखन क लिए सम्पूण गाकुल ग्राम वासी उमड पडते हैं। वह मधुर मुरली बजा रहे हैं, गायो तथा ग्वाला के साथ आकर सभी नर नारियो का हृदय विमुग्ध कर रहे हैं, उनका शरीर नील कमल जसा सु दर है तथा सम्पूण शरीर परम मनोहर है, जिसके अग अग स सरसता एव

कोमलता छलक रही है। उनके कमर से पीताम्बर तथा वक्षस्थल में वन-माला सुशोभित है और दोनों कानों में श्रेष्ठ मकराकृति कुण्डल, सिर पर सुकोमल अलकावलियो के मध्य मोरमुकुट, मस्तक पर केसर रेखा, अरुण ओठो पर अमृत बरसाने वाली मुरली मद मद मधुर स्वर म गूँजती हुई समस्त जन मानस को आह्लादित कर रही है। परम प्रेमाकुल जन मानस के मध्य अलौकिक सौंदय सम्पन्न श्रीकृष्ण गोकुल मे प्रवेश करते हुए दिखाये गये हैं।[163]

श्रीकृष्ण के प्रारम्भिक रूप का इतना दिव्य, भव्य तथा मनमोहक वणन है कि सम्पूण गोकुल उनके रूप माधुरी म लीन हो गुणा के अगाध समुद्र म डूबने उतराने लगता है तथा ऐसी अलौकिक मूर्ति को व्यक्ति अपने हृदय म अंकित कर लेता है–

मुदित गोकुल की जन मण्डली।
जब ब्रजाधिम सम्मुख जा पडी।
निरखने मुख की छवि यों लगी।
तृषित चातक ज्यों घन की घटा॥

(आ) शीलवान एव सदाचारी–रूप लावण्य स युक्त, परम ऐश्वय शाली एव अलौकिक शक्ति सम्पन्न श्रीकृष्ण शील की अतुलनीय मूर्ति हैं। मथुरा गमन के समय उनका शील दशनीय है। जिस समय अक्रूर के साथ कस के निमत्रण पर श्रीकृष्ण मथुरा जाने को तैयार होते हैं, उस समय गोकुल की समस्त जनता विरह-व्याकुल हो उठती है जिसे देखकर श्रीकृष्ण अति शीघ्र चले जाना चाहते हैं। वह माँ यशोदा के समीप जाकर चरण स्पश करते हैं और धयपूर्वक माँ आज्ञा ले प्रस्थान करना चाहते हैं। माता की आज्ञा प्राप्त कर उनकी चरण रज ब्राह्मणों और बंधु बान्धवा की चरणों वन्दना कर रथ पर बैठते हैं–

ले के माता चरण रज को श्याम श्रीराम दोनों।
आये विप्रों निकट उनके पाँव की वन्दना की।
भाई बन्धों सहित मिल के हाथ जोड़ा बड़ों को।
पीछे बैठे विशद रथ में बोध देके सबों को॥[164]

श्रीकृष्ण के शील वत्ता मे कवि इतना प्रभावित है कि उसे कृष्ण के चरित्र में राम जैसा शील स्पष्ट दिखाई पडता है। यथा–

तदपि चित्र बना है श्याम का चाह ऐसा।
वह निज–सुहृदो से थे स्वय हार खाते।

भूमिका क अतिरिक्त भी प्रियप्रवास म अनेक स्थलों पर श्रीकृष्ण क लिए हरि, केशव, मुकु द आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है जो स्पष्ट रूप से ईश्वरत्व के वाचक रहे हैं। श्रीकृष्ण क लिए ईश्वरत्व वाचक इन शब्दों के अतिरिक्त भी हरिऔध जी ने अनेक स्थानो पर उनके अलौकिक होने का स्पष्ट उल्लेख किया है–

परम अदभुत बालक है यही।
जगत को यह थी जतला रही।
कब भला न अजीव सजीवता।
परस के पद पकज पा सके।।[171]

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हरिऔध जी श्रीकृष्ण को एक आदश महापुरुष के साथ ईश्वर और परमब्रह्म मानते हैं।

राधा

प्रियप्रवास म हरिऔध जी ने राधा को महापुरुष श्रीकृष्ण की प्रेमिका विदुषी, लोक सेविका और विश्व प्रेमिका रूप मे प्रस्तुत किया है। ऐसा करने का हरिऔध जी का उद्देश्य आधुनिक भ्रमित भारतीय नारी के सम्मुख एक आदश प्रस्तुत करना था। रीतिकालीन कवियो द्वारा वणन है राधा के लौकिक नायिका रूप को समाप्त कर उन्हें आधुनिक शिक्षित तथा पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित नवयुवकों म श्रद्धास्पद बनाना वग का उद्देश्य था। उ होने राधा कृष्ण का सयोग वर्णन को न प्रस्तुत कर उनका उल्लेख मात्र करके परम्परा का निर्वाह किया है–

यह विचित्र सुता वषभानु की।
ब्रज विभूषण म अनुरक्त थी।
सहृदया यह सु दर बालिका।
परम कृष्ण समर्पित चित्र थी।[172]

हरिऔध जी द्वारा राधा को सदगुणवती परोपकारता शास्त्र चिंता परा सदभाव परिता तथा अन य हृदया स्नेहमयी रूपों आदि का ढग मे चित्रित किया गया है–

मदवस्त्रा सदलकृता गुणयुता सवत्र सम्मानिता।
रोगी वद्ध जनोपकारनिरता सच्छास्त्र चिन्तापरा।
सदभावातिरता अन य हृदया सत्प्रेम सपोषिका।
राधा थी सुमना प्रसन्नवदना स्त्रीजाति रत्नोपमा।।[173]

कवि ने कृष्ण के सदेश के उपरान्त राधा को धययुक्ता चित्रित किया है जिसके द्वारा राधा के चरित्र म नवीन रूप के दशन होते हैं।

(अ) प्रारम्भिक जीवन–हरिऔध जी ने राधा का एक अनुपम सौन्दर्य-शालिनी बालिका रूप मे वर्णित किया है। उनका अग प्रत्यग दिव्य है। उनके मुख पर सदैव मुस्कान रहती है। वह क्रीडा कला मे लीन, मदु भाषिणी एव माधुर्य की साकार प्रतिमा हैं। उनके कमलवत नेत्र उन्मत्तकारी हैं तथा उनके शरीर की स्वर्णिम आभा, मधुर मुस्कान, कुंचित अलकें मन मानस को आह्लादित करने वाली हैं। वे सब कलाओ मे प्रवीण हैं तथा अपने रूप माधुर्य, सुकोमलता एव कमनीयता से रति को भी विमोहित करने की क्षमता रखती हैं। वे सदव धवल वस्त्र श्रेष्ठ अलकरणा से विभूषित तथा समस्त स्त्र्युचित गुणा से सम्पन्न हैं। सवदा श्रेष्ठ शास्त्रो का अनुशीलन करने वाली, सवभूत सवारत, अनन्य हृदया एव सात्विक प्रेयसी हैं और अपने इन्ही गुणा के कारण वे समस्त स्त्रिया म श्रेष्ठ हैं।[174] राधा का प्रारम्भिक व्यक्तित्व अत्यन्त मार्मिक, हृदयाकर्षक श्रेष्ठ भारतीय नारी के सम्पूर्ण गुणो से सम्पन्न तथा एक आदर्श बाला की जीती जागती प्रतिमूर्ति हैं।

(आ) प्रणय की सौम्य मूर्ति–राधा बचपन से ही कृष्णमय थी और किशोरावस्था मे उनके हृदय म बचपन का शुद्ध सात्विक प्रेम प्रणय के रूप म परिवर्तित हो गया–

यह विचित्र सुता वृषभानु की।
व्रज विभूषण म अनुरक्त थी।
सहृदया यह सुन्दर बालिका।
परम–कृष्ण–समर्पित–चित्त थी ॥[175]

राधा के हृदय मे बचपन का वह सात्विक प्रेम कृष्ण के प्रति इतना मुखरित हो चुका था कि भोजन शयन क्या प्रतिक्षण वह कृष्ण के प्रेम मे लीन रहती थी। कृष्ण के मथुरा गमन का समाचार सुनते ही राधा एक सुकुमार कली की भाँति कुम्हला जाती है और उनका हृदय विरह वेदना म उद्वेलित हो उठता है। उन्हें सम्पूर्ण सृष्टि शून्य तथा विरह-वेदना म दग्ध प्रतीत होती है। उन्हें घर अच्छा नहीं लगता तथा उनका हृदय मर्माहत होकर अनेक आशकाओ से परिपूर्ण हो जाता है। वे सोचती हैं कि मैं कृष्ण के चरणो मे अपना हृदय तो पहले ही चढा चुकी हू केवल उन्हे विधिपूवक वरण करने की कामना शेष थी, वह अपूर्ण रह गयी। यह सब भाग्य का कुफल है जो टल नहीं सकता–

हृदय चरण म तो मैं चढा ही चुकी हू।
सविधि वरण की थी कामना और मेरी।
पर सफल हमे सो है न होती दिखाती।
वह कब टलता है भाल म जो लिखा है ॥[176]

भूमिका के अतिरिक्त भी प्रियप्रवास मे अनेक स्थलो पर श्रीकृष्ण क लिए हरि, केशव, मुकुद आदि शब्दो का प्रयोग हुआ है जो स्पष्ट रूप स ईश्वरत्व के वाचक रहे हैं। श्रीकृष्ण के लिए ईश्वरत्व वाचक इन शब्दो के अतिरिक्त भी हरिऔध जी ने अनेक स्थानो पर उनके अलौकिक होने का स्पष्ट उल्लेख किया है–

परम अदभुत बालक है यही।
जगत को यह थी जतला रही।
कब भला न अजीव सजीवता।
परस के पद पकज पा सके।।[171]

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हरिऔध जी श्रीकृष्ण को एक आदश महापुरुष के साथ ईश्वर और परमब्रह्म मानते हैं।

राधा

प्रियप्रवास मे हरिऔध जी ने राधा को महापुरुष श्रीकृष्ण की प्रेमिका विदुषी लोक सेविका और विश्व प्रमिका रूप मे प्रस्तुत किया है। एसा करने का हरिऔध जी का उद्देश्य आधुनिक भ्रमित भारतीय नारी के सम्मुख एक आदश प्रस्तुत करना था। रीतिकालीन कवियो द्वारा वणन है राधा के लौकिक नायिका रूप को समाप्त कर उ हें आधुनिक शिक्षित तथा पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित नवयुवका म श्रद्धास्पद बनाना वग का उद्देश्य था। उ होंने राधा कृष्ण का सयोग वणन को न प्रस्तुत कर उनका उल्लेख मात्र करके परम्परा का निर्वाह किया है–

यह विचित्र सुता वषभानु की।
व्रज विभूषण मे अनुरक्त थी।
सहृदया यह सुदर बालिका।
परम कृष्ण समर्पित चित्र थी।[172]

हरिऔध जी द्वारा राधा को सदगुणवती परोपकारता शास्त्र चिंता परा सदभाव परिना तथा अन य हृदया, स्नेहमयी रूपो आदि का ढग मे चित्रित किया गया है–

मदवस्त्रा सदलकृता गुणयुता सवत्र सम्मानिता।
रोगी वद्ध जनोपकारनिरता सच्छास्त्र चिन्तापरा।
सदभावातिरता अनन्य हृदया सत्प्रेम सपोषिका।
राधा थी सुमना प्रसन्नवदना स्त्रीजाति रत्नोपमा।।[173]

कवि ने कृष्ण के सदेश के उपरान्त राधा को धैययुक्ता चित्रित किया है जिसके द्वारा राधा के चरित्र म नवीन रूप के दशन होत हैं।

(अ) प्रारम्भिक जीवन–हरिऔध जी न राधा को एक अनुपम सौन्दय-शालिनी बालिका रूप म वर्णित किया है। उनका अग प्रत्यग दिव्य है। उनके मुख पर सदैव मुस्कान रहती है। वह क्रीडा कला मे लीन, मृदु-भाषिणी एव माधुय की साकार प्रतिमा हैं। उनके कमलवत नेत्र उन्मत्तकारी हैं तथा उनके शरीर की स्वर्णिम आभा मधुर मुस्कान, कु चित अलकें मन मानस को आह्लादित करने वाली है। वे सब कलाओ मे प्रवीण है तथा अपन रूप माधुय, सुकोमलता एव कमनीयता से रति को भी विमोहित करने की क्षमता रखती हैं। वे सदव धवल वस्त्र श्रेष्ठ अलकरणा से विभूषित तथा समस्त स्त्र्युचित गुणा से सम्पन्न हैं। सवदा श्रेष्ठ शास्त्रो का अनुशीलन करने वाली, सवभूत सेवारत, अनन्य हृदया एव सात्विक प्रेयसी हैं और अपने इन्हीं गुणो के कारण वे समस्त स्त्रिया मे श्रेष्ठ हैं।[174] राधा का प्रारम्भिक व्यक्तित्व अत्य त मार्मिक, हृदयाकषक श्रेष्ठ भारतीय नारी के सम्पूण गुणो से सम्पन्न तथा एक आदश बाला की जीती जागती प्रतिमूर्ति हैं।

(आ) प्रणय की सौम्य मूर्ति–राधा बचपन से ही कृष्णमय थी और किशोरावस्था मे उनके हृदय म बचपन का शुद्ध सात्विक प्रेम प्रणय के रूप म परिवर्तित हो गया–

> यह विचित्र सुता वृषभानु की।
> ब्रज विभूषण मे अनुरक्त थी।
> सहृदया यह सुन्दर बालिका।
> परम–कृष्ण–समर्पित–चित्त थी ॥[175]

राधा के हृदय मे बचपन का वह सात्विक प्रेम कृष्ण के प्रति इतना मुखरित हो चुका था कि भोजन शयन क्या प्रतिक्षण वह कृष्ण के प्रेम में लीन रहती थी। कृष्ण के मथुरा गमन का समाचार सुनते ही राधा एक सुकुमार कली की भांति कुम्हला जाती है और उनका हृदय विरह वेदना स उद्वेलित हो उठता है। उन्हे सम्पूण सष्टि शून्य तथा विरह वेदना मे दग्ध प्रतीत होती है। उन्हें घर अच्छा नहीं लगता तथा उनका हृदय मर्माहत होकर अनेक आशकाओ से परिपूण हो जाता है। वे सोचती हैं कि मैं कृष्ण के चरणो मे अपना हृदय तो पहले ही चढा चुकी हू केवल उन्हे विधिपूवक वरण करने की कामना शेष थी, वह अपूण रह गयी। यह सब भाग्य का कुफल है जो टल नही सकता–

> हृदय चरण म तो मैं चढ़ा ही चुकी हू।
> सविधि वरण की थी कामना और मेरी।
> पर सफल हम सो है न होती दिखाती।
> वह कब टलता है भाल मे जो लिखा है ॥[176]

इस प्रकार हरिऔध जी ने प्रियप्रवास में राधा को प्रणय की सौम्य मूर्ति रूप में चित्रित करके भारतीय नारी के परम पवित्र प्रेम को प्रदर्शित किया है।

(इ) विरह-व्यथिता राधा–प्रियप्रवास की राधा कृष्ण के विछोह में परम उन्मना तथा दिन रात क्रन्दन करती हुई चित्रित हैं। कृष्ण की श्यामल सौम्य मूर्ति के दर्शन की उत्कट अभिलाषा उन्हें व्यथिता एवं विक्षिप्ता सी बना देती है। इसी कारण वह प्रातःकालीन पवन की निन्दा करती हुई उसे निष्ठुर एवं पापिष्ठा कहती हैं और पुनः उसी को दूती बनाकर कृष्ण के पास अपना विरह सन्देश भेजने के लिए उससे मथुरा जाने का आग्रह करती हैं। यही नहीं वे पवन को बड़ी ही मार्मिकता से मथुरा तक का रास्ता समझाती हुई विभिन्न पद्धतियों से अपनी विरह वेदना को कृष्ण से कहने का अनुनय करती है–

सतापों को विपुल बढ़ता देख के दुःखिता हो।
धीरे बोलीं सदुख श्रीमती राधिका यों।
प्यारी प्रातः पवन इतना क्यों मुझे है सताती।
क्या तू भी है कलुषित हुई काल की क्रूरता से ॥[177]

(ई) कृष्ण की अनन्य उपासिका एवं शील स्वरूपा–प्रियप्रवास की राधा कृष्ण प्रेम में इस सीमा तक अनुरक्त हैं कि उन्हें सम्पूर्ण सृष्टि कृष्णमय जान पड़ती है। उन्हें कालिन्दी के जल, सन्ध्या की अरुणिमा निशा की श्यामता में कृष्ण के दर्शन होते हैं। यही नहीं उन्हें उषा में कृष्ण प्रेम तथा सूर्य में कृष्ण का तेज दिखाई पड़ता है। भ्रमर समूह, खंजन, मृग हाथी की सूँड, शुक की नासिका, दाड़िम, बिम्बफल, केला, गुल आदि में कृष्ण के विभिन्न अंगों के दर्शन होते हैं। राधा को सम्पूर्ण प्रकृति की रूप माधुरी में कृष्ण का अनुपम सौन्दर्य पृथ्वी के प्रत्येक भाग में कृष्ण की सौम्य मूर्ति एवं पक्षियों के कलरव में मुरली की मधुर ध्वनि सुनाई पड़ती है–

कालिन्दी एक प्रियतम के गात की श्यामता हो।
मेरे प्यासे दृग युगल के सामने है न लाती।
प्यारी लीला सकल अपने कूल की मंजुता से।
सद्भावों के सहित चित्त में सर्वदा है लसा ही ॥[178]

राधा कृष्ण के अनन्य प्रेम में इस सीमा तक लीन हो चुकी हैं कि वे स्वयं कृष्णमय हो चुकी हैं तथा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को कृष्णमय देखती हैं। इस प्रकार राधा का विकारहीन सात्विक प्रणय कृष्ण को विश्वात्मा जगत्पति प्रभु सर्वेश्वर मानकर उनकी उपासना में लीन हो जाती है और

वे विश्वपूजा तथा प्राणिमात्र की सेवा को ही कृष्ण की सच्ची सेवा, भक्ति और उपासना मान लेती हैं।[179]

(उ) अनन्य लोक सेविका—उद्धव से मिलने तथा कृष्ण का संदेश सुनने के उपरान्त राधा के चरित्र मे अद्भुत परिवर्तन हो गया। उद्धव के सन्देश कि लोक कल्याण मे व्यस्त होने के कारण कृष्ण व्रज आने मे असमर्थ हैं और उन्होंने व्यक्तिगत सुख की अपेक्षा लोक कल्याण को अधिक महत्व देते हुए सन्देश भेजा है। प्रत्युत्तर मे राधा का कथन दृष्टव्य है—

> प्यारे आवें सु बयन कहें प्यार से गोद लेवें।
> ठण्डे होवें नयन दुख हो दूर मैं मोद पाऊँ।
> ये भी है भाव मम उर के और ये भाव भी हैं।
> प्यारे जीवें जग हित करें गेह चाहे न आवें।।[180]

इस प्रकार मानवीय प्रेमिका राधा प्रणय की सकुचित भावना मे ऊपर उठकर कृष्ण को जगतपति और जगत्पति को कृष्ण समझने लगती हैं और उन्हें विश्व प्रियतम तथा प्रियतम मे विश्व दृष्टिगोचर होने लगता है। राधा भक्ति के विभिन्न भागो को छोडकर आर्त पीडित और रोगियों की व्यवस्था को दूर करने मे अपने को लगा देती है। कृष्ण के मथुरा छोडकर द्वारका जाने का समाचार पाकर राधा के हृदय मे कृष्ण से मिलने की जो क्षीण आशा थी, वह भी विलुप्त हो जाती है और वे कृष्ण प्रेमिका से लोक-सेविका एव विश्व प्रेमिका बन जाती हैं। प्रियप्रवास के अंतिम सर्ग के उत्तरार्द्ध मे राधा के इसी स्वरूप का विस्तृत चित्रण किया गया है। उनके विश्व प्रेमिका और लोक सेविका स्वरूप निम्न उद्धरणों मे दृष्टव्य है—

> आगे चींटी विहग गण थे वारि औ अन्न पाते।
> देखी जाती सदय उनकी दृष्टि कीटादि मे भी।
> + + +
> दीनो की थी बहिन जननी थीं अनाश्रिता की।
> आराध्या थी व्रज अवनि की प्रेमिका विश्व की थी।।[181]

इस प्रकार प्रियप्रवास की राधा कृष्ण प्रेमिका से लोक सेविका और विश्व प्रेमिका के सर्वोच्च आसन पर विराजमान हो जाती हैं तथा वे कामुकता, विलासिता, वियोगजन्य उन्माद एव प्रणय की सकीर्णता से परे एक दिव्य भारतीय नारी के रूप मे प्रतिष्ठित हैं।

(ऊ) व्रज की आराध्या देवी—प्रियप्रवास में राधा का सबसे मार्मिक एव प्रभावपूर्ण चित्रण व्रज की आराध्या देवी के रूप मे हुआ है। एक लोक-सेविका के रूप मे वे जब भी किसी गोपी अथवा गोपजनो को दुखी एव

उदास देखती हैं तो उसके पास जाकर उसकी विभिन्न तरह से उपचार करती हैं उसे विभिन्न कथाओ के माध्यम से प्रसन्न करके उपयोगी परिश्रमी और कमशील बनाने की चेष्टा करता हैं। वे विभिन्न पक्षिया तथा जीवों को अन्न जल देती हैं तथा सब के प्रति सहृदयता का परिचय देती है। वे प्रति दिन नन्द यशोदा उनके घर जाकर सान्त्वना देती है। वे किसी पेड के पत्ते को भी अनावश्यक नही तोडती। उन्होने व्रज मे सुख और शांति के प्रसार के लिए कुमारी गोपिकाओ का सगठन बना लिया है जो सभी की सेवा म रत रहता है। अपने इन्ही सदगुणो के कारण राधा सज्जनों के सिर की छाया दीन भगिनी अनाथ जननी विश्व प्रेमिका तथा व्रजभूमि की आराध्या देवी बन गई है। उनका वह रूप निम्न पक्तिया म वर्णित है–

> व छाया थी सुजन शिर की शासिका थी खलो की।
> कगालो की परमनिधि थी औषधी पीडितो की।
> दीना की थीं बहिन, जननी थी अनाथाश्रिता की।
> आराध्या थी ब्रज अवनि की प्रेमिका विश्व क थी ।।[182]

नन्द

प्रियप्रवास म नन्द व्रज भूमि के राजा तथा गापो के मुखिया के रूप मे चित्रित है। वे आदश पति और पिता के रूप मे दर्शाये गये हैं। उनके चित्रण मे कवि ने लोक हित देश भक्ति तार्किकता आदि को गौण रखते हुए नन्द क पुत्र प्रेम अथवा वात्सल्य प्रम पर ही अधिक प्रकाश डाला है। वे एक आदश एव आज्ञाकारी अधीनस्थ शासक क रूप म प्रतिष्ठित हैं जो अपने महान अनिष्टकारी और जनता के विरोध की परवाह न करते दुष्ट शासक कस की आज्ञा मानकर कृष्ण और बलराम को उसके यहाँ भेज देते है।

प्रियप्रवास म नन्द सवप्रथम वात्सल्य से ओत प्रोत पुत्र ज म से हर्षित[183] और पुत्र पर आन वाली विभिन्न आपत्तिया एव आशकाओ म डूबने उतराते हुए अत्य त व्यथित दिखाई पडते है। उनके इस स्वरूप का ममस्पर्शी चित्रण निम्न पक्तियो म दशनीय है–

> मित हुए अपने मुख लोम को।
> कर गह दुख व्यजक भाव से।
> विपम सकट बीच पडे हुए।
> बिलखते चुपचाप ब्रजेश थे ।।[184]

इस प्रकार नन्द पुत्र प्रेम मे तथा पुत्र पर आने वाली विपत्ति की आशका से अपने शयन कक्ष मे चुपचाप बिलखते हैं। उनके नेत्रों से अश्रु प्रवाहित हो रहा है, वह कभी शया मे उठकर कमरे की नीरवता को देखते

हैं और जब उनकी विरह वेदना असह्य हो जाती है, तब वे द्वार पर निकल कर शून्य आकाश को यह ज्ञात करने के लिए निहारते हैं कि अब कितनी रात्रि शेष है। यदि किसी परिचारिका के रुदन का स्वर वे सुनते हैं तो असीम वेदना से व्यथित हो जाते हैं। उनकी यह सभी स्थितियाँ कंस के उस निमन्त्रण के कारण हो रही हैं जिसे लेकर अक्रूर जी गोकुल आये हैं तथा उनके प्राणप्रिय श्रीकृष्ण का प्रातःकाल निश्चित रूप से मथुरा चले जाना है।

नन्द प्रियप्रवास में एक उदार व्यक्तित्व सम्पन्न पिता के रूप में चित्रित हैं। कृष्ण के चिर वियोग में शोक से तप्त होने के कारण उनकी दयनीय दशा देखकर गोकुल के सभी प्राणी उनके प्रति सम्वेदना प्रकट करते हैं। इस स्थिति में उनके हृदय में श्रीकृष्ण का जो लोकोपयोगी, जनसेवक, राष्ट्र प्रेमी और विश्व प्रेमी रूप सामने आता है उसके चिंतन मनन से उन्हें असीम संतोष प्राप्त होता है फिर भी कभी कभी कृष्ण के प्रति उनके हृदय में इस प्रकार वात्सल्य भाव उमड़ पड़ता है कि वे विक्षिप्त हो उठते हैं। राधा जी ऐसी स्थिति में उनकी सेवा में लगकर संसार के समस्त वैभव को तुच्छ बताकर विभिन्न शास्त्रों के माध्यम से उनके वियोग संतप्त हृदय को शान्ति प्रदान करती हैं–

> वे था प्रायः व्रज नृपति के पास उत्कण्ठ जाती।
> सेवाएँ थीं पुलक करतीं क्लान्ति त्यों थीं मिटातीं।
> बातों ही में जग विभव की तुच्छता थीं दिखातीं।
> जो वे होते विकल पढ़ के शास्त्र नाना सुनातीं।।[185]

नंद जी का एक वात्सल्य युक्त स्नेही पिता के साथ कर्त्तव्यनिष्ठ, जागरूक एवं आदर्श पति के रूप में देखने का प्रयास उपयुक्त ही है। जिस समय वे कृष्ण को मथुरा छोड़कर व्रज लौटते हैं, उस समय उनकी स्थिति अपना सर्वस्व गंवा देने वाले वणिक तथा मणि विहीन सर्प की सी हो जाती है। विक्षिप्तों की भाँति वे लड़खड़ाते हुए किसी तरह व्रज पहुँचते हैं।[186] पहुँचने पर उनकी पत्नी यशोदा उनको एकाकी आता हुआ देखकर विह्वलावस्था में दौड़कर द्वार पर उनके पास प्राणप्रिय पुत्र को न पाकर मूच्छित होकर गिर पड़ती हैं इतना ही नहीं चेतनावस्था में आते ही वह करुण-क्रन्दन करने लगती हैं। उस समय पुत्र शोक में पहले से ही विरह व्यथित नंद पत्नी की यह दशा देखकर और भी उद्विग्न हो जाते हैं। इसके बाद भी वे अपार धैर्य एवं असीम संयम का परिचय देते हैं। वे व्यथित हृदया यशोदा को विभिन्न प्रकार से सान्त्वना देते हैं–

सारी बातें व्यथित उर की भूल के नन्द बोले।
हाँ आवेगा प्रिय सुत प्रिये गेह दो ही दिनो म।
ऐसी बातें कथन कितनी और भी नन्द ने की।
जैसे तसे हरि जननि को धीरता स प्रबाधा ।।[187]

इस प्रकार नद एनकनप्रकारेण अपनी पत्नी को सान्त्वना प्रदान कर एक आदश पति का उदाहरण प्रस्तुत करते है।

यशोदा

प्रियप्रवास म यशोदा ब्रज के नृपति की पत्नी तथा एक आदश माँ के रूप मे प्रतिष्ठित हैं जिनक हृदय म अपने सुन्दर सुशील और पराक्रमी पुत्र श्रीकृष्ण के प्रति अनन्य ममता एव अपार वात्सल्य है, जो अपन पुत्र पर क्षणिक सकट के आने पर भी अत्यधिक व्यथित हो उठती हैं। व एक भोली भाली सामान्य भारतीय ग्रामीण युवती है। उन्हें किसी एश्वय की आकाक्षा नही है। उनकी दुनियाँ केवल उनके प्रिय पुत्र कृष्ण तक ही सीमित है। वे कृष्ण म ही व्यस्त रहती है और उन पर रचमात्र सकट आने पर दुखी होकर देवी देवताओ की मनौतियाँ मनाती है।[188] यशोदा कृष्ण की एक एक बालोचित क्रियाओ पर आनन्द विभोर हो उठती थी जब भी कोई ब्रज वनिता उनके महल मे आकर उनक बालक की क्रीडाए देखकर मुग्ध होती थी तो व अपना रानीत्व भूलकर उसस कहती कि देखो तुम्हारा लाडला किस प्रकार आनन्द विभोर कर रहा है। उनके हृदय म कृष्ण का विवाह कर पुत्र वधू लाने की असीम अभिलाषा है। वे प्राय कहा करती थी–

होवेगा सो सुदिन जब मैं आँख स देख लूगी।
पूरी होती सकल अपने चित्त की कामनाए।
पाहूँगी मैं जब सुअन का औ मिलेगी वधूटी।
तो जानूगी अमरपुर की सिद्धि है सद्म आई ।।[189]

एक दिन यशोदा को जब यह ज्ञात होता है कि कस न बलराम तथा कृष्ण को नन्द के साथ धनुष यज्ञ देखन क लिए मथुरा बुलाया है और नन्द जी प्रात काल उनके मथुरा जाने की घोषणा कर चुके है यह समाचार पाते ही यशोदा कस की क्रूरता और उसके द्वारा मचाये गये अनक उपद्रवो का स्मरण कर अत्यन्त व्याकुल और असयत होकर चिन्ता म निमग्न हो जाती हैं। वह कृष्ण को सोते हुए शैया के समीप बैठी हुई आँसू बहा रही हैं, परन्तु वे कृष्ण की निद्रा टूटने के भय म करुण क्रन्दन नही कर पाती। वे अपने पुत्र हेतु शुभ कामना करती हुई कुल देवता की आराधना करती हैं

तथा विभिन्न देवी दवताओ की मनौती मनाकर यह कामना करती हैं कि उनका पुत्र आने वाली सभी आपदाओ म मुक्त हो सके और विभिन्न विपत्तिया स मुक्त होकर सकुशल वापस लौट सके। प्रात पुत्र गमन का स्मरण कर अधीर हो उठती हैं। यह निकलता एव कातरता यशोदा की विमल मातत्व का परिचायक है—

निकट कोमल तल्प मुकुन्द के।
कलपती जननी उपविष्ट थी।
\+ \+ \+
सहज जीवन को उसके सदा।
वह सकटक है करती नहीं।।[190]

वे वात्सल्य की साकार मूर्ति हैं। उनका प्राणप्रिय पुत्र, जिस दखकर व जीवित रहती है वह उनके सामने ही रथ पर बैठकर मथुरा जा रहा है और उनकी आँखों स ओझल हो रहा है। वह सोचती थी कि पता नही उनके प्राणप्रिय पुत्र का भाजन मिलेगा, नन्द उस खान पीने का पूछेंगे या नहीं। उनका वात्सल्य यहाँ तक पहुँच जाता है कि व रथ के समीप जाकर अपन पति स कहती हैं कि हे प्रियतम ! मैं आज अपनी अगणित गुणवाली थाती तुम्हें सौंपती हूँ मेर य लाड्ल कुँवर कभी बाहर नही गय हैं। अत यह आप ध्यान रखना कि इन्ह माग म किसी प्रकार का कष्ट न हो—

खर पवन सताव लाडिल को न मेरे।
शिवर किरणो की ताप स भी बचाना।
\+ \+ \+
दिन वदन सुतो का देखत ही बिताना।
विलसित अधरो को सूखन भी न दना।।[191]

यही नही व नन्द को सचेत करती हुई कहती है कि मथुरा म बहुत सी कुटिल स्त्रियाँ और भयानक सर्पिणियाँ रहती हैं, इसलिए उनकी कुटिलता और विषली छाया स मेरे पुत्रो को सदा बचा रखना। इन्हें सदैव अपन साथ रखना और नपाधम कस के क्रोधाग्नि स इन्ह इस युक्ति स लौटा लाना जिसस न तो नृपति ही क्रुद्ध हो और न इनका ही बाल बाँका होन पाय। इस प्रकार वह अपनी वात्सल्य प्रेम का उदगार व्यक्त करती हैं।

यशोदा का हृदयद्रावक और शोक सन्तप्त स्वरूप भी प्रियप्रवास म प्राप्त होता है। उनके हृदय की व्यथा को देखकर सभी सहृदय शोकातुर हो जाते हैं। मथुरा स नन्द द्वारा कृष्ण-बलराम को छोडकर अकेले लौटन पर यशोदा की जो दशा होती है उसका वणन शब्दों म कर पाना असम्भव

है। यशादा कृष्ण क लिए गाया, सुक मारिका आदि पक्षियो की व्याकुलता देखकर और भी व्यथित हा जाती हैं। कस चाणूर, मुष्टिक आदि दुष्टो की कठोरता और उनका श्रीकृष्ण द्वारा विनाश का चिन्तन कर वे अपन भाग्य का सराहती हैं परन्तु पुन कृष्ण के प्रति उनके हृदय म भरी हुई ममता उन्ह अधीर बना देती है और वे न द स बार बार कृष्ण क विषय म पूँछती है–

> प्रिय पति वह मरा प्राण प्यारा कहाँ है।
> दुख जलधि निमग्ना का सहारा कहाँ है।
> \+ + +
> हा जीऊगी न अब पर है वदना एक हाती।
> तेरा प्यारे बदन मरती बार मने न देखा।।[192]

यशादा का यह विलाप ममतामयी माँ क हृदय का सच्चा उद्गार है। इन्ही गुणा के कारण वात्सल्य और करुणा की साकार मूर्ति क रूप म यशादा की प्रतिष्ठा है।

ममता एव करुणा स परिपूर्ण यशादा का न द द्वारा यह कहने पर कि प्रिय सुत दा दिन मे ही लौट आवगा, मतप्राय यशादा चेतना युक्त हाकर आँखें खाल देती हैं और अपनी बात की पुष्टि क्या आवेगा कुँवर ब्रज म नाथ दा ही दिनो म[193] कराकर आशान्वित हा जाती है। वे अपन पति क साथ घर को चली जाती हैं। कृष्ण की प्रतीक्षा म यशादा की काया जीर्ण शीर्ण हा जाती है। उद्धव द्वारा कृष्ण का सदेश लेकर आने पर उनका धय टूट जाता है और व बिलखती हुई कहती है–

> राते रात कुवर–पथ का देखते देखत ही।
> मेरी आँखा अहह अति ही ज्यातिहीना हुई हं।
> कसे ऊधो भव तम हरी ज्याति वे पा सकेंगी।
> जो खेंगी न मनु मुखडा इन्दु उन्माद कारी।।[194]

इस प्रकार यशादा अपनी विभिन्न व्यथा कथा सुनाते हुए अधीर हो उठती हैं और कहती है कि आज कृष्ण की अनुपस्थिति म सारा ब्रज व्याकुल है। यशोदा की करुण दशा स उद्धव इतने व्यथित हा जाते है कि मौन होकर सारा रात्रि उनके पास बठकर विरह व्यथा की कथा सुनत रहते है फिर भी कथा का अन्त नही होता है। प्रात काल उद्धव के चल जाने पर व स्वय मौन हो जाती हैं। प्रियप्रवास म एक पुत्र वियुक्ता एव आशामयी दुखिता जननी के रूप मे यशोदा का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया गया है।

अन्त म यशादा की दिव्य एव भव्य स्वरूप प्रियप्रवास म उभरकर

सामने आता है। चिर वियोग के कारण उनका शरीर जजर एव क्षीण हो गया है, पर तु उनका अ त करण विशाल है। उसमे सकीणता के स्थान पर उदारता ने स्थान बना लिया है। पहले उ हे अपने प्रिय पुत्र कृष्ण का वियोग असह्य था, परन्तु उद्धव के साथ वार्तालाप के समय यशोदा कृष्ण के शौर्य और वीरता की प्रशसा करती हुई उनका यशगान करती हैं और हर्षित होती हैं तथा दुखिया देवकी के ब धन मुक्त होने पर आनन्दित होती है। वसुदेव–देवकी के कारागार के दुखो का स्मरण कर वे आँसू बहाती है।[195] इन क्षणो में यशोदा को मात्र इस बात की पीडा है कि अब उनका लाडला पुत्र दूसरो का प्यारा बनता जा रहा है पर तु उसके बाद भी उनका व्यापक हृदय यह नहीं चाहता कि वह देवकी के हृदय के टुकडे (कृष्ण) को बुलाकर अपने पास रखें। अब उनकी एकमात्र कामना यही है–

मैं रोती हूँ हृदय अपना कूटती हूँ सदा ही।
हा ! ऐसी ही व्यथित अब क्या देवकी को करूगी।
प्यारे जीवें पुलकित रह औ बने भी उन्ही के।
धाई नाते वदन दिखला एकदा और देवें।।[196]

उपयु क्त पक्तियो म यशोदा की उदारता एव माँ–हृदय की महानता स्पष्ट परिलक्षित होती है। उनके अ त करण की विशालता इसी बात से स्पष्ट हो जाती है कि वे अनेक कष्टो को सहन करते हुए अपने पुत्र–कृष्ण को दूसरो के हाथ सौंपते हुए तनिक भी सकोच नही करती। वे मात्र इतना चाहती हैं कि कृष्ण उ हे धाई समझकर ही एक बार अपना मुख दिखा जावें। इन शब्दो से यशोदा की जिस दिव्य एव मगलकारी मातृ मूर्ति का स्वरूप स्पष्ट होता है उसके सम्मुख किसी भी व्यक्ति का मस्तक श्रद्धावनत हो जाता है, क्योंकि वह मानवी न होकर देवी स्वरूपा है।

उद्धव

उद्धव श्रीकृष्ण के अनन्य मित्र, ज्ञान के भण्डार, योगादि में निपुण एव विद्वान हैं। श्रीकृष्ण की चि ता मुद्रा देखकर उद्धव उनसे कारण पूछते हैं और वे ब्रज की वियोग विह्वल माँ यशोदा राधा गोपियो एव अ य सभी की दयनीय दशा का वर्णन करते हैं। वे उन्हें ब्रजवासियो को योग साधना का उपदेश देकर वियोगाग्नि के शमन के लिए भेजते हैं–

कैसी है अनुरागिनी हृदय में माता पिता गोपिका।
प्यारे हैं यह भी छिपी न तुमसे जाओ अत प्रात ही।।[197]

श्रीकृष्ण की प्राथना पर वे ब्रज के लिए प्रस्थान करते है । व उनकी ही भांति विभिन्न वस्त्राभूषणा मे सुसज्जित हैं । श्यामल शरीर पर पीताम्बर माथे पर मुकुट और काना म कुण्डल धारण किये हुए कृष्ण के समान वे भी शोभा पा रहे हैं । ब्रजप्रदेश म प्रवेश करने से पूव वहां के लोगा की दृष्टि उन पर पडती है और वे लाग ऐसी आकषक मूर्ति देखकर भ्रमित हा जाते हैं, किन्तु रथ क निकट आने पर उनके भ्रम का निवारण हो जाता है। श्रीकृष्ण के स्थान पर उद्धव को पाकर गोपियां अत्यधिक खिन्न हा जाती हैं। व वियोगाग्नि स सतप्त ब्रजवासियो की दशा का अवलोकन करते है । उनके समक्ष सभी अपनी मनोव्यथा व्यक्त करते हैं और व मौन हाकर सब कुछ देखते सुनते है । माता यशोदा अपन हृदय की व्यथा सुना ही रही थी कि अन्य गाप गोपियो का दल आ गया । कोई एक अपनी करुण कहानी सुनान लगा । किसी न श्रीकृष्ण द्वारा किय गये महत कार्यों की चर्चा की । व विकराल काल द्वारा ग्रसित ब्रजवासियो क त्राण हेतु श्रीकृष्ण कृत सकल्प का स्मरण कर उसस उद्धव को परिचित कराते है—

अत करूँगा यह काय मैं स्वय ।
स्वहस्त म दुलभ प्राण क लिए ।
स्वजाति औ ज मधरा निमित्त मैं ।
न भीन हूगा विकराल व्याल स ।।[198]

उद्धव सैकडा ब्रजवासिया क मध्य बठकर उनकी बातें सुनते हुए गद गद हो जाते हैं । ब्रजवासिया के प्रेम वणन म किसी प्रकार की कृत्रिमता नहा है । जब वे छिपकर कु जा म बठे हात है उस समय भी उ हे गापिया की टीस कराह एव उच्छवास सुनायी पडती है । ऐसे वातावरण म उ हें अपनी बात कहने का अवसर ही नही मिल पाता ।

उद्धव गोपिया क लिए कृष्ण का सदश लकर आय थ, वे अवसर देख रहे थ । एक दिन सभी लोगा के बीच म मौन व्रत भग करते हुए कहने लगे। श्रीकृष्ण माता पिता गोप गोपी राधा, गाय, ब्रज के किसी को भूल नही सके हैं । प्रतिक्षण उन्हें यहां की स्मति दु ख देती रहती है । व राज काय म उलझ गय हैं । यह नही निश्चित कह सकता कि कब और कैसे यहाँ आयेंगे । अब उनक लिए लोकसेवा और विश्व प्रेम प्राणा स अधिक महत्व पूण है । स देश मे यह कहा है कि ब्रज वनिताएँ मेरे प्रति मोह का त्यागकर देश हित और लाक कल्याण क महत्व को समझें एव मरा अनुकरण करते हुए एसे ही कार्यों म प्रवत्त हा जाए । वियोगावस्था स मुक्ति पाने का मात्र यही एक उपाय है ।

उद्धव राधा को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि श्रीकृष्ण ने कहा है कि अब मेरा लौटना असम्भव सा लग रहा है। वियोग की व्यथा से हम दोनो एक दूसरे के लिए व्यथित हैं, यह सत्य है–सासारिक सुख बडा मधुर एव आकर्षक होता है किन्तु यदि व्यापक दृष्टि से देखा जाय तो उससे बढ कर जगत हित का काम है। जगत हित मे लगा हुआ व्यक्ति ही सच्चा पथिक और आत्म त्यागी है। इसलिए सदैव सवभूत हित और स्वार्थ से ऊपर उठ कर आचरण करना मानव का आदर्श है।[199]

महाकवि हरिऔध ने उद्धव को परम्परा से अलग हट कर प्रस्तुत किया है। यहाँ वे एक ज्ञानी, नीरस रूप मे चित्रित किये गये है और ब्रज के प्रेम धारा मे वह भी प्रवाहित हो उठे हैं, वहीं वे प्रियप्रवास मे विद्वान और ज्ञानी तो अवश्य हैं, किन्तु अपने वाक्चातुर्य से ब्रजवासियो पर अपना प्रभाव डालने मे सफल होते है। वे यहाँ ऐसे उपदेशक हैं जो समस्त ब्रज जन को लोक कल्याण कार्यों मे लीन रहने का सदेश देते है। वास्तविकता यह है कि कवि ने उद्धव के रूप मे अपने विचारो को व्यक्त करते हुए लोक हित एव लोक सेवा का सदेश दिया है।

प्रियप्रवास मे वर्णित अन्य पात्रो मे श्रीदामा कृष्ण के मित्र बलराम बड़े भाई ललिता राधा की प्रिय सखी एव अक्रूर हैं जो कस के द्वारा श्रीकृष्ण को लेने के लिए भेजे गये हैं। इन पात्रो के चित्रण मे कवि ने विशेष रुचि नही दिखाई है। उन्होने व्योमासुर का उल्लेख किया है जो गाय उनके बछडा तथा गोप बालाओ को अत्यधिक कष्ट दिया करता था। श्रीकृष्ण द्वारा सचेत किये जाने पर और उसके न मानने पर उसे उन्होने यत्नो द्वारा मत्यु शैया पर सदैव के लिए सुला दिया।[200] कस का आततायी रूप मे सकेत है जो श्रीकृष्ण, बलराम को बुलाने के लिए अक्रूर को भेजता है। अन्त मे उसकी मत्यु का सदेश ब्रजवासियो को प्राप्त होता है।[201] यह पात्र अनुपयोगी होने के कारण ही कवि द्वारा उपेक्षित रह हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इन पात्रो का पर्याप्त चित्रण कवि ने प्रियप्रवास मे युगानुरूप आदर्शों के सवाहक रूप मे किया है। श्रीकृष्ण त्यागी लोक हितैषी और महापुरुषो के गुणो से समन्वित हैं। उसी प्रकार राधा मे नवीन उद्भावनाओं का आरोपण करते हुए हरिऔध जी ने उनका जीवन लोकहितकारी बना दिया है। श्री सक्सेना जी का कथन है– प्रियप्रवास के कृष्ण सभी प्रकार से शौर्य, औदार्य, दया दाक्षिण्य, उत्साह गाम्भीर्य, सहन शीलता, अहकारशून्यता दृढ़ व्रत स्थिरता आदि गुणो से विभूषित होने के कारण धीरोदात्त नायक हैं और राधा भी सरलता, शुचिता, तेजस्विता, क्षमा,

दया, उदारता, शील, सौजन्य, सेवा आदि से परिपूर्ण एक उच्चकोटि की धीर नायिका हैं ।'[202]

अतएव पात्र एव उनके चरित्र चित्रण की दृष्टि से यह ग्रन्थ एक सफल काव्य है ।

खण्ड-घ

प्रियप्रवास मे प्रकृति अभिव्यक्ति

प्रकृति मानव की आदि सहचरी है । सृष्टि का शरीरी अशरीरी प्राण प्राणरहित सब कुछ प्रकृति मे समाहित है । इसीलिए मानव जन्म से लेकर जीवन के अन्तिम क्षणो तक अनेक क्रियाएँ करते हुए भी उसका भेद नही जान पाता । वास्तव मे प्रकृति की सीमा का कोई छोर नही वह अनन्त है यह अद्भुत खेल खेला करती है । *प्रकृतिवाद पर्यालोचन मे प्रकृति* की व्यापकता पर दृष्टिपात करते हुए कहा गया है– देश और काल के भीतर जो कुछ कार्य कारणात्मक नियमो के अनुसार शृंखलाबद्ध रूप मे सगठित होता है उस समस्त दृष्ट तथा अदृष्ट जगत को प्रकृति कहते हैं ।'[203] गीता मे शाश्वत सत्ता के अतिरिक्त पदार्थ जगत को भूमि जल अग्नि पवन आकाश मन बुद्धि एव अहकार मे विभक्त करके अष्टधा प्रकृति की सज्ञा प्रदान की गयी है ।[204]

मानव और प्रकृति का चिरशाश्वत सम्बन्ध है । प्रकृति उपदेशक प्रेमिका सहचरी, सहोदरा दश्य, मात आदि किसी न किसी रूप मे जन्म से लेकर मत्यु पर्यन्त मानव के साथ सचरण करती रहती है । 'प्रकृति की क्रोड मे जन्म लेकर विचरण करने वाला भावुक मानव उसके चिर जीवनरूप नवीन रूप से अनेक भावो का आरोपित कर उसके सम्बन्ध मे अनेक विधान करके उसे शब्द चित्र द्वारा काव्य मे स्थान देता है । यही प्रकृति चित्रण है ।'[205] प्रकृति के उन विभिन्न रूपो या दृश्यो के द्वारा कवि या लेखक के हृदय मे अनेक प्रकार के भावो का उद्वेलन होने लगता है । उनको साहित्यकार अपनी प्रतिभा द्वारा शब्दो के माध्यम से मुखरित कर देता है । प्रकृति के उन रूपो को मुख्यतया दो भागो मे प्रत्यक्ष या प्रस्तुत और अप्रत्यक्ष या अप्रस्तुत–मे विभक्त किया जा सकता है । इनको दृष्टि मे रखते हुए प्रकृति चित्रण के निम्नलिखित उपभेद किये जा सकते हैं–

प्रत्यक्ष या प्रस्तुत रूप मे प्रकृति चित्रण–1 आलम्बन रूप, 2 बिम्ब रूप, 3 वस्तु या नाम परिगणन रूप, 4 चेतन रूप, 5 अचेतन रूप, 6 विराट रूप ।

अप्रत्यक्ष या अप्रस्तुत रूप मे प्रकृति चित्रण–7 उद्दीपन रूप, 8 दशन रूप, 9 रहस्य रूप, 10 अलकरण रूप, 11 प्रतीक रूप, 12 मानवी करण रूप, 13 नीति या उपदेशक रूप, 14 पृष्ठभूमि रूप, 15 उपदेश्य या शिक्षार्थी रूप 16 कवि समय रूप 17 ऋतुवणन रूप, 18 वारहमासा रूप 19 दूती रूप, 20 दवी सकेत रूप, 21 वातावरण रूप, 22 साक्षी रूप।

प्रकृति चित्रण के इन्हीं रूपा के आधार पर प्रियप्रवास में प्राप्त प्रकृति रूपा का अध्ययन अपेक्षित है।

आलम्बन रूप में

प्रकृति का आलम्बन रूप मे चित्रण करना सहृदयों के लिए स्वाभाविक है। इसम प्रकृति के एम सूक्ष्म एव स्वाभाविक चित्र प्रस्तुत होते हैं जिससे पाठक को उसके विम्ब रूप का आभास होने लगता है।

प्रकृति के आलम्बन रूप को चित्रित करने की दो प्रणालियाँ मुख्य तया दृष्टिगत होती हैं–(1) बिम्ब प्रणाली और (2) अथग्रहण प्रणाली। हरिऔध जी ने प्रियप्रवास मे प्रकृति के मनोहर एव सजीव रूप म गोवद्धन पवत की अलौकिक छटा का रूप प्रस्तुत किया है। जिसम झरने के कल कल निनाद मे मानो पवत का गुणगान करते हैं। झरना का जल प्रवाह विश्व को गतिशीलता का सन्देश देता है। प्रकृति के ये आकषक रूप सहज ही मानस पटल पर अकित हो जाते हैं–

> पुष्पो से परिशोभना बहुश जो वक्ष अवस्य थे।
> वे उदघोषित थे सदप करते उत्फुल्लता मेरु की। 06

प्रियप्रवास के द्वादश सग म हरिऔध जी ने बादलो के भीषण गजन, वर्षा एव तीव्र वेग स चल रहे झझावात का कलात्मक दश्य प्रस्तुत किया है।20

हरिऔध जी ने प्रकृति के अनेक सजीव चित्र अकित किये हैं, जिसम वसन्त वणन,208 शरद वणन 209 वर्षा वर्णन210 आदि महत्वपूण हैं। प्रकृति के इन रूपा को गतिशील और आकषक बनाने के लिए प्रकृति सुन्दरी का मानव के साथ चिर साहचर्य स्वीकार करते हुए उसके सुकुमार कोमल और भीषण रूपा का अकन कवि ने सुन्दर ढग स किया है।

विम्ब रूप में

बिम्ब का अथ है–वस्तुओं के आन्तरिक सादृश्य का प्रत्यक्षीकरण। वह वर्णन जिसस सम्पूण विषय पर प्रकाश सूक्ष्मातिसूक्ष्म पदावलियो द्वारा

पडता हुआ शब्द चित्र सा प्रतीत हो, वहाँ बिम्ब विधान होता है ।

हरिऔध जी ने प्रियप्रवास म पवन दूती प्रसग मे वृक्षो क पीले पत्ते का उल्लेख किया है जिससे एक दश्य बिम्ब सा उपस्थित हो जाता है। पीला पत्ता वायु प्रवाह से अपन स्थान से नीचे गिर रहा है, ऐसा दश्य उप स्थित होने लगता है–

कोई पत्ता नवल तरु का पीत जो हो रहा हो ।
तो प्यारे के दग युगल के सामने ला उसे ही ।
धीरे धीरे सभल रखना औ उ हे या बताना ।
पीला होना प्रबल दुख से प्रोषिता हमारा ।।[211]

लता का सूखना[212] कुम्हलाया पुष्प[213] क्रमश सूखी लता एव मुरझाये फूल का बिम्ब उपस्थित हो जाता है । पवतो और वक्षो के ऊपर सूय की धीरे धीरे पडने वाली किरणा का कवि ने वर्णन कर स ध्याकालीन वेला म सूय छिपन का चित्र सा उपस्थित कर दिया है ।[214] एस ही सध्या का मनोहारी बिम्ब प्रस्तुत करना[215] कवि के प्राकृतिक अनुराग का प्रतीक है । कवि ने अकुर के उल्लेख से पथ्वी को कुछ तोडकर मिट्टी को उकसाये हुए किसी नये पेड पौधे की प्रारम्भिक अवस्था का चित्र सा उपस्थित हो जाता है[216] जो कवि की सूक्ष्म दष्टि का परिचायक है ।

वस्तु परिगणन रूप में

कवि प्रकृति चित्रण म विस्तार से बचने या अपने पाण्डित्य प्रदशन के मोह में प्राकृतिक उपादानो की सूची अपनी रचना मे प्रस्तुत करता है । नाम वस्तु परिगणन को स्पष्ट करते हुए आचाय शुक्ल ने कहा है– प्रकृति का ऐसा चित्रण जिसमे प्रकृति से सान्निध्य प्राप्त नही होता नाम परिगणन रूप मे प्रकृति चित्रण कहलाता है । इस प्रणाली के अ तगत प्रकृति के वन पवत नदी निझर पुष्प आदि के नाम गिनाये जाते और कोई सामूहिक प्रभाव उपस्थित करने का प्रयास नही किया जाता ।[217] हरिऔध ने वस्तु परिगणन रूप मे जो प्रकृति चित्रण किया है उसमे दोनो रूप (अथात विस्तार को दष्टि म रखकर और चमत्कारिक रूप विद्यमान है ।

वक्षो की नाम गणना सूक्ष्मातिसूक्ष्म वणन करन के म तव्य से की गई है, क्योकि हरिऔध जी वण्य विषय से कभी पथक नहीं हो पाये है । ब्रज वणन में जामुन, आम कदम्ब, निम्ब फालसा, जम्बीर आवला लीची, अनार नारियल, इमली शिशपा, इगदी, नारगी अमरुद बिल्व बदरी सागौन शाल तमाल, ताल (ताड), केला और शाल्मली का नामोल्लेख किया है–

जम्बू अम्ब कदम्ब निम्ब फलसा जम्बीर औ आवला ।
लीची दाडिम नारिकेल इमली और शिशपा इदुगी ।
नारगी अमरूद बिल्व बदरी सागौन शालादि भी ।
श्रेणीवद्ध तमाल ताल कदली औ शाल्मली ये खडे ।।[218]

पवनदूती प्रसग म भी कवि ने कुजा, वागों, विपिन यमुना कूल या आलय का उल्लख किया है । [219] कवि न सौरभ पराग क साथ पथ्वी कोयल एव पुरुप का नामोल्लेख किया है ।[220] कवि ने प्रियप्रवास मे वणन विस्तार मे वचने एव अधिक वणन के समायोजन हेतु इस वस्तु परिगणन का सहारा लिया है ।

चेतन रूप में

प्रकृति के प्रागण म जव सभी जड चेतन तत्व अपनी स्वाभाविक त्रियाओ क स्थान पर प्रवुद्ध होकर काय करन लगते हैं तो उसे प्रकृति का चेतन स्वरूप कहते हैं। प्रकृति का चेतन रूप मे अनुभव कवि के व्यापक दष्टिकोण का परिणाम है ।

महाकवि हरिऔध न प्रकृति को चेतन मानकर पवन को राधा के सदेश भार वहन करने की क्षमता स युक्त बना दिया है । राधा उसे सचेतन मानकर अपने प्रिय श्रीकृष्ण के पास सदेश भेजती हैं ।[221]

कृष्ण की माता यशोदा की विकल दशा देखकर प्रकृति के जड तत्व भी चेतन जैसे काम करने म निरत हो गये हैं । रात्रि उनके दुख में व्याकुलता प्रकट करती है । ओस के मिप नेत्रो से जल प्रवाहित हो रहा है । व्रज धरा भी कालिन्दी जल के मिप अश्रु प्रवाहित करती है—

विकलता उनकी अवलोक के ।
रजनि भी करती अनुताप थी ।
निपट नीरव ही मिस ओस के ।
नयन से गिरता वहु वारि था ।।[222]

अचेतन रूप में

प्रकृति के रूपो का चित्रण जव कवि उसक स्वाभाविक रूप से हीन या निम्न रूपो म चित्रित करता है वहा प्रकृति का अचेतन रूप प्रदर्शित होता है । कवि के द्वारा व्यथित होने या प्रकति के अस्वाभाविक रूप को अनुभव करने के परिणामस्वरूप रचित रचनाओं म प्रकृति का हीन रूप चित्रित किया जाता है और उसे चेतना रहित आभास करने लगता है । प्रियप्रवास मे अनक स्थनों पर प्रकति का यह रूप दशनीय है ।

कवि ने सौरभमयी पवन के प्रसार पर राधा द्वारा उस अचेतन रूप म निर्दिष्ट कराया है, क्योकि पवन विरहिणी राधा क विरह को और भी अधिक उद्दीप्त करती है । उस जडता म इतना ध्यान नही रहता कि इसमे उसे सुख मिलेगा या नही–

श्रीराधा को यह पवन की प्यार वाली क्रियायें ।
थोडी सी भी न सुखद हुइ हो गइ वरिणी सी ।
+ + ।
तू आती है वहन करती वारि के सीकरा को ।
हो पापिष्ठे ! फिर किसलिए ताप देती मुझे है ।[223]

अन्यत्र भी अनेक स्थलो पर कवि ने प्रकृति को चेतना से रहित चित्रित किया है ।[224] जो व्रजवासियो की दृष्टि की प्रतीति है ।

विराट रूप

काव्य म प्रकृति अपने स्वाभाविक गुणो से ऊपर असाधारण और असीम शक्ति का आभास कराती हुई अलौकिकता का सकेत करती है एसी दशा म विराट रूप मे प्रकृति चित्रण हाता है । प्रकृति के जिन तत्वा के सामने मानव का वश नही चलता या वे मानव शक्ति से अधिक प्रभावी प्रतीत होते है उनको विराटत्व प्रदान किया जाता रहा है । 'प्रियप्रवास म भी सूय की किरणा मे परमात्मा की सत्ता का आभास दिखाकर उसके विराट रूप का निदशन किया गया है–

किरण एक इसी कजज्योति की ।
तम निवारण म क्षम है प्रभा ।[225]

कवि ने वायु का विराट रूप प्रस्तुत किया है–

पावन गजन औ घननाद से ।
कप उठी ब्रज सब वसु धरा ।।[226]

उद्दीपन रूप मे

का य के वे रूप जा प्रकृति के माध्यम से भावा को जाग्रत करते हैं उद्दीपन रूप होते हैं । आश्रय क वे भाव जा आलम्बन के कायव्यापारो द्वारा उद्दीप्त होते हैं उद्दीपन कहलाते है । उद्दीपन विभाव रस का प्रमुख अग है जिसकी उपेक्षा साहित्य म असम्भव है । आचाय विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का कथन है– प्रकृति नायक नायिका की वियोगजन्य दुखावस्था मे ही उद्दीपन का काम करे ऐसी बात नहा । यदि कवि और प्रकृति दोना एक ही भाव में निमग्न हैं तो भी भाव साम्य व रसानुभूति स तादात्म्य की वह अनुभूति

विरह म विषाद के उद्दीपन का काम करेगी, अर्थात प्रकृति के साथ दुख मे भी तादात्म्य की अनुभूति होती है ।"[227]

प्रियप्रवास मे कवि ने मानव मन की झांकी तीव्रता एव गहनता से प्रस्तुत करने के लिए उद्दीपन के सुदर दश्यो को उपस्थित किया है । कृष्ण वियोग के चित्रण मे गोपियो की विरह दशा का मार्मिक रूप दष्टिगोचर होता है–

आके जूही निकट फिर यो बालिका व्यग्र बोली ।
मेरी बातें तनिक न सुनी पातकी पाटला ने ।
पीडा नारी हृदय तल की नारि ही जानती है ।
जूही तू है विकच वदना शाति तू ही मुझे दे ।[228]

विरहणी राधा को एक दिवस शीतल मद सुगधित वायु ने प्रिय भावनाओ के प्रति भाव के उद्दीपन का काय किया क्योकि ऐसा पवन सयोग शृगार म आनद के भाव उद्दीपनाथ प्रयुक्त होता है परतु यहाँ वियोग शृगार की अवस्था होने के कारण उसके प्रति मोह नही होता । वह क्रोध भाव के उद्दीपन का काम करती है–

पीडा देती यथित चित को वायु की स्निग्धता थी ।
+ + +
हा ! पापिष्ठे ! फिर किस लिए ताप देती मुझे है ।
क्यों होती है निठुर इतना क्यो बढाती यथा है ।[229]

दशन रूप में

प्रकृति को व्यापक रूप म प्रस्तुत करते हुए कवि जब उसे ईश्वरीय सत्ता युक्त एव विश्व की उत्पत्ति, पोषक और सहारक रूप मे प्रस्तुत करता है तब दशन रूप प्रकृति चित्रण होता है । प्रकृति का कवियो द्वारा इस रूप मे चित्रण अनादि काल से चला आ रहा है । इसलिए मानव सष्टि के ज म पालन और सहार सभी स्थितियो मे प्रकृति सहयोगी है । प्रियप्रवास इस परम्परा से भिन्न नही है । कवि ने काव्य में प्रकृति के उपादानो को ईश्वर का ही अस्तित्व माना है । यथा–

पथ्वी पानी पवन, नभ मे पादपो म खगा मे ।
मैं पाती हू प्रथित प्रभुता विश्व मे व्याप्त की ही ।[230]

कवि पृथ्वी, जल, वायु आकाश, वक्ष एव पक्षियों को विश्वात्मा म ही दष्टिगत करता है । जब सम्पूण सष्टि उसी की सरचना है, सबका वही पोषक है, तो निश्चित रूप से प्रकृति भी ब्रह्म से पथक नहीं है । अयत्र भी प्रकृति का दाशनिक रूप देखा जा सकता है ।[231]

करके उसके गतिविधिया का उल्लेख करना है। मानवीकरण रूप म प्रकृति चित्रण की परम्परा अत्यधिक प्राचीन है, परन्तु प्रकृति का मानवी रूपो मे चित्रण की परम्परा धीरे धीरे कम होती गयी। हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल म इस प्रणाली को महत्व दिया गया। हरिऔध जी न मानवीय व्यापारो का प्रकृति पर आरोप करते हुए कई स्थलों पर उसका वणन किया है। गोवधन पवत दप एव गव से परिपूण सहष अपना शिर ऊँचा किए हुए निम्नस्थ भूभाग पर शासन कर रहा है।[237] कवि द्वारा वणित अनेक वक्ष दाडिम, ताल, शाल्मली, मधूक वट आदि मानवोचित व्यापारो से युक्त हैं।[238] उसने सुन्दर वस्त्र धारण किये हुये, आकषक ढग मे खडे नारगी के वक्ष को सोन के कई तमग लगाये हुये अंकित किया है–

सवण ढाल-तमगे कई लगा।
हरे सज्जील निज वस्त्र को सजे।
बड़े अनूठेपन साथ था खडा।
महा रगीला तरु नारग का।।[239]

वक्षो का मित्र होना मानवीकरण का सुन्दर प्रयोग है–

फूले फूले कुसुम अपने अक म म गिरा के।
द्वारी द्वारी सकल तरु भी मिलता हैं निवात।।[240]

नीति या उपदेशक रूप मे

प्रकृति मे चेतना का आरोपित करके मानव उसम गुणा का अनुभव करता है उन्ही को प्रकृति का उपदेशात्मक रूप कहते हैं। जैसे–मछली–प्रेम का सरिता–गतिशीलता का चन्द्रमा–नियमितता का पुष्प–प्रसन्न चित्त रहने के उपदेश देते हैं। प्रकृति को उपदेशक रूप म अनेक महाकवियो ने स्वीकार किया है क्याकि प्रकृति उपदेशक रूप मे मानव के लिए सबसे सरलतम और स्पष्ट उपाय है। व्यक्ति प्रकृति के परिवतना का क्षण प्रति क्षण अवलोकन करता है। उसके इन्ही परिवर्तित रूपा को प्रस्तुत करके कवि मानव को सचेत और सावधान करता रहता है। 'रामचरितमानस' म विभिन्न स्थला पर प्रकृति उपदेशक[241] रूप म प्रस्तुत की गयी है। मानस म अन्यत्र प्रकृति का उपदेशक रूप दशनीय है–

दामिनि दमकि रहहि घन माहीं। खल क प्रीति जथा थिर नाहीं।।
बरषहि जलद भूमि नियराए। जथा नवहि बुध बिद्या पाय।।
बूद अघात सहहि गिरि कसे। खल के बचन सत सह जसे।।[242]

इस प्रकार प्रत्येक रूप म प्रकृति उपदष्टा का काय करती है। हरिऔध जी ने प्रकृति का उपदेशक रूप म ग्रहण किया है। वक्ष्चे फलों से युक्त

चचल पत्तो को हिलाता हुआ आंवला हम यह सदेश (उपदेश) देता है कि अपरिपक्वता की स्थिति में चचल और अस्थिर व्यक्ति किसी दशा मे अपने उद्देश्या की पूर्ति नहीं कर सकता–

> दिखा फलो की बहुधा अपक्वता।
> स्वपत्तियो की स्थिरता विहीनता।
> यता रहा था चल चित्त वृत्ति के।
> उतावलो की करतूत आंवला ॥[243]

आकाश म रात्रि के समय प्रकाश जन्य किरणो के माध्यम से तारे शाति का सन्देश देते हैं, जिससे लोगो की व्यथा समाप्त हो जाय–

> रह रह किरणें जो फूटती हैं दिखाती।
> वह मिष इनके बोध देते हम हैं।
> कर वह अथवा या शाति का हैं बढाते।
> विपुल व्यथित जीवो की व्यथा मोचने को ॥[244]

पृष्ठभूमि रूप मे

कवि अपने काव्य म जब भावी घटनाआ की स्वाभाविक, मार्मिक एव व्यवस्थित रूप म प्रस्तुत करने के पूर्व जो प्रकृति द्वारा पूर्व व्यवस्था की पूर्ति की जाती है यही प्रकृति की व्यवस्था ही पृष्ठभूमि रूप म चित्रण कहलाता है। डॉ० केदारनाथ का मत है– कवि भावी घटनाओ की सूचना प्रकृति मे अभिव्यक्त करके जब क्रिया कलाप के लिए परिस्थिति (पृष्ठभूमि) तैयार करता है तब उसे पृष्ठभूमि रूप म प्रकृति चित्रण कहते हैं। [245] डा० राजकुमार पाण्डेय ने पृष्ठभूमि रूपा प्रकृति को आगामी घटना की सूचिका एव कवि के हार्दिक उल्लास का परिणाम' माना।[246]

पृष्ठभूमि रूप मे प्रकृति चित्रण वैदिक साहित्य से होता हुआ महाभारत पुराण एव सस्कृत ग्रथो मे प्राप्त है। हिन्दी साहित्य के आदिकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल मे होती हुई यह परम्परा आधुनिककाल तक चलती रही। हरिऔध जी इस प्रभाव से न बच सके। कवि ने प्रियप्रवास के प्रारम्भ मे सगोप धेनु कृष्ण के ब्रज आते समय सध्या का पृष्ठभूमि रूप म सुन्दर चित्रण किया गया है–

> दिवस का अवसान समीप था।
> गगन था कुछ लोहित हो चला।
> तरु शिखा पर थी अवराजती।
> कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा।[247]

अ यत्र भी पष्ठभूमि रूप म प्रकृति के सुन्दर चित्र प्राप्त होते है।[248]

उपदेश्य या शिक्षार्थी के रूप मे

कवि रचना करते समय कभी कभी प्रकृति मे अस्वाभाविक यूनताएँ देखता है। ऐसी स्थिति म प्रकृति के प्रति कवि का व्यवहार सहानुभूतिपूण होता है या उस पर उसे क्रोध आता है। इन दोनों स्थितियो मे कवि या तो व्यग्य रूप मे अथवा प्रताडना रूप मे प्रकृति का वणन करता है और प्रकृति को सदगुणात्मक उपदेश दता सा आभासित होता है। कवि हरिऔध न प्रियप्रवास मे पवन का दूत रूप के पूव का वणन प्रकृति को शिक्षार्थी रूप म प्रस्तुत किया है। राधा पवन को अनुकूल न मानकर शिक्षा देती है।

प्यारी प्रात पवन इतना क्यो मुझे है सताती।
क्या तू भी है कलुषित हुई काल की क्रूरता से।।[249]

ऋतु वणन रूप में

विश्व साहित्य की सभी रचनाएँ ऋतुआ के प्रभाव से प्रभावित हैं। रचनाकार या कवि कही स्वतत्र रूप म, कही उद्दीपन रूप मे ऋतुओ का वणन अवश्य करता है। प्रियप्रवास म कवि न ऋतुआ के वणन म परम्परा का निर्वाह किया है। कवि ने ऋतुआ को समयानुकूल, प्रसगानुकूल और स्वाभाविक रूप म प्रस्तुत किया है। दावाग्नि प्रसग म कवि ने ग्रीष्म ऋतु के जिस चित्र का विधान किया है, उसम प्रकृति अपनी प्रचण्डता स एसा प्रतीत हो रही है, माना आग के अगारे उगल रही हो—

निदाघ का काल महा दुर त था।
भयावनी थी रवि रश्मि हो गयी।
तवा समा थी तपती वसुधरा।
स्फुलिंग वर्षारत तप्त व्योम था।[250]

महाकवि हरिऔध की प्रियप्रावास पर कुछ आलोचक कृत्रिमता का आरोप लगाते हैं। कवि प्रकृति वणन म इतना स्वाभाविक हो गया है कि सारे आरोप असत्य भासित होत हैं। सावन मास का दश्य दशनीय है—

सरस सुन्दर सावन मास था।
घन रहे नभ म घिर घूमते।
विलसती बहुधा जिनमे रही।
छबियती उडती बक-मालिका।।[251]

शरद वणन—

भू म रमी शरद की कमनीयता थी।
नील अनत नभ निमल हो गया था।

> थी छा गयी ककुभ म अमितासिताभा ।
> उत्फुल्लसी प्रकृति थी प्रतिभात होती ।[252]

वस त वणन–

> निमग्न न सौरभ न पराग न ।
> प्रदान की थी अति का त भाव म ।
> वसु धरा का, पिक का, मिलिन्द का ।
> म ान्यता मा कता म ाधता ।[253]

इस प्रकार कवि न ऋतुओ का वण न पूण कौशल स किया है । उसक प्रयोग म कृत्रिमता क लिए कोई स्थान नही है ।

दूती रूप म

कवि या रचनाकार क द्वारा प्रस्तुत रचना म जब प्रिय द्वारा प्रिय तमा के लिए या प्रियतमा द्वारा प्रिय क लिए प्रकृति द्वारा सदेश वाहक रूप मे सदश कहन की प्रथा क वणन को दूती रूप म प्रकृति चित्रण कहा जाता है ।

हरिऔध जी द्वारा प्रयुक्त किया गया पवन का दूत रूप म वणन बड़ा ही ममस्पर्शी और कृत्रिमता स पर है । इस प्रसग से राधा तो प्रकृति क सुरम्य वातावरण और शीतल मद सुगन्धित पवन पर क्रोध व्यक्त करती है कि तु फिर वह पवन को अनक रूपो म चित्रित हुए अपन हृदय की व्यथा कृष्ण तक पहुचान क लिए पवन दूता रूप म भजती है । राधा का काय हो जाय अर्थात उसका सन्देश कृष्ण तक पहुच जाय इसलिए पवन स वह विनय करती और कहती है–

> तू जाती है सकल थल ही वेग वाली बडी है ।
> तू है सीधी तरल हृदया ताप न मूलती ह ।
> मैं हू जी मे बहुत रखती वायु तेरा भरोसा ।
> जसे हो ऐ भगिनि बिगडी बात मेरी बना त ।।[254]

कवि ने दूती रूप म प्रकृति चित्रण पर विस्तार किया है । हरिऔध जी ने मथुरा का माग और माग म पड़ने वाले प्रस्थानो की ओर भी पवन का ध्यान आकृष्ट किया है । यही नही कवि ने युगानुकूल दुखी और व्यथित तथा वियोगाग्नि म जलन वाल वियोगियो के प्रति सहानुभूतिपूण व्यवहार करने का आग्रह किया है । दूती रूप म कोकिल[255] और यमुना[256] का भी वणन कवि द्वारा किया गया है । इस प्रकार प्रकृति का दूती रूप म चित्रण भव्य और मनोमुग्धकारी है ।

वातावरण रूप में

प्रकृति के माध्यम स स्थान या दृश्य ाधक रूपा का ंद कवि अपनी रचना म चित्रण करता ह ना वहाँ वातावरण रूप म प्रकृति चित्रण कहा जाता है। एसे चित्रण मानव जीवन का अधिक प्र ावित करते ह। प्रभात सध्या उषा आदि के रूपा का चित्रण साहित्य सजन क साथ ही आरम्भ हुआ। इसलिए भारत म ही नहीं विश्व क साहित्य म वातावरण का लकर रचनाए अवश्य की जाती है। वातावरण का चित्रण यहाँ आन उल्लास उत्साह एव उमग के लिए होना है ता वहाँ गम्भार और शा त प्रकृति का चाकी प्रस्तुति हत हाता है। दाना रूपा म कवि हरिऔध नी न वातावरण को लेकर सजीव वणन किया है। प्रियप्रवास का प्रथम छ हा सध्या क वातावरण विधान को लकर प्रस्तुत है—

> दिवस का अवसान समीप था।
> गगन था कुछ लोहित हो चला।
> तरु शिखा पर थी अवराजती।
> कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा ॥[257]

तृतीय सग के आरम्भ म भाव और विशा द्वारा प्रलयकारी दृश्य कवि न प्रस्तुत किया है। रात्रि के समय सम्पूण वातावरण म शा ति और नीरवता स्वाभाविक है, कि तु वणन द्वारा कवि आन वाली अप्रत्याशित घटना का सकेत देते हुए प्रलय का' का प्रयाग करता है—

> समय था सुनसान निशीथ का।
> अटल भूतल म तमरा य था।
> प्रलय काल समान प्रसुप्त हो।
> प्रकृति निश्चल नीरव शान्ति थी ॥[258]

इसी प्रकार कृष्ण की गमन बेला [259] नन्द का कृष्ण का छाडकर व्रज लौटना[260] और उद्धव क सदो लकर आन पर यशादा,[261] राधा एव अनक गोप गापिकाओ[262] द्वारा जा भाव यक्त किया गया है उन स्थला का अवलोकन करने से हृदय सहज हो रो पडता है।

साक्षी रूप में

कवि जहाँ मानव को सुख दुख म उसक विचारा और भावा स परि चय प्राप्त कर उसके लिए समाज साम्य प्राप्त नहा होते है ता वह प्रकृति को साक्षी रूप म प्रस्तुत करता है। साक्षी रूप म प्रकृति चित्रण सयाग वियोग दानो रूपा म हाता है। प्रकृति क अ य रूपा की भाँति प्रकृति के साक्षी रूप का सूत्र भी साहित्य म अतीत काल से विद्यमान है।

संस्कृत का प्रभाव हिन्दी साहित्य पर भी पड़ा। हिन्दी के आदि काल भक्तिकाल तथा रीतिकाल साहित्य म यत्र तत्र प्रकृति का साक्षी रूप म प्रस्तुत किया गया है। भारतेन्दु जी की रचनाओ म भी ऐसे स्थल प्राप्त हैं–

अहा अहा वन के रूख, कहू देख्यो पिय प्यारो।
मेरो हाथ छुडाय कहा वह कित सिधारो॥[263]

हरिऔध के साहित्य मे भी अनेक एस स्थल हैं जहाँ प्रकृति साक्षी रूप म प्रस्तुत की गयी है।

प्रियप्रवास के सम्यक अध्ययन से असीम प्रकृति स कवि का परिचय सहज ही ज्ञात होता है। कवि न प्रकृति के अधिकाश रूपो को बड सुन्दर ढग स सजोया है जो निस्सदेह कवि के प्रकृति ज्ञान का परिचायक है। नवीन शैली का आलम्बन लने स प्रकृति के लोक रजक रूप मे प्रयोग पर कोई *प्रभाव नहीं पडा। समय एव भावानुकूल प्रकृति के प्रयोग काव्य की* वृद्धि मे सहायक हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 सूरदास और उनका साहित्य डा० देशराज सिंह भाटी, पृ० 230
2 हरिऔध और उनका साहित्य मुकुन्ददेव शर्मा, पृ० 247
3 प्रियप्रवास 4।35
4 वही, 4।10
5 वही, 4।11
6 वही 4।16
7 वही, 4।33
8 वही, 9।11
9 वही, 17।46
10 वही, 17।48
11 वही, 11।4 12।1
12 वही 11।22–27, 48 49
13 वही, 11।84, 87
14 वही 13।78,
15 वही 13।78
16 वही 13।80
17 वही, 16।98
18 वही 16।42
19 वही 14।21
20 वही, 16।104

21 प्रियप्रवास 17।54
22 वही 1।16
23 वही, 1।17
24 वही, 1।18–21
25 वही, 1।22
26 वही 1।24
27 वही, 1।27
28 वही, 18।23
29 वही 6।56, 63
30 वही 2।6
31 वही, 11।39, 40
32 वही, 4।4
33 वही 4।8
34 वही, 16।33, 34
35 वही 1।1
36 वही, 1।26 27
37 वही 1।28–33
38 वही, 4।26
39 वही, 4।49
40, वही 4।68
41 वही, 6।76
42 प्रियप्रवास मे का य सस्कृति और दशन डा० द्वारका प्रसाद सक्सना, पृ० 149
43 प्रियप्रवास 16।112
44 वही, 16।110
45 वही, 16।98
46 वही 14।44
47 वही, 14।74
48 वही, 15।62
49 वही, 15।88–98
50 सूरदास और उनका साहित्य पृ० 100 पर उद्धत
51 प्रियप्रवास 3।24 एव 3।33
52 वही 5।57

53 प्रियप्रवास 7।11
54 वही 7।57
55 वही 11।27
56 वही 11।31
57 वही 11।85–86
58 वही 13।84
59 वही 13।83
60 वही 3।20
61 वही 13।50–51
62 वही 12।67
63 वही 11।80
64 वही 16।117
65 वही, 16।111
66 वही 13।101
67 प्रियप्रवास म काव्य सस्कृति और दशन पृ० 154
68 वैदेही वनवास की भूमिका पृ० 1
69 अष्टाध्यायी–पाणिनि 3।3।194
70 नाल न्दा अद्यतन कोश–पुरुषोत्तमदास शब्द सख्या 60554
71 सामाजिक मनोविज्ञान की रूपरेखा पृ० 305
72 सूर और उनका साहित्य पृ० 393
73 प्रियप्रवास 10।24 25
74 वही 3।70
75 वही, 6।17
76 वही, 3।14–16
77 वही, 3।23
78 वही 7।61
79 वही, 9।6
80 वही, 9।4
81 वही 1।12, 13
82 वही 12।91
83 वही 3।85
84 वही 3।87
85 वही 12।87

86 प्रियप्रवास, 5।25,26
87 वही 5।33
88 वही, 4।36
89 वही 14।53
90 वही, 7।20
91 वही, 8।6–14
92 वही 5।49
93 वही 5।51
94 वही 10।24
95 वही 13।97
96 वही,
97 वही 5।33
98 वही, 1।19
99 वही 6।51
100 वही 6।57
101 वही, 8।15
102 वही, 8।60
103 वही, 10।45
104 वही 4।8
105 वही, 13।100
106 वही 2।10
107 वही, 4।1
108 वही, 4।24
109 वही, 5।15
110 वही 6।36
111 वही, 13।86
112 विद्यापति पदावली, पृ० 190
113 प्रियप्रवास, 6।8
114 वही, 2।29
115 वही 3।76
116 वही 13।21
117 वही 15।26
118 वही, 9।127–129

119 प्रियप्रवास, 11।2
120 वही, 16।35
121 वही, 16।121
122 वही 12।167
123 महाभारत–आदिपव, 74।41
124 वही, 3।86
125 वही, 17।49
126 गीता, 2।37
127 वही, 11।25
128 वही, 11।85
129 वही, 11।87
130 बृहदारण्यक उपनिषद, 1।3।27
131 वदान्त सार, पृ० 11
132 प्रियप्रवास, 14।39
133 वही, 16।42
134 वही, 14।22
135 वही, 16।100
136 वही 16।112
137 वही, 12।65
138 वही, 12।62
139 वही, 11।40
140 वही, 3।70 एव 78
141 वही, 16।113
142 श्रीमदभगवतगीता, 10।20–42
143 प्रियप्रवास, 16।108
144 वही, 16।110
145 वही, 13।70
146 वही, 17।54
147 वही, 12।84
148 वही, 14।23
149 प्रियप्रवास म काव्य सस्कृति और दशन डा० द्वारकाप्रसाद सक्सना, पृ० 2)7
150 मनुस्मति, 4।204

151 गीता, 4।8
152 प्रियप्रवास, 13।80, 81
153 वही, 16।135
154 वही, 17।51
155 वही, 11।84
156 वही, 16।45
157 प्रियप्रवास में काव्य, संस्कृति और दर्शन डा० द्वारकाप्रसाद सक्सेना, पृ० 264
158 प्रियप्रवास, 16।42
159 वही, 11।86
160 तदैव, 17।46
161 प्रियप्रवास, 14।22–31
162 वही, 8।24, 26, 28, 45, 60
163 वही, 1।9, 13, 16–26
164 वही 5।46
165 वही 13।96
166 रामचरितमानस, 2।259।4
167 प्रियप्रवास, 5।20–78
167 वही, 11।25–27
168 वही, 11।84–95
170 प्रियप्रवास चतुर्थ सं०–भूमिका, पृ० 30
171 प्रियप्रवास, 8।46, 47
172 वही, 4।9,17
173 वही, 4।8
174 प्रियप्रवास, 4।8
175 वही, 4।9
176 वही 4।34
177 वही, 6।30–83
178 वही, 16।83–88
179 वही 16।35 36
180 वही, 16।98
181 वही, 17।48,49
182 वही, 17।49

183 प्रियप्रवास 8।6
184 वही 3।21–24
185 वही 17।41
186 वही 7।3–7
187 वही 7।61
188 वही 3।49–53
189 वही 8।68
190 वही 3।28–50
191 वही 5।50 51
192 वही 7।11–57
193 वही 7।60
194 वही 10।14
195 वही 10।62 63
196 वही 18।65
197 वही 9।9
198 वही, 11।25
199 वही 16।30–46
200 वही 13।68–84
201 वही 2।13–14 एव 7।26
202 प्रियप्रवास म काव्य सस्कृति और दशन पृ० 125
203 डा० अश्रय पृ० 10
204 श्रीमदभगवत गीता 7।4–6 एव 9।8 10
205 तुलसी साहित्य म प्रकृति चित्रण पृ 79
206 प्रियप्रवास 9।16 और भी वही 9।17 9।21
207 प्रियप्रवास 12।26– 9
208 वही 16।28
209 वही, 14।77
210 वही 12।71
211 वही 6 76
212 वही 6।75
213 वही 6।71
214 वही 1।5
215 वही, 1।1–4

216 प्रियप्रवास, 16।5
217 चिन्तामणि-भाग 2 पृ० 22, 34
218 प्रियप्रवास 9।25
219 वही 6।50
220 वही, 16।4
221 वही 6।33-82
222 वही 3।87-88
223 वही 6।29-31
224 वही, 15।7 18, 13 6।50, 52 53 14।42-46
225 वही, 3।82
226 वही, 2।36-42
227 हिन्दी का सम-सामयिक साहित्य पृ० 177
228 प्रियप्रवास, 15।8
229 वही, 6।27-32
230 वही, 16।110-117
231 वही, 3।18-83
232 वही, 4।7
233 वही 6।57-59
234 वही, 10।49
235 वही, 3।63
236 वही, 2।61
237 वही, 9।15
238 वही 9।35
239 वही, 9।40
240 वही, 5।8
241 रामचरितमानस, 1।126।5-8
242 वही, 4।14।2-4
243 प्रियप्रवास, 9।33
244 वही 4।42
245 कामायनी-दिग्दर्शन, पृ० 207-208
246 तुलसी का गवेषणात्मक अध्ययन, पृ० 14
247 प्रियप्रवास, 1।1-14
248 वही, 2।43-44 एवं 5।58-59

249 प्रियप्रवास 6।30 32
250 वही 1।56
251 वही, 12। -18
252 वही, 14।77
253 वही, 16।4
254 वही, 6।35
255 वही 14।98-100
256 वही, 15।124
257 वही 1।1
258 वही, 3।1, 14 15
259 वही 5।10
260 वही, 8।17-23
261 वही 10।87
262 वही, 11।4
263 चन्द्रावली नाटिका उद्धत-भारतेन्दु साहित्य श्री रामगोपाल सिंह चौहान पृ० 256

पञ्चम अध्याय

प्रियप्रवास में कला-अभिव्यक्ति

खण्ड-क

प्रियप्रवास का काव्य रूप

प्रियप्रवास का महाकाव्यत्व

प्रियप्रवास खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य है। इसकी रचना सस्कृत के वर्णिक छ द मे की गयी है। काव्य की भूमिका मे इस तथ्य को रचनाकार ने स्वय स्वीकार किया है।[1] इस ग्रथ का प्रणयन सत्रह सर्गो मे किया गया, जिससे प्रभावित होकर सर्वांग सु दर महाकाव्य के प्रणयन की परम्परा प्रारम्भ हो जाय।[2] यद्यपि हि दी के आचार्य सस्कृत छन्दो का प्रयोग भाषा मे कविता के लिए श्रेष्ठ नहीं मानते थे जो सम्भवत उनकी हिन्दी भाषा के प्रति अगाध श्रद्धा का परिणाम था। इसके समर्थन म कवि ने द्वितीय हि दी साहित्य सम्मेलन का काय विवरण, भाग-2, पष्ठ 8 पर उल्लिखित आचाय प० बालकृष्ण भट्ट के विचार उद्धत किये हैं। 'आजकल छ दों के चुनाव म भी लोगो की अजीब रुचि हो रही है। इ द्रवज्रा, म दाक्रा ता, शिखरिणी आदि सस्कृत छ दों का हि दी म अनुकरण हममे तो कुढन पैदा करता है।"[3] कवि ने इन विचारो को समुचित नही माना, क्योकि प० लक्ष्मी वाजपेयी[4] मनन द्विवेदी[5] प्रभृति विद्वान छ द प्रयोग का समर्थन करते हैं। छन्द विधान एव अतुका त शैली के आधार पर किसी काव्य का महाकाव्यत्व अस्वीकार करना तर्कसगत नही है क्योकि काव्य म कला का औचित्यपूर्ण निर्वाह करते समय सम्पूर्ण लक्षणो के आधार पर काव्य की सरचना सम्भव नहीं है। इसके समर्थन म प० सुधाकर द्विवेदी का मत द्रष्टव्य है-'हि दी और सस्कृत काव्यो म जितने भेद हैं उन सब पर ध्यान न देकर जो काव्य बनाया जावे तो शायद एकाध दोहे या श्लोक काव्य लक्षण से निर्दोष ठहरें।'[6]

भारतीय एव पाश्चात्य महाकाव्य के लक्षणो के आधार पर प्रिय प्रवास के परीक्षण से उसके महाकाव्य रूप की परीक्षा की जा सकती है।

कवि की स्वीकारोक्ति के अनुसार निर्दिष्ट महाकाव्य के सभी लक्षणों का निर्वाह किसी रचना म सम्भव नही है क्योकि साहित्यकार का समाज के प्रति महान दायित्व होता है । राष्ट्र युग या समाज एव भाषा, इसकी रचना को प्रभावित करते हैं । भारतीय आचार्यों ने जो लक्षण महाकाव्य के लिए निर्धारित किये थे उनका कोई भी महाकाव्यकार अक्षरश पालन नही कर सका है क्योकि कवि की मुख्य दृष्टि वर्ण्यविषय का सम्यक निर्वाह करना होता है जो देश काल, परिस्थितियो मे प्रभावित होती है । चूँकि कवि ने महाकाव्य का उद्देश्य लेकर रचना की है, इसलिए इसम तत्वो का निर्वाह स्वाभाविक है । यत्र तत्र भाव युग एव भाषा से प्रभावित कथानकादि के परिवतन से भले ही किसी लक्षण का निर्वाह न हो पाया हो, वसे यदि लक्षणो को दृष्टिपथ म न रखकर भी सम्पूर्ण विषय का स्पष्टीकरण करने के लिए किसी लघु या वृहद काव्य की सजना की जाय तो उसम लक्षणो का सवथा अभाव ही हो यह सम्भव नही है ।

महाकाव्य क लक्षण देते समय पाश्चात्य विद्वानो ने जातीय भावना पर अधिक बल दिया है । काव्य के विशद रूप के कारण उसे 'एपिक' कहा गया है जिसके कारण भारतीय आचार्यों से अधिक भिन्न नहीं हैं । इन विद्वानों मे अरस्तू, एबरक्रॉम्बी, मकवील डिक्शन, सी० एफ० बावरा आई० टी० मेयर, जिराल्डी सेन्टो हीगल आदि विद्वानों ने महाकाव्य के लक्षण दिये है। भारतीय आचार्यों के लक्षण इन विद्वानो से कहीं अधिक विस्तृत हैं । 'अग्नि पुराण'[7] एव दण्डी के काव्यादश'[8] मे दिये गये महाकाव्य के लक्षणो मे विशेष अन्तर नही है । ईशान सहिता म महाकाव्य के 8 से 30 सग तक होने का उल्लेख है ।[9] आचाय विद्यानाथ[10] ने भी महाकाव्य क लक्षण प्रस्तुत किये हैं । आचाय भामह[11] एव रुद्रट[12] ने महाकाव्य के परम्परागत लक्षणों का उल्लेख किया है । आचाय हेमचन्द्र सूरि (बारहवी शताब्दी) ने महाकाव्य के लक्षणों मे विकास किया जिसमे प्राकृत, अपभ्रंश तथा ग्राम्य भाषा का भी स्वीकार किया गया । सर्गों के पर्याय, आश्वास, सधि और अवस्कन्ध के साथ नाटय सधियो की योजना का उल्लेख है ।[13]

महाकाव्य के लक्षणो म सवमान्य लक्षण चौदहवी शताब्दी क आचाय *विश्वनाथ द्वारा प्रदान किये गये । उन्होने साहित्य दपण मे महाकाव्य के* निम्न लक्षण निर्धारित किये हैं–

सग बन्धो महाकाव्य तत्रैको नायक सुर ।
सद्वश क्षत्रियोवापि धीरोदात्त गुणन्वित ॥

एकवशभवाद्भूपा कुलजा वहवोऽपि वा ।
शृगारवीरशा तानामेकागों रस इष्यते ।
अगानि सर्वेऽपि रसा सर्वे नाटकस धय ।
इतिहासोदभव वत्तम यद्वा सज्जनाश्रयम ।
चत्वारस्तस्य वर्गा स्युस्तेष्वक च फल भवेत ।
आदौ नमस्क्रियाशीर्वा वस्तुनिदश एव वा ।
क्वचिन्निन्दा पद्यरवसानड यवत्तक ।
नातिस्वल्पा नातिदीर्घा सर्गा अष्टाधिकाइह ।
नाना वत्तमयै क्वापि सग कश्चन दश्यते ।
सर्गान्ते भाविसगस्य कथाया सूचन भवेत ।
स ध्या सूर्ये दुरजनी प्रदोष ध्वान्तवासरा ।
प्रातमध्याह्न मगयाशैलतु वनसागरा ।
सम्भोग विप्रलम्भौच मुनि स्वग पुराध्वरा ।
रण प्रयाणोपगमवत्त म त्र पुत्रोदयादय ।
वणनीययथायोग्य साङ्गोपाङ्ग अमीइह ।
कवेव त्तस्य वा नाम्ना नायकस्यतरस्य वा ।
नामास्य सर्गोपादेय कथया सगनामतु ।।[14]

इन लक्षणो के आधार पर प्रियप्रवास का परीक्षण करना तकसगत है । प्रियप्रवास सगबद्ध का य है, जिसमें सत्रह सग हैं, जो अधिक एव स्वल्प नहीं हैं । इसके नायक श्रीकृष्ण ऐतिहासिक एव धीरोदात्त हैं जो अत्यधिक प्रिय होने के कारण जननायक हो गये हैं । वे देश जाति के लिए अपना सवस्व न्योछावर करने के लिए तत्पर हो जाते हैं,[15] इसमे वियोग शृगार[16] अगीरस है । वीर,[17] रौद्र,[18] वात्सल्य[19] अद्भुत,[20] भयानक[21] शा त[22] आदि अन्य रसो का प्रसगवश सुदर प्रयोग है । कथानक मे स धियो का काय कथाओं के अशों का समायोजन होता है । प्रियप्रवास मे राधा कृष्ण के प्रम वर्णन मे मुख सन्धि[23] कृष्ण के मथुरा गमन से पवन दूती प्रसग तक प्रतिमुख सन्धि[24] ब्रजांगनाओ के विलाप एव उद्धव के साथ उनकी वार्ता म गम सन्धि[25] राधा उद्धव सम्वाद में विमर्श[26] और राधा का लोकहित में रत होने म निवहण[27] स धि है । वास्तविकता यह है कि कथावस्तु की घटनाओ के सक्षिप्त वणन से नाट्य स धियो का निर्वाह समुचित ढग से भले ही न हो पाया है । हरिऔध जी ने धम, अथ, काम और मोक्ष (चतुवग) का अनेक स्थलो पर प्रतिपादन किया है ।[28] आशीवचन एव मगलाचरण का स्पष्ट उल्लेख न मिलते हुए भी सान्ध्यकालीन मनोरम प्रकृति का चित्र कृष्ण

के प्रति व्रजवासियों के अनन्य प्रेम की पृष्ठभूमि के रूप म प्रस्तुत करके कवि ने जन जीवन को मगल का आभास कराया है।[29]

हरिऔध जी ने गोपियो द्वारा कृष्ण के साहसिक कार्यों के प्रसग मे स्थान स्थान पर दुष्टो की निन्दा की है। सज्जन कृष्ण की प्रशसा कवि द्वारा समाज मे आदर्शों की स्थापना करन का सुन्दर प्रयास है। प्रियप्रवास मे एक सग म एक ही छन्द का प्रयोग सर्गान्त म छन्द परिवतन की भी व्यवस्था है परन्तु छन्दो मा यता का व्यवस्थित प्रयोग नही है। नवें सग मे छन्दो की विविधता है जिसमे मन्दाक्रान्ता, द्रुतविलम्बित, मालिनी वशस्थ, शिखरिणी वसन्ततिलका एव शार्दूलविक्रीडित छन्दो का प्रयोग है। यत्र तत्र सग के अन्त म भावी कथा की सूचना का भी निर्देश है। कवि द्वारा प्रकृति के मनोहारी चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। इनमे सध्या सूर्य चन्द्र रात्रि दिवस सयोग वियोग मध्याह्न पवत ऋतु सागर यज्ञ युद्ध[30] आदि का समयोचित प्रयोग है। महाकाव्य का नामकरण साथक है। प्रिय कृष्ण के मथुरा प्रवास की कथा से इसका श्रीगणेश हुआ है। भूमिका मे कवि ने प्रियप्रवास नाम की साथकता का स्पष्ट उल्लेख किया है।[31]

प्रियप्रवास मे सम्यक दृष्टि से विवेचन करने से महाकाव्य के सभी लक्षण प्राप्त होते हैं। कही कही कुछ अभाव स्वाभाविक प्रवाह के कारण आ गया है। मगलाचरण की परम्परावादी मान्यता को न स्वीकार कर कवि न वस्तु निर्देशात्मक रूप मे प्रस्तुत करते हुए सध्याकाल का चित्र कृष्ण के गायो के साथ आने की पष्ठभूमि जिसे विश्वनाथ प्रसाद मिश्र प्रभति विद्वान बिल्कुल स्वीकार नही करते– प्रियप्रवास मे कोई मगलाचरण नही। कुछ लोग अपने प्रतिभा बल स उसमे वस्तु निर्देशात्मक मगल प्रतिपादित करना चाहते है। ऐसे लोगा को पहले मगलाचरण की परिभाषा जान लेनी चाहिए। वे बुद्धि की अनावश्यक व्यायाम करने से बच जाते। किसी देवता या ईश्वर की प्राथना आदि के रूप मे जब तक पदावली नही रखी जाती तब तक केवल शब्दो को लेकर न्यर्थ ही विवाद करना शोभा की बात नही।[32] ग्रन्थ मे छन्दो का परिवतन साहित्य दपण क निर्दिष्ट लक्षण के आधार पर नही हुआ है और प्रत्येक सग के अन्त मे भावी कथावस्तु की सूचना भी समुचित ढग से नही प्राप्त होती है। कथावस्तु की सक्षिप्तता क आधार पर आचाय रामचन्द्र शुक्ल न प्रियप्रवास का प्रबन्ध काव्य के लिए भी उपयुक्त नही माना है।[33] की सज्ञा देते है। आलोच्य ग्रन्थ का कथानक वास्तव म सक्षिप्त नही है। कवि न नवीन मान्यताओ की स्थापना करते हुए श्रीकृष्ण जीवन के घटनाक्रमो को सस्मरणात्मक रूप म प्रस्तुत किया

है। श्रीकृष्ण द्वारा गोचारण मथुरा गमन से लेकर द्वारका प्रयाण तक का वर्णन प्रियप्रवास म उपलब्ध है। ऐसी घटनाएं जो श्रीकृष्ण के लौकिक रूप को पुष्ट करने म बाधक थीं, उनका त्याग कवि न सादृश्य कर दिया है। श्रीकृष्ण, राधा, यशोदा और नन्द को जो उदात्त रूप कवि न प्रस्तुत किया है वह अन्यत्र दुलभ है। इस प्रकार कथावस्तु की सक्षिप्तता का आरोप प्रियप्रवास के पक्ष म उपयुक्त नही जान पडता। इसके महाकाव्यत्व पर किसी प्रकार सदेह या शका के लिए स्थान भी नहीं रह जाता।

आधुनिक हिन्दी साहित्य के अनेक आलोचको ने युगानुकूलता को दृष्टि म रखते हुए अपने मन्तव्य महाकाव्य के सम्बन्ध मे दिये हैं। बाबू श्यामसुन्दर दास का कथन है—"महाकाव्य म एक महत उद्देश्य होना आवश्यक है। संस्कृत साहित्य के शास्त्रों म महाकाव्य के आकार प्रकार और वर्णन विषय के सम्बन्ध म बडी जटिल और दुरूह व्याख्यायें की गयी हैं, जिसका आधार लेकर लिखने से बहुत से महाकाव्यों के शरीर अवश्य घटित हो गये हैं।"[34] माता प्रसाद गुप्त का विचार है—"मानवता को अशक्ति से शक्ति, अशक्ति से शान्ति और नीचे से ऊँचे ले जाना ही वस्तुत महाकाव्य के अन्य लक्षणों की अपेक्षा सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्षण माना जा सकता है।"[35]

वास्तव म महाकाव्य का स्वरूप युग जीवन की परम्पराओं और परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। इसलिए महाकाव्य पर सार्वभौम और सार्वकालिक व्याख्या करना असम्भव है। गुप्तजी का विचार है—"महाकाव्य की रचना मानवता के मंगलमय आख्यान और लोक मानस की चेतना के आकलन का सांस्कृतिक प्रयास होती है।"[36]

हिन्दी साहित्य के आधुनिक आलोचकों की परिभाषाएं बहुत उपयुक्त हैं। इन्होंने युगानुरूपता और मानवता के हित की महत्ता प्रदान की है। अब तक हिन्दी महाकाव्य के लिए ऐसे लक्षण नहीं निर्धारित किए जा सके हैं जिनके आधार पर किसी महाकाव्य का समुचित मूल्यांकन कर उसके गुणों अवगुणों को प्रकाश म लाया जा सके। चूंकि प्रियप्रवास को खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है इसलिए महाकाव्य के लक्षणों का निर्धारण यदि इसी के आधार पर किया जाय तो बहुत कुछ समाधान सम्भव हो सकता है। रचनाकार के इस ग्रन्थ को महाकाव्य की रचना के उद्देश्य से यह आकार प्रदान किया है। प्राचीन और पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दिये गए लक्षणों का इसम निर्वाह है, यही नहीं युगानुरूपता भी इसम सर्वत्र विद्यमान है। इसलिए यह महाकाव्य तो है साथ ही सफल

साहित्य के लिए आदर्श ग्रंथ भी है। सर्वगुण सम्पन्न और खड़ी बोली का प्रतिनिधि महाकाव्य स्वीकार करते हुए प० रमाशंकर शुक्ल ने लिखा है-"खड़ी बोली में ऐसा सुन्दर प्रशस्त, काव्य गुण सम्पन्न और उत्कृष्ट काव्य आज तक दूसरा निकला ही नहीं। हम इस खड़ी बोली के कृष्ण काव्य का सर्वोत्तम प्रतिनिधि कह सकते हैं। वर्णात्मक काव्य होकर यह चित्रोपम, सजीव रोचक तथा रसपूर्ण है।"[38]

खण्ड—ख

प्रियप्रवास की भाषा शैली

भाषा भावों की अभिव्यक्ति का समुचित और श्रेष्ठ माध्यम होता है। कविता में सुन्दर अनुभूति के लिए जितनी भावात्मक सरसता की आवश्यकता होती है उतनी ही अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए प्रवाहमयी भाषा की आवश्यकता होती है। भाव और भाषा काव्य रूपी सिक्के के दो पहलू हैं। दोनों के संयोग से ही काव्य का अस्तित्व सम्भव है। इस प्रकार भाव रहित भाषा का कोई मूल्य नहीं और भाषा रहित भाव का कोई रूप ही नहीं निर्धारित हो सकता है। प्रियप्रवास महाकाव्य भाव भाषा की दृष्टि से अपूर्व है। इसके भाव पक्ष के विभिन्न पक्षों पर अध्ययन के उपरान्त कला पक्ष की विवेचना आवश्यक है।

प्रियप्रवास की रचना के समय सभी क्षेत्रों में परिवर्तन का आन्दोलन चल रहा था। जनता राजनीतिक स्वतन्त्रता, सामाजिक और धार्मिक रूढ़ियों से मुक्ति चाहती थी। साहित्यकार भाषा और भाव जगत में स्वच्छन्द विचरण करना चाहता था। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' के सम्पादन काल में भाव, भाषा, विषय सभी क्षेत्रों में नवीन प्रतिमानों की स्थापना की। ब्रजभाषा के स्थान पर गद्य पद्य दोनों में खड़ी बोली के प्रयोग पर बल दिया। वैसे तो खड़ी बोली में छुट पुट रचनाएं होती थीं, किन्तु प्रियप्रवास जैसे महाकाव्य रचना की सम्भावना ही न थी, जिसे महाकवि हरिऔध ने अपने अथक प्रयासों और आलोचनाओं को सहते हुए श्रेष्ठ रूप प्रदान किया। कवि ने संस्कृत वर्णवृत्तों के द्वारा अपने ग्रंथ में नवीन मूल्यों की स्थापना की है। उनकी भाषा जीवन्त है, उसमें युग चित्रण की क्षमता है और समाज में स्वीकृत वर्णों पदों तथा मुहावरों का स्थान स्थान पर सुन्दर प्रयोग है। हरिऔध जी की भाषा नवीन तो अवश्य है परन्तु उसमें ऐसे भाव प्रवाहित हो रहे हैं जो सहज ही पाठक को आकृष्ट कर लेने में सक्षम हैं।

हरिऔध जी ने हिंदी को व्यापक और लोकप्रिय बनाने के लिए सस्कृत के वर्ण वृक्षा और तत्सम भाषा शब्दो का प्रयोग किया। उनका विचार था कि अन्य प्रान्तीय भाषाएँ यथा–बगला मराठी, तेलगू मलयालम आदि, जो सस्कृत से उदभूत हुई हैं, वे भी इस ग्रथ को स्वीकार करें और हिन्दी का व्यापक रूप से प्रसार हो सके। उनका कथन है–"सस्कृत वृत्तो के कारण और अधिकतर मेरी रुचि से इस ग्रथ की भाषा सस्कृतगर्भित है, क्योकि अन्य प्रान्त वाला मे यदि समादर होगा तो ऐसे ही ग्रथ का होगा। भारतवर्ष भर म सस्कृत भाषा आदत है। बगला, मराठी, गुजराती वरन् तमिल और पजाबी तक म सस्कृत शब्दो का बाहुल्य है। इन सस्कृत शब्दो को यदि ग्रहण करके हमारी हिन्दी भाषा इन प्रान्तो के सज्जनो के सम्मुख उपस्थित होगी तो वे साधारण हिंदी से उसका अधिक समादर करेंगे, क्योंकि उसके पठन पाठन मे उनको सुविधा होगी और वे उसको समझ सकेंगे। अन्यथा हिंदी को राष्ट्र भाषा होने म दुरूहता होगी, क्योंकि सम्मिलन के लिए भाषा और विचार का साम्य ही अधिक उपयोगी होता है। मैं यह नही कहता कि अन्य प्रान्त वालों से घनिष्ठता का विचार करके हम अपने प्रान्त वालो की अवस्था और अपनी भाषा के स्वरूप को भूल जावें।"[39]

हरिऔध जी का खडी बोली म प्रियप्रवास की रचना का उद्देश्य उनके कथन से स्पष्ट हो जाता है। वे परिनिष्ठित हिन्दी को लोकप्रिय और राष्ट्रभाषा के रूप म प्रतिष्ठित करना चाहते थे। चूँकि अन्य प्रान्तीय भाषायें सस्कृत के निकट थी, इसलिए उनसे तादात्म्य स्थापित करने म सस्कृतनिष्ठ भाषा ही सक्षम हो सकती थी। कवि ने प्रियप्रवास की रचना करके अपने उद्देश्य मे सफलता प्राप्त की है।

खडी बोली म प्रियप्रवास की रचना करके कवि को कटु आलोचनाएँ सहन करनी पडीं। सस्कृत पदावली और वर्णित छन्दो से युक्त रचनाओ म कडवाहट[40] का अनुभव होता था। आलोचको द्वारा की गयी आलोचना का उत्तर कवि ने प्रियप्रवास की भूमिका म दिया है और खडी बोली म काव्य रचना की उपयुक्तता पर विशेष बल दिया है।[41]

खडी बोली म विरचित प्रियप्रवास की उपयुक्तता का समर्थन करते हुए डॉ० केसरीनारायण शुक्ल का मत है–हरिऔध जी की आशा और विश्वास के अनुरूप ही प्रियप्रवास की रचना के बाद ही खडी बोली के विरोधियो का मुख सदा के लिए बन्द हो गया। उसे कर्ण कटु कर्कश और काव्य के लिए अनुपयुक्त कहने का साहस न हुआ। इस ग्रथ के प्रणयन से

खडी बोली की क्षमता प्रमाणित हो गयी और इसक विरोधिया का मुँह बद हो गया ।[42]

हरिऔध जी ने बाद की रचनाओ म संस्कृतगर्भित भाषा को कृत्रिम स्वीकार करते हुए बोल-चाल की भाषा को ही विशेष महत्व दिया है। भाषा क विविध रूपो पर प्रयोग के लिए बल दिये जाने के कारण ऐसा जान पडता है कि प्रियप्रवास की भाषा प्रयोग काल की भाषा थी। वास्तव म कवि प्रयोग कर रहा था कि हिन्दी के साहित्यिक भाषा का रूप कसा हो ? उन्हे हिन्दी मे शब्द भण्डार का अभाव खटक रहा था। इसलिए उन्होने संस्कृत ब्रज उर्दू आदि भाषाओ के शब्दो का प्रियप्रवास म स्थान दिया है। शब्द ही भाषा को स्वरूप प्रदान करते है। इसलिए इस विषय पर दृष्टिपात करना आवश्यक है कि शब्द कहाँ स लिए जाय और उनके कौन कौन से रूपो को प्रियप्रवास म स्थान दिया गया है।[43]

प्रियप्रवास की रचना संस्कृत गर्भित खडी बोली म हुई है। इस ग्रथ को लेकर हरिऔध जी अहिन्दी भाषी प्रान्तो और विद्वानो म सम्मान की दष्टि स देखे जाते है। उन्होने प्रस्तुत ग्रन्थ को बोलचाल की भाषा स दूर रहन का प्रयास किया था किन्तु ऐसा नही हो सका। इसम भाषा के दोनो— संस्कृतगर्भित रूप और बोलचाल का रूप उपलब्ध है—

अतसि—पुष्प अलकृतकारिणी।
शरद नील—सरोरुह रजिनी।
नवल—सुन्दर श्याम—शरीर की।
सजल नीरद सी कलकान्ति थी।[44]

तथा—

नाना भाव—विभाव—हाव कुशला आमोद आपूरिता।
लीला—लोल कटाक्ष—पात—निपुणा भ्रूभगिमा—पडिता।
वादित्रादि समोद वादन परा आभूषणाभूषिता।
राधा थी सुमुखी विशाल—नयना आनन्द—आन्दोलिता।।[45]

प्रियप्रवास की रचना संस्कृत गर्भित पदावली के प्रयोग का उद्देश्य लेकर की गयी थी। कवि को इसम सफलता मिली है। उपर्युक्त पद इसी प्रकार के हैं। इसमे बोलचाल की भाषा का प्रयोग कम हुआ है, परन्तु ऐसे छन्द भी कम नही हैं जिनम बोलचाल की भाषा का प्रयोग न हुआ हो, उदाहरण दष्टव्य हैं—

धारा वही जल वही यमुना वही है।
हैं कुज वैभव वही वन भू वही है।

है पुष्प पल्लव वही ब्रज भी वही है।
ए हैं वही न घनश्याम बिना जानते ।[46]

इस प्रकार हरिऔध जी द्वारा संस्कृत गर्भित भाषा प्रयोग की घोषणा के बाद भी अनेक स्थलो पर बोलचाल की भाषा का प्रयोग हो गया है। यह कवि की असफलता नही वरन स्वाभाविकता है। संस्कृत पदावली के प्रयोग म कवि कही कही कृत्रिम हो गया है। इस प्रकार की प्रवत्ति सूर, तुलसी और केशवदास[47] की रचनाओ म भी पायी जाती है। सूर की भाषा म भी कही कहीं संस्कृत का बाहुल्य दष्टिगत होता है। अवधी का महाकाव्य होने के बाद भी रामचरितमानस मे अनेक स्थलो पर संस्कृत पदावली का प्रयोग है। यह सत्य है कि प्रियप्रवास का समय, प्रयोग का समय था, इसलिए भाषा शैली विषय सम्बन्धी शिथिलताएँ भाषागत दोष नही मानी जा सकतीं।

शब्दो के समुचित विधान स भाषा (गद्य पद्य) रूप धारण करती हैं। शब्द कवि या लेखक के हृदयस्थ भावो को बिम्ब रूप देने के लिए सक्षम होते हैं। यदि काव्य म भावानुकूल शब्दो का प्रयोग नही हुआ तो वह काव्य लोक रजनकारी नही हो सकता। और साहित्यिक जगत म उसे आदर नही प्राप्त हो सकता। किसी भी काव्य रचना के लिए चित्रात्मक शब्दो की अपेक्षा होती है और यदि उसम लाक्षणिकता एव ध्वन्यात्मकता हो तो सहज ही स्पर्श करने लगता है। हरिऔध जी ने अनेक स्थलो पर शब्दो का प्रयोग इस रूप मे किया है कि एक सुन्दर चित्र अंकित हो जाता है—

प्रगटती बहु भीषण मूर्ति थी।
कर रहा भय ताण्डव नत्य था।
विकट-दन्त भयकर प्रेत भी।
विचरते तरु मूल समीप थे ।।[48]

कवि शब्दों के चयन मे इतना दक्ष है कि अनेक स्थलों पर विभिन्न रूपो के चित्र प्रस्तुत कर दिये है। इसी प्रकार ध्वन्यात्मकता,[49] लाक्षणिकता[50] एव व्यजकता[51] भी अनेक छन्दों म प्राप्त है।

(अ) ब्रजभाषा के शब्द—हरिऔध जी परम्परा से चली आ रही ब्रजभाषा के प्रभाव से वंचित न रह सके। यद्यपि उनका उद्देश्य संस्कृतनिष्ठ पदावली म रचना करने का था, किन्तु उनके प्रारम्भिक रचनाओ का ब्रज भाषा में होने के कारण उसका मोह पूर्णरूपेण नही छोड सके। प्रियप्रवास म अनेक स्थलो पर ब्रजभाषा के मधुर और लालित्यपूर्ण शब्दो का प्रयोग हुआ है। यह सत्य है कि ब्रजभाषा में शब्द बडे सरस और कोमल होते हैं,

किन्तु खडी बोली के साथ जुडकर इनकी यह विशेषता जाती रही। जैसे-ठोरो[52], लाबी[53], बेडी[54], कसर[55] धौल[56], जुगुत[57], ढिग[58] आदि। कुछ ऐसे शब्दो का प्रयोग हुआ है जो खडी बोली से भिन्न अथ म प्रयुक्त होने के कारण दोषपूण हैं—

1 सकल को उपढांकन आदि से।
उमगती पगती अति मोद मे।[59]
2 तब हृदयकरा से ढांपती थी दृगो को।[60]

ब्रज भाषा की क्रियाएँ अत्य त सरस होती हैं। खडी बोली म इनका सयोग नागर स्त्री का ग्राम्य स्त्री से मिलन जैसा अस्वाभाविक जान पडता है। क्रियाओ का प्रयोग भाषा सौन्दय मे वृद्धि के लिए हुआ है। कि तु वे शब्द अलग थलग दिखाई पडते है। क्रिया पदो के ब्रजभाषा का रूप खडी बोली गद्य मे अधिकाश देखने को मिलता है। जसे-विलोकन बरसना, *जोहना छलना आदि। कुछ विद्वान खडी बोली म ब्रज के क्रिया पदों के* प्रयोग को दोषपूण मानते हैं।[61] हरिऔध जा का विचार है-

"मेरा विचार है कि खडी बोली बोल चाल का रग रखते हुए जहाँ तक उपयुक्त एव मनोहर शब्द, ब्रजभाषा मे मिलें उनके लेने म सकोच न करना चाहिए। जब उदू भाषा सवथा ब्रजभाषा क शब्दो स अब तक रहित नही हुई तो हि दी भाषा अपना सम्ब ध कसे विच्छिन्न कर सकती है। इसके व्यतीत मे मैं यह कहूँगा कि उपयुक्त और आवश्यक शब्द किसी भाषा का ग्रहण करने के लिए सदा हि दी भाषा का द्वार उ मुक्त रहना चाहिए। [62] उनके विचार से ब्रज भाषा के क्रिया पदो का प्रयोग काव्य सौन्दय और कोमलता लाने के लिए हुआ है 'फबीला' शब्द का प्रयोग दष्टव्य है—

नीले फूले कमल दल सी गात की श्यामता है।
पीला प्यारा वसन कटि म प हते हैं फबीला।
छूटी काली अलक मुख की काति को है बढ़ाती।
सद्वस्त्रो मे नवल तन की फूटती सी प्रभा है।।[63]

इसी प्रकार विलसना[64], विलोकना[65] आदि क्रियाओ के प्रयोग द्वारा भाषा सौ दय पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पडा है। कही कहीं ब्रजभाषा के क्रिया पदो द्वारा ककशता और कृत्रिमता आ गयी है। जसे-पिन्हाना[66] दुरना[67], काढ़ना[68], कलपना[69] बोधना[70] आदि। एक क्रिया का एक ही छ द मे कई बार प्रयोग होने से भाषा की प्रवाहमयता समाप्त हो गई है—

कोई ऊधो यदि कहे काढ़ दे गोपिकाएँ।
प्यारा प्यारा निज हृदय तो वे उसे काढ देंगी।

हो पावेगा न यह उनसे देह मे प्राण होते।
उद्योगी हो हृदय तल से श्याम को काढ देवें ।।[71]

डा० द्वारका प्रसाद सक्सेना न ब्रजभाषा के त्रिया पदो के प्रयोग को बहुत उचित नहीं माना है। उनकी मान्यता है कि समृद्ध संस्कृत भाषा के पास क्या शब्द भण्डार का अभाव है ? इसके उत्तर मे हरिऔध जी ने कवि कर्म की दुरूहता[72] को स्पष्ट करते हुए कहा है कि एक एक छन्दों की रचना म अत्यधिक समय नष्ट होता है। शब्द छ द के बन्धन मे बधे होते हैं। वर्णों ओर मात्राओ की सफल व्यवस्था मे कवि अव्यवहृत शब्दो का प्रयोग करता है। इसलिए ब्रजभाषा के संज्ञा एव त्रिया पदा का प्रयोग दोष-पूर्ण नहीं है।'

(आ) उर्दू और फारसी के शब्द–कवि ने कविता को छ दो की कसौटी पर शुद्ध बनाने के लिए दूसरी भाषाओं के शब्दो के प्रयोग का पक्ष लिया है। इसलिए अन्य भाषाओ के शब्दो का प्रयोग स्वाभाविक है। हरिऔध जी के पूर्व सकडो वष मुसलमानो के शासन और उर्दू फारसी को प्रश्रय मिलन के कारण पूरे देश की सामान्य भाषा हो गई थी। अतएव कवि ने इसके श दो का प्रयोग अनुचित नहीं माना। प्रियप्रवास मे बुरा, जुदा, ताव हवा या वा, समा आदि शब्दो का प्रयोग है–

निपट नीरव गेह न था हुआ।
वरन हो वह भी बहु मौन ही।[73]

कवि ने अनक छन्दो मे कलेजा' शब्द का प्रयोग किया है–

विदार देता शिर था प्रहार से।
कपा कलेजा दृग फोड डालता।[74]

हरिऔध जी ने उर्दू फारसी के साथ पजाबी भाषा के वल[75] (समय) शब्द का प्रयोग किया है।

(इ) तत्सम और तदभव शब्द–प्रियप्रवास म अधिकतर तत्सम शब्दो का प्रयोग है। यथा–दिवस, पत्र पुष्प, भ्रमर, नेत्र, बाहु गृह उद्यान, लता वक्ष, रज, सूय, अश्व यष्टि आदि। प्रयोग की सुगमता और भाव की स्पष्टता के लिए कवि न अनेक तद्भव शब्दो का प्रियप्रवास मे स्थान दिया है। जैसे–दात भौंरा, मीठा आंसू गात, सोना मार आदि। कवि ने भाषा को सरस बनाने के लिए अनेक विकृत शब्दो का प्रयोग किया है। जैसे–छिप्रता (क्षिप्रता) तीखो (तीक्ष्ण) गेह (गृह), मरम (मर्म), सदेशा (सदेश) आदि।

(ई) संस्कृत शब्द–यह विश्वास कवि ने स्वयं स्वीकार किया है कि प्रियप्रवास में संस्कृत शब्दावली का प्राचुर्य है। यद्यपि यह सत्य है कि हिंदी भाषा संस्कृत से जन्मी है और उसी से शब्द भण्डार से यह समृद्धवान है, फिर भी कवि ने तत्सम शब्दों की अपेक्षा उसके रूप को ज्यों का त्यों प्रयुक्त कर दिया है। इस प्रकार के प्रयोग का औचित्य समझ में नहीं आता। प्रयुक्त शब्द–किंवा,[76] मुहुर्मुहुः,[77] बहुश,[78] इतस्ततः,[79] ईदृशी,[80] स्वल्प,[81] प्रायश[82] आदि। कहीं कहीं संस्कृत के शब्दों का ऐसा प्रयोग किया है, जहाँ हिंदी के छंद आभासित ही नहीं होते। यथा–

रूपोद्यान प्रफुल्ल प्राय कलिका राकेन्दु बिम्बानना।
तन्वंगी कल हासिनी सुरसिका क्रीडा कलापुत्तली॥[83]

हरिऔध जी संस्कृत भाषा के ज्ञान पुंज थे। उनके द्वारा संस्कृत शब्दों के प्रयोग से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है, किंतु कवि द्वारा कहीं कहीं संस्कृत बहुल रचनाएँ की गई हैं जिससे काव्य की स्वाभाविकता जाती रही है और उसमें कृत्रिमता दृष्टिगत होने लगती है।

(उ) व्याकरण की दृष्टि से नवीनता–हिंदी भाषा का स्वाभाविक गुण है कि वह हलंत वर्णों को सस्वर कर लेती है जैसे–मर्म मरम धर्म धरम आदि। संस्कृत बहुल खड़ी बोली की रचनाओं में इस क्षेत्र में शुद्ध प्रयोग लगा है किंतु कवि प्रियप्रवास की रचना में प्राचीन परिपाटी का पोषक है। हिंदी के लिए इसकी सुविधा पर कवि ने बल दिया है।

'प्रियप्रवास में अनेक स्थलों पर शब्दों को तोड़ मरोड़ कर प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार का प्रयोग करना कवि की विवशता थी। छन्दों की रचना में वर्णों का सन्तुलन बनाए रखने के लिए कवि को ऐसा करना पड़ा है। यथा–

ऊधो को यों सदुख जब थे गोप बातें सुनाते।
अमीरों का यक दल वहाँ उसी काल आया॥[84]

तथा–

सुरेश क्या है जब नेत्र में रमा।
महामना श्यामघना लुभावना॥[85]

दोनों छन्दों में क्रमश यक (एक) वां (वहाँ) एवं श्यामघना (श्यामघन) शब्दों का प्रयोग हुआ है जो कवि ने वर्णों की पूर्ति अथवा भाषा सौंदर्य को बनाए रखने के लिए किया है। विशेषणों के प्रयोग में संस्कृत और हिंदी दोनों रूपों को कवि ने स्वीकार किया है। सु-दलित[86] और कला लोलुप[87] शब्दों के प्रयोग में कवि ने संस्कृत के लिंग प्रणाली को

हीं स्वीकार किया है। छन्दों की रचना में हिन्दी संस्कृत के एक साथ योग करने से कवि एकवचन और बहुवचन की उपयुक्तता का ध्यान नहीं रख पाया है। देश दिशा अनुरंजित हो गईं[88] में देश के साथ दिशाएँ का प्रयोग होना चाहिए था किन्तु ऐसा नहीं हुआ है। व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियाँ अनेक छन्दों में देखी जाती हैं।

प्रियप्रवास के कलेवर में तत्सम शब्दों का बाहुल्य है। इसमें संस्कृत रचना प्रणाली को अपनाया गया है। चूंकि पूरा ग्रन्थ वर्ण वृत्तों में ही रचा गया है, इसलिए विशेषण और संज्ञा पद भी अधिकाधिक संस्कृत के ही ग्रहण किये गये हैं। कवि ने शब्द विधान काव्य की गुरुता की दृष्टि में रखकर किया है। हरिऔध जी ने ब्रजभाषा के संज्ञा और क्रिया रूपों के प्रयोग की उपयुक्तता का समर्थन करते हुए यथास्थान उनका प्रयोग किया है। ग्रन्थ में भाषा सम्बन्धी अनेक विसंगतियों के होने के बाद भी भाषा के प्रयोग की दृष्टि से रखते हुए प्रियप्रवास एक सफल कृति है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने प्रियप्रवास की भाषा के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किए हैं– उपाध्याय जी का संस्कृत पदविन्यास अनेक उपसर्गों से लदा तथा मंजुल, पेशल आदि के बीच बीच में जटिल अर्थात् चुना हुआ होता है।[89]

शब्दशक्ति

शब्द में वह शक्ति विद्यमान है जिसके उच्चारण से ही मन बुद्धि पर प्रभाव पड़ जाता है। यदि हम किसी मिठाई का नाम लेते हैं तो माधुर्य का अनुभव होने लगता है। जिस शक्ति के द्वारा शब्द का अर्थगत प्रभाव पड़ता है वही शब्दशक्ति है। शब्द और अर्थ एक दूसरे से वैसे ही अभिन्न हैं जैसे शरीर और प्राण। बिना एक की स्थिति के दूसरे का अस्तित्व सम्भव ही नहीं है। काव्य में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ को जानने के लिए शब्द शक्तियों की आवश्यकता पड़ती है। शब्दों के अर्थों का अनुभव कराने वाली तीन–अभिधा लक्षणा व्यंजना–शक्तियाँ होती हैं जो क्रमशः वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ रूप में अर्थ का बोध कराती हैं।

(अ) अभिधा–इस शक्ति के द्वारा शब्द के सांकेतिक या [illegible] का बोध होता है। अभिधा शक्ति का बोध सीधा होता है। [illegible] शब्द के मुख्यार्थ का बोध कराके शान्त हो जाती है। [illegible] अभिधा शब्द शक्ति के आधार पर की गई है इसलिए [illegible] पूर्ण अर्थ वाले शब्दों का अभाव है। अभिधा के [illegible] गुणवाचक, द्रव्यवाचक और क्रियावाचक–चार [illegible]।

आलोच्य ग्र थ में सवत्र अभिधा शक्ति का ही प्रयोग किया गया है, इसलिए उद्धरण की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। प्राचीन भारतीय आचार्यों के मतानुसार[91] उत्तम काव्य की रचना अभिधा शब्दशक्ति द्वारा ही सम्भव है।

(आ) लक्षणा–मुख्याथ म व्याघात होने पर जब रूढ़ि या प्रयोजन के द्वारा अ य अथ लक्षित होता है वहाँ लक्षणा शक्ति काय करती है। इसके मुख्य रूप से दो भेद होते है–रूढ़ि या रूढ़ि मूली प्रयोजन मूला। पुन प्रयोजनमूला लक्षणा के दो उपभेद–गौणी और शुद्धा किये जाते हैं।

(य) रूढ़ि या रूढ़िमूली लक्षणा–मुख्याथ को छोडकर रूढि के कारण शब्द अ य अथ ग्रहण कर लेते हैं वहाँ रूढि या रूढिमूली लक्षणा होती है। प्रियप्रवास मे अनेक स्थलो पर इनके उदाहरण पाये जाते हैं। यथा–

धाता द्वारा सजित जग म हो धरा मध्य आ के।
पा के खोये विभव कितने प्राणियो ने अनेको।
जैसा प्यारा विभव व्रज ने हाथ से आज खोया।
पाके ऐसा विभव वसुधा म न खोया किसी ने।।[92]

(र) प्रयोजनमूली लक्षणा (च) गौणी लक्षणा–जहाँ मुख्य अथ मे बाधा पडने पर समान रूप या गुण द्वारा अ य अथ ग्रहण किये जायें, वहाँ गौणी लक्षणा होती है। यथा–

दुख अनल शिखाएँ व्योम मे फूटती है।
यह किस दुखिया का कलेजा जलाती।
अहह अहह देखो टूटता है न तारा।
पतन दिल जले गात का हो रहा है।।[93]

(छ) शुद्धा लक्षणा–जब मुख्य अथ मे व्यवधान पडने पर समरूपता के अतिरिक्त अ य सम्ब धो द्वारा अथ ग्रहण किया जाता है वहाँ शुद्धा लक्षणा होती है। यथा–

सरोज है दिव्य सुग ध से भरा।
नलोक मे सौरभवान स्वण है।
सु पुष्प से सज्जित पारिजात है।
मयक है श्याम बिना कलक था।[94]

शुद्धा के दो भेद हैं–

(ट) उपादान लक्षणा–मुख्य अथ से हटकर जब वाक्याथ मे अ य अथ लक्षित हो तथा शब्द अपना निजी अथ भी बनाए रखे, वहाँ उपादान लक्षणा होती है। यथा–

व्यथित होकर क्यों बिलखूं नहीं।
अहह धीरज क्यों कर मैं धरूँ।
मदु कुरंगम शावक से कभी।
पतन हो न सका हिम शैल का ॥[95]

(ठ) लक्षण लक्षणा-आचार्यों ने लक्षण लक्षणा के दो भाग किये हैं। जहाँ विषयी एवं विषय में मक्नता लाने के लिए आरोप तथा आरोप के विषय दोनों का शब्द द्वारा कथन हो वहाँ सरोपा लक्षणा और जहाँ आरोप का विषय लुप्त रह एवं आरोप्य द्वारा कथन हो, वहाँ साध्यवासना लक्षणा होती है।

(त) सारोपा लक्षण लक्षणा

रम मय वचनों स नाथ जा नह मध्य।
प्रति दिवस बहाता स्वग मदाकिनी था।
मम सुकृत धरा का स्रोत जो था सुधा का।
वह नव घन प्यारी श्यामता का कहाँ है।[96]

(थ) साध्यवसाना-लक्षण-लक्षणा-इस शब्द शक्ति का प्रियप्रवास म कवि न बड़ा सुन्दर प्रयोग किया है-

वह भयकर थी यह यामिनी।
बिलपने ब्रज भूतल के लिए।
तिमिर मे जिसके उसका शशी।
बहु कला युत होकर खो चला ॥[97]

इसमे शशि का उल्लख तो है जो उपमान है किन्तु कृष्ण उपमेय हैं, जिसकी शशि से उपमा दी गयी है उनका वणन उल्लेख छन्द म नहीं है। अतएव यहाँ साध्यवसाना लक्षणा शब्द शक्ति का इसमें प्रयोग है।

प्रियप्रवास में यद्यपि अभिधा शब्द शक्ति की प्रधानता है, फिर भी लक्षणा क भेदो के रूप इसम विद्यमान हैं।

(द) व्यजना शब्दशक्ति-काव्य म गूढ़ एव गम्भीर होकर सरस एव आकर्षक अर्थ का ज्ञान, जिस शक्ति क द्वारा होता है उस व्यजना शक्ति कहते हैं। इसके द्वारा अभिधा और लक्षणा क बाद तीसरे अर्थ का बोध होता है जो शब्द क बल पर नहीं अर्थ के बल पर अर्थान्तर को व्यजित करते हैं। शब्द और अर्थ दोनो क व्यापार होने के कारण व्यजना क दो भेद शाब्दी व्यजना और आर्थीव्यजना होते हैं। शाब्दी व्यजना के अभिधा-मूलक और लक्षणामूलक दो भेद होते हैं। शाब्दी व्यजना का रूप दर्शनीय है-

क्षितिज निकट कसी लालिमा दीखती है।
वह रुधिर रहा है कौन सी कामिनी का।
विहग विकल हो हो बोलने क्या लगे है।
सखि सकल दिशा मे आग सी क्यो लगी है।[98]

प्रस्तुत छ द मे राधा की विरह ज य हृदय की तीव्र वेदना को प्राची दिशा म रुधिर बहने पक्षियो के विकल होकर बोलने और सभी दिशाओ मे आग लगने आदि उपादानो द्वारा चित्रित किया गया है इसलिए इसम शाब्दीमलक व्यजना है।

आर्थी व्यजना के द्वारा कवि काव्य म चमत्कार कौशल दिखाने की चेष्टा करता है। यह कौशल वाच्य देश काल चेष्टा आदि के द्वारा व्यग्य रूप मे प्रतीत होता है।

प्रात शोभा व्रज अवनि म आज प्यारी नहीं थी।
मीठा मीठा विहग रव भी कान को था न भाता।
फूले फूले कमल दल थे लोचनो मे लगते।
लाली सारे गगन तल की काल व्याली समा थी।।[99]

कृष्ण के वियोग मे आकर्षक पक्षियो का कलरव, पुष्पो का प्रस्फुटन आदि कछ भी शोभा नहीं देता यहाँ तक कि प्राची दिशा की लालिमा सर्पिणी सदश डस लना चाहती है। इस प्रकार यहाँ पर आर्थीव्यजना के भाव स्पष्ट होते हैं।

प्रियप्रवास की रचना खडी बोली के प्रयोग काल म हुई थी। इस लिए उसकी भाषा परिष्कृत और सशक्त नही हो पायी थी। ऐसे ग्र थ स्वाभाविक रूप से अभिधार्थ प्रधान ही होगे। इसमे लक्षणा और व्यजना का चित्र उक्ति वचित्र्य और अथ गाम्भीर्य के लिए कहीं कहीं पर दृश्यमान होता है। इसलिए इसम अभिधा के सहारे वाच्यार्थ को ही सरस और मधुर बनाने का सफल प्रयास किया गया है।

मुहावरे एव लोकोक्तिया

मुहावरे एव लोकोक्तियाँ भाषा को सशक्त और प्राणवान बनाती हैं। उनमे भाव निरूपण की अदभुत शक्ति होती है। वे उक्ति वैचित्र्य और अथ गाम्भीर्य से परिपूर्ण होते हैं। पाठक या श्रोता सहज ही इनके द्वारा आह्लादक और सुखद अनुभूतियाँ प्राप्त करता है। डा० हरवशलाल शर्मा का मत है– इन सीधी और सरल उक्तियो म मानव समाज का चिरकाल का अनुभव सचित है इनका आधार मनोवैज्ञानिक है, अतएव देश और

काल की सीमा से ये परे हैं और मानव के हृदय को समान रूप से स्पर्श करने की क्षमता रखते हैं।[100]

मुहावरो का प्रयोग वाक्पटु व्यक्ति बोलचाल मे भी प्रयुक्त करते हैं। यह कविगण के लिए भावो को हृदय से जोड़ने का अपरिहार्य साधन है। हरिऔध जी की रचना–'बोलचाल', चोखे चौपदे' और 'चुभते चौपदे' मे मुहावरे और लोकोक्तियो का पर्याप्त प्रयोग हुआ है, जो प्रियप्रवास की परवर्ती रचनाएँ हैं। प्रियप्रवास की रचना के समय कवि ने इनके प्रयोग पर विशेष ध्यान नहीं दिया है फिर भी इसमे मुहावरो का प्रयोग पर्याप्त मात्रा म हुआ है। यथा–

विवश है करती ! विधि वामता।
कुछ बुरे दिन हैं व्रजभूमि के।
हम सभी अति ही हतभाग्य हैं।
उपजती जा नित नव व्याधि है।[101]
हो जाती है निरख जिसको।
भग्न छाती शिला की।।[102]
दुख–पयोनिधि मज्जित का वही।
जगत म परमोक्षम पोत है।[103]
बन अपार विषाद उपेत वे।
विलख थी दृग वारि विमोचती।[104]
वह कह कहके ही रोक देतीं उन्हें वे।
तुम सब मिल के क्या कान ही फोड दोगी।[105]
करुण ध्वनि कहाँ की फैल सी क्यों गयी है।
सब तरु मन मारे आज क्यों यों खड़े हैं।[106]
सारी शोभा सकल व्रज की लूटता कौन क्यों है ?
हा ! हा ! मेरे हृदय पर या साप क्यों लोटता है।[107]

कवि ने बड़ी ही कुशलता से उपरिलिखित छन्दों म क्रमश बुरे दिन होना हतभाग्य होना, नई व्याधि उत्पन्न होना, छाती फटना, दुख सागर मे डूबने के लिए पोत होना, नेत्रो से अश्रु गिराना, कान फोड देना तथा मन मारकर बैठना साप लोटना का सफल प्रयोग किया है।

कवि ने मुहावरो का स्वाभाविक रूप म प्रसगवश प्रयोग किये हैं। कुछ छन्दों म कई मुहावरे एक साथ देखे जा सकते हैं। हरिऔध जी ने कुछ मुहावरो के प्रयोग में शब्दो का सस्कृतीकरण किया है। शब्दों के परिवर्तन से मुहावरो का वह प्रभाव नहीं रह जाता। सस्कृत गर्भित भाषा युक्त

मुहावरे प्रियप्रवास मे दष्टव्य हैं–निज श्रवण उठाती थीं समुत्कठिता हो।[108] हो जाती थी निरख जिसको मग्न छाती शिला की।[109] में उत्कठा से कण उठाना एव छाती मग्न होना (फटना) का सफल प्रयोग है।

लोकोक्तियो का प्रयोग मुहावरो की अपेक्षा प्रियप्रवास म कम हुआ है। लोकोक्ति का अथ है–जनसाधारण में प्रचलित उक्ति। प्रियप्रवास के सस्कृत गर्भित होने के कारण उनका प्रयोग अत्यल्प होना स्वाभाविक है। जो लोकोक्तियाँ प्रयुक्त हुई हैं उनका प्रयोग उसी रूप म न करके कवि ने श दानुवाद रूप म प्रस्तुत किया है–

थे या व्रजेद्र कहते कुलकामिनी को।
स्वामी बिना सब तपोमय है दिखाता।[110]
मैं होती हू विकल पर तू बोलता भी नही है।
कसी तेरी सरस रसना लु ठिता हो गयी है।[111]
खोते होते जब हैं भाग्य जो फूटता है।
कोई साथी अवनितल मे है किसी का न होता।[112]
क्या तू मेरे हृदय तल के रग म भी रगेगा।[113]

यहाँ कवि ने क्रमश स्वामी बिना जग सूना, जिह्वा लु ठित होना भाग्य फूटे का पथ्वी पर कोई साथी नहीं होता, रग म रगना आदि का बडा ही अच्छा प्रयोग किया।

इसके अतिरिक्त अ य अनेक स्थलो पर कवि ने लोकोक्तियों[114] का प्रयोग किया है। अधिकाश लोकोक्तियो को कवि ने सस्कृत के अनुवाद रूप मे प्रस्तुत किया है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रियप्रवास मे मुहावरा और लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषा उक्ति वैचित्र्य पण एव हृदय स्पर्शी हो गयी है, कि तु जहाँ कहा उनके स्वाभाविक रूप को प्रस्तुत न करके उनका अनुवाद करके छ दा मे प्रयोग किया गया है वहाँ अस्वाभाविकता आ गयी है।

गुण

गुणो का सम्ब ध रस धम से है क्याकि विभिन्न रसा की अनुभूति करते समय व्यक्ति के चित्त की भावनाएँ विभिन्न प्रकार की हो जाती है। यथा–शृगार रस के वणन स हृदय मे माधुय भाव का सचार होता हैं जबकि वीर रस से ओज एव दीप्ति की निष्पत्ति होती है। यही माधुय और ओज आदि गुण कहे जाते हैं। ये गुण रसा में आबद्ध होकर भावनाओं को विभिन्न स्थितियो मे जागत करते हुए हृदय मे विभिन्न भावों का सचार करते हैं। जहाँ तक गुणा की सख्या का प्रश्न है, इस सम्ब ध में विद्वानों में

मतवय नही है। भरत मुनि ने दस, व्यास ने उन्नीस, दण्डी ने दस, वामन ने बीस और भाज ने चौबीस गुणों का उल्लेख किया है, जबकि भामह और मम्मटाचाय ने माधुय, ओज तथा प्रसाद नामक तीन गुणों को ही मा यता दी है तथा वतमान समय मे यही तीनों गुण सवमा य हो गये हैं। प० राम दहिन मिश्र ने लिखा है कि यद्यपि आचार्यों न मुख्य रूप से तीन ही गुण मान हैं, पर तु आधुनिक रचनाओ पर दष्टिपात करने से कुछ अ य गुणो को भी मानना आवश्यक प्रतीत होता है। आजकल ऐसी अधिकांश रचनाएँ दीख पडती हैं, जिनमे न ता प्रसाद गुण है और न ओज गुण, अपितु इनके विपरीत उनके अनेक रूप दिखाई पडते हैं।[115] बाबू गुलाबराय के अनुसार मम्मट ने दस गुणा को माधुय, ओज और प्रसाद मे ही समाहित करने का प्रयास किया है, पर तु इसम उनको आंशिक सफलता ही मिल सकी है।[116]

गुणो की सख्या तीन मानने का प्रमुख आधार चित्त की तीन प्रमुख वत्तियाँ-कोमल, कठोर तथा मिश्रित हैं, जिनका सम्ब ध ऋमश 'माधुय, आज तथा प्रसाद गुण से है। अन्त करण को द्रवित करने वाले अथवा उसे आन द विभोर करने वाले गुण को माधुय गुण कहते हैं और यह गुण सम्भोग शृगार, विप्रलम्भ शृगार एव करुण रस म समाहित हैं। चित्त को उत्तेजित करने वाले गुण को ओज कहा जाता है जो वीर, वीभत्स और रौद्र रसो म प्राप्त होता है। इस गुण का सम्ब ध चित्त की कठोर वत्ति स है जबकि माधुय का कोमल वत्ति से। प्रसाद गुणसहृद के हृदय की ऐसी निमलता है, जा कि चित्त मे इस प्रकार व्याप्त हो जाती है, जिस प्रकार समिधा म अग्नि। यही प्रसाद गुण सभी रसा का धम माना जाता है, जिसकी अवस्थिति सभी रचनाआ की विशेषता होती है। प्रियप्रवास पर दष्टिपात करने मे यह स्पष्ट होता है कि हरिऔध जी ने प्रस्तुत ग्र थ मे माधुय गुण तथा ओज का प्रयोग करते हुए वियोग शृगार मे श्रीकृष्ण के शौय, पराक्रम और वीरता का चित्रण किया है। प्रसाद गुण इसमे सवत्र विद्यमान है।

(अ) माधुय गुण-यदि यह कहा जाय कि प्रियप्रवास माधुय प्रधान रचना है तो इसमे कोई अतिशयोक्ति न होगी, क्योकि इस ग्र थ में वियोग एव करुणा की अविरल धारा प्रवाहित रही है जिसमे पाठक का हृदय द्रवित हो जाता है। यशोदा का करुण ऋ दन, राधा की विरह विह्वलता, गोपियों की विक्षिप्तावस्था, ग्वाल बालो की खिन्नता तथा ब्रज के अ य प्राणियों के शोकावस्था में माधुय गुण स्पष्ट परिलक्षित होता है। यथा-

आभा अलौकिक दिखा निज बल्लभी को ।
पीछे मलाकार-मुखी कहता उसे था ।
तो भी तिरस्कृत हुए छवि गर्विता से ।
होता प्रफुल्लतम था दल भावुका का ।।[117]

कवि ने कोमल और मधुर पदावली द्वारा सयोग का माधुर्यपूर्ण चित अकित किया है । अतएव इसमे माधुय गुण विद्यमान है–

हा ! मैं कैसे निज हृदय की वेदना को बताऊ ।
मेर जी को मनुज तन से ग्लानि सी हो रही है ।
जो मैं होती तुरग अथवा यान ही या ध्वजा ही ।
तो मैं जाती कु वर वर के साथ क्यों कष्ट पाती ।।[118]

उद्धत छ द म वियोगी की दशा बडी दयनीय है । उसे आज मनुष्य रूप पाने पर ही पश्चाताप हो रहा है । वह सोचती है कि यदि मैं 'तुरग' या 'यान' होती तो निश्चित रूप से प्रिय का सयाग ही रहता । हृदय की यह विह्वलता सहज ही पाठक को व्यथित कर देती है । पूरा प्रियप्रवास वियोग विप्रलम्भ से भरा पडा है । इसलिए सवत्र माधुय गुण ही दश्यमान हो रहा है–

वात्सल्य– हरि न जाग उठे इस शोच से ।
सिसकती तक भी वह थी नही ।
इसलिए उनका दुख वेग स ।
हृदय था शतधा अब हो रहा ।।[119]

माँ यशोदा को कृष्ण गमन की सूचना मिल गई है, पुत्र वियोग की आशका से उनका हृदय रो रहा है नेत्र से अश्रु बह रहे हैं कि तु इस भय से कही कृष्ण जग न जांय, फूट फूट कर रोती हैं पर अपनी यथा यक्त नही कर सकती । माता के हृदय की यह वात्सल्य प्रेम सहज ही मातत्व को स्पश करने वाला है ।

(आ) ओज गुण–माधुय प्रधान रचना होते हुए भी प्रियप्रवास मे आज गुण श्रीकृष्ण के पराक्रम शौय एव वीरता क वणनो म स्पष्ट परिल क्षित होता है । ओज गुण के स्थायीभाव उत्साह जुगुप्सा तथा क्रोध के कारण ही हृदय मे दीप्ति उत्पत्ति हृदय विस्तार तथा उत्तेजना का सचार होता है । ब्रज को उत्पीडित करने वाले व्योमासुर, बकासुर वत्सासुर, अघासुर आदि के प्रसगो को कवि ने जिस रूप मे प्रस्तुत किया है । उसे पढने मात्र से ही पाठकों को चित्त में स्फूर्ति का सचार हाता है उसमे दीप्ति जागृत हो जाती है और आवेग उमड जाता है । यही नही इससे वह व्यक्ति,

उद्विग्न होकर आवेशयुक्त हो जाता है–

> बचो करो वीर स्वजाति का भला।
> अपार दोनो विधि लाभ है हमे।
> किया स्वकर्तव्य उबार जो लिया।
> सुकीर्ति पायी यदि भस्म हो गये॥[120]

इस छद म कवि ने श्रीकृष्ण के माध्यम से सम्पूर्ण जनता म उत्साह वद्धन का काय किया है। ऐसे छद श्रोता या पाठक के हृदय म राष्ट्र या देश प्रेम के प्रति सजग होने के लिए प्रेरित करते हैं अतएव इसमे ओज गुण विद्यमान है–

> स्व लोचनो स इस क्रूर काण्ड को।
> विलोक उत्तेजित श्याम हो गये।
> तुर त आ, पादप निम्न दप से।
> सवेग दौडे खल सर्प ओर वे॥[121]

सप के अत्याचारो को देखकर श्रीकृष्ण क्रोध से तमतमा उठे और उसे नष्ट करने के लिए उसकी ओर दौड पडे। कवि मे प्रस्तुत करने की वह चित्रात्मक कला है कि पाठक के हृदय म निश्चित रूप से उन भावो को उद्दीप्त कर देता है जिन भाव का वह चित्रण करना चाहता है। इस प्रकार इसम भी क्रोध (रौद्र) के आ जाने से ओज गुण की निष्पत्ति होती है।

(इ) प्रसाद गुण–इस गुण के माध्यम से कवि न प्रियप्रवास को सरस सरल तथा सुमधुर बनाने की पर्याप्त चेष्टा की है। परिणामस्वरूप यह गुण प्रियप्रवास मे सर्वत्र दशनीय है। इसी कारण प्रियप्रवास को सुनने अथवा पढ़न से उसके भाव तथा अथ को समझने मे किसी प्रकार की बाधा नही पडती। एक उदाहरण दृष्टव्य है–

> तथापि तू अल्प न भाग्यवान है।
> बडा हुआ है कुछ श्याम रग तो।
> अभागिनी है वह श्यामता नही।
> विराजती है जिसके शरीर मे॥[122]

इन पक्तियो मे सहज बोधगम्यता के साथ सरसता एव सरलता पूर्ण रूपेण विद्यमान है। इसलिए इसम प्रसाद गुण है।

अत प्रियप्रवास के अध्ययन स निसदेह कवि के काव्य गुण सम्बन्धी सफल प्रयोग का परिचय प्राप्त हो जाता है। गुणो ने निश्चित ही काव्य श्री की वृद्धि की है जिससे काव्य-लोक हृदयाह्लादकारी हो गया है।

अलकार योजना

अलकरोतीति अलकार ' अर्थात् जो भूषित कर, वही अलकार है। आचाय वामन ने अलकार को शब्द और अथ मे सौ दय उत्पन्न करने वाला माना है। अधिकाश विद्वानो ने गुणों को का य का स्थायी धम और अल कार को उनका अस्थाई धम माना है। अलकार साधन है साध्य नही। इसलिए दण्डी की यह परिभाषा उचित है– काव्य शोभाकारान धमानलका रान प्रचक्षते '[123] (काव्य की शोभा बढ़ाने वाले धम अलकार कहे जाते हैं)। जयदेव ने तो यहाँ तक कहा है कि जो का य को अलकार रहित मानता है वह विज्ञान अग्नि को उष्णताहीन क्यो नही मानता। यथा–

अगीकरोति य का य शब्दाथवनलकृती।
असौ न म यते कस्माद अनुष्णवनलकृती ॥[124]

जयदेव ने अ यत्र उल्लेख किया है– हारादिव्लकार सन्निवशा मनोहर '[125] (अलकार हार आदि आभूषणो की भाँति काव्य रूपी शरीर को सजाने वाला है) भामह ने अलकारो को काव्य का प्राण माना।[126] आचाय केशव ने इसी बात का इस प्रकार लिखा है–

जदपि सुजाति सुलच्छिनी, सुबरन सुरस सुवत।
भूपन बिनु न बिराजती कविता बनिता मित्र ॥[127]

इस प्रकार कविता मे सौ दय हेतु अलकारो का होना नितात आव श्यक है और इसी कारण प्रत्येक कवि अपने का य मे येनकन प्रकारेण अल कारो का प्रयोग अत्याधिक रूप म अवश्य करता है। हरिऔध जी न भी प्रियप्रवास के भाव निरूपण म अलकारो का स्वाभाविक प्रयोग किया है। सामा यतया अलकार प्रयोग की विभिन्न पद्धतियाँ हैं। यहाँ तक कि कुछ विद्वान वक्र प्रणाली को ही अलकार मानते हैं। प्रियप्रवास म भी अलकारो के विभिन्न रूप विद्यमान हैं जिनका प्रयोग कवि न चमत्कार एव सौ दय सृष्टि के लिए किया है। हरिऔध जी के अलकार विधान की सबस बडी विशेषता यह है कि उसम परम्परागत उपमानो का प्राचुय होन पर भी उनके प्रयोग म नवीनता है जिसके कारण कही भी रस या भाव निरूपण म कोई व्यवधान परिलक्षित नहीं होता।

अलकारो को मुख्यतया–शब्दालकार, अर्थालकार तथा उभयालकार म विभक्त किया गया है। शब्द और अर्थ की दृष्टि दो प्रकार के ही अलकार होते हैं।

(अ) अनुप्रास–शब्दालकार म अनुप्रास मुख्य है। इसम वण मैत्री की प्रवृत्त करके एक सी झनकार करने वाले शब्द एव क्रम म प्रयुक्त किये जाते हैं। प्रियप्रवास में इसके प्रमुख रूप निम्नलिखित हैं–

(य) छेकानुप्रास–अनेक व्यजना की, दो वार स्वरूप एव क्रम स आवत्ति म छेकानुप्रास होता है। यथा–

मुकुट मस्तक का शिखि पक्ष का।
मधुरिमा मय था बहु मजु था।
असित रत्न समान सुरजिता।
सतत थी जिसकी वर चद्रिका ॥[128]

इनमे प्रथम, द्वितीय पक्ति म म' एव ततीय म 'स' वण क क्रम से दो बार आने क कारण छेकानुप्रास का सुदर प्रयोग है।

(र) वत्यानुप्रास–जिन छन्दों म रस भाव या गुण के व्यजक वण समूह की दो से अधिक वार आवत्ति होती है, वहाँ वृत्यानुप्रास होता है। यथा–

प्रसादिनी पुष्प सुग ध वद्धिनी।
विकासिनी बेलि लता विनोदिनी।
अलौकिकी थी मलयानिल त्रिया।
विमोहिनी पादप पक्ति मादिनी ॥[129]

यहाँ द्वितीय पक्ति मे व वण की तीन वार आवत्ति क कारण वत्यानुप्रास है।

(ल) श्रुत्यानुप्रास–वाग्यत्रो क एक ही स्थान स उच्चरित श्रुति गोचर, सादृश्यमय व्यजन ध्वनियो की आवत्ति स उत्पन्न ध्वनि सौदय को श्रुत्यानुप्रास कहते है। यथा–

क्लित नूपुर की कलवा दिता।
जगत को यह थी जतला रही।
कब भला न अजीव सजीवता।
परस क पद पक्ज पा सके ॥[130]

(व) अत्यानुप्रास–तुकात छ दो मे ऐस अलकार होते हैं। यद्यपि प्रियप्रवास अतुकात म लिखा गया है फिर भी कही कहीं इसके रूप दखे जाते हैं। यथा–

अति जरा विजिता बहु चिन्तिता।
विकलता ग्रसिता सुख वचिता।[131]

(आ) यमक–यमक का अथ है युग्म। जहाँ एक समान किन्तु अर्थों में परस्पर भिन्न वर्णों का पुनकथन या आवृत्ति होती है, यमक अलक होता है। यथा–

कलुष नाशिनि दुष्ट निकदिनी।
जगत की जननी भव वल्लभे।
जननि को जिय की सकला व्यथा।
जननि ही जिय है कुछ जानता।[132]

इसम जननि शब्द की तीन वार आवत्ति हुई है जिसमे दो का अथ दुर्गा माँ से है और एक का अथ माता स है, इसलिए इसम *यमक अलकार* है। अयत्र भी यमक का सफल प्रयोग है।

(इ) श्लेष–एक शब्द के साथ जब अनक अथ सम्बधित हो जाय है तो वहाँ श्लेष अलकार की स्थिति मानी जाती है। यथा–

विपुल धन अनेको रत्न हो साथ लाय।
प्रियतम ! बतला दो लाल मरा कहाँ है।
अगणित अनचाहे रत्न ले क्या करूगी।
मम परम अनूठा लाल ही नाथ ला दो॥[133]

यहाँ श्लिष्ट लाल शब्द के दो अथ है–एक पुत्र और दूसरा रत्न होन स श्लेष अलकार है।

(ई) उपमा–उपमा सादशमूलक अलकारो मे श्रेष्ठ है। जहाँ किसी प्रकार की सधमता के कारण एक वस्तु दूसरे वस्तु क समान कही जाय, उपमा अलकार होती है। इसके चार अग–उपमय उपमान साधारण धम और वाचक होते हैं। इनको निम्नलिखित भागो मे विभक्त किया जाता है–

(य) पूर्णोपमा-ऐसे छन्दो मे उपमा के चारो अग प्रकट रूप म विभक्त रहते हैं। *यथा–*

साचे ढाला सकल वपु है दिव्य सौदयशाली।
सत्पुष्पो सा सुरभि उसकी प्राण सपोषिका है।
दोनो कधे वृषभ वर से हैं बडे ही सजील।
लम्बी बाहे कलम कर सी शक्ति की पटिका है।[134]

इस छन्द मे उपमालकार के चारो अग विद्यमान है इसलिए इसम पूर्णोपमालकार है।

(र) लुप्तोपमा-जहाँ उपमा के चारो अगो मे से किसी एक का लोप होता है। वहाँ लुप्तोपमा अलकार होता है। इसके वाचक लुप्ता, धमलुप्ता उपमानलुप्ता, उपमेयलुप्ता, धर्मोपमान लुप्ता वाचकोपमान लुप्ता वाचकोपमेयलुप्ता एव धम वाचकोपमानलुप्ता आठ भेद होते है। यथा–

विपणि हो वर वस्तु विभूषिता।
मणिमयी अलका सम थी लसी।

वर वितान विमडित ग्राम को।
सुछवि थी अमरावति रजिनी ।।[135]

प्रथम द्वितीय पक्ति मे धमलुप्ता एव तृतीय चतुथ पक्ति मे वाचक लुप्ता उपमा है।

(ल) मालोपमा–एक उपमेय के बहुत से उपमान कहे जायें, तो मालोपमा अलकार होता है। यथा–

रूपाद्यान प्रफुल्ल प्राय कलिका राकेन्दु बिम्बना।
तन्वगी कलहासिनी सुरसिका क्रीडा कला पुत्तली।
शोभा वारिधि की अमूल्य मणि सी लावण्य लीलामयी।
श्रीराधा मदुभाषिणी मगदगी माधुय की मूर्ति थी।[136]

यहाँ राधा–उपमेय के लिए अनेक उपमानों का प्रयोग किया गया है।

(व) रशनोपमा–जहाँ पहले का कहा हुआ उपमेय आगे, दूसरे उपमेय का उपमान बन जाता है वहाँ रशनोपमालकार होता है। यथा–

बहु प्रलुब्ध बना पशु वृन्द को।
विपिन के तण खादक जन्तु को।
तण समा कर नीलम नीलिमा।
मसण थी तण राजि विराजती ।।[137]

प्रियप्रवास मे उपमा अलकारो का भण्डार है। उपमा का कोई भी ऐसा रूप नहीं जो इसमे प्राप्य न हो।

(उ) रूपक–जहाँ उपमेय को उपमान रूप कहा जाय, वहाँ रूपक अलकार होता है। प्रियप्रवास' म परम्परित, सागरूपक और निरग रूपक तीन रूपों के उदाहरण प्राप्त होते हैं–

(य) परम्परिक रूपक

जननि मानस पुण्यपयोधि म।
लहर एक उठी सुख मूल थी।
बहु सुवासर कथा ब्रज के लिए।
जब चलते घुटना ब्रजचन्द थ।[138]

(र) सांगरूपक

ऊधो मेरा हृदयतल था एक उद्यान न्यारा।
शोभा देती अमित उर म कल्पना क्यारियाँ थीं।
न्यारे न्यारे कुसुम कितने भाव के थे अनेकों।
उत्साहों के विपुल विटपी थे महा मुग्धकारी ।।[139]

(ल) निरंग रूपक

विशद चित्रहठी ब्रजभूमि को।
रहित आज हुई वर चित्र से।
छवि यहाँ पर अंकित जो हुई।
अहह लोप हुई सब काल का।[140]

(ऊ) उत्प्रेक्षा–जहाँ प्रस्तुत (उपमेय) की अप्रस्तुत (उपमान) के रूप में सम्भावना की जाती है, वहाँ उत्प्रेक्षालंकार होता है। प्रियप्रवास मे वस्तूत्प्रेक्षा अलंकारों की भरमार है। यथा–

(य) वस्तूत्प्रेक्षा

ताराओं से खचित नभ को देखती जो कभी हूँ।
या मेघों में मुदित बक की पंक्तियाँ देखती हूँ।
तो जाती हूँ उमग बधता ध्यान ऐसा मुझे है।
मानो मुक्ता लसित उर से श्याम का दृष्टि आता।।[141]

(र) हेतूत्प्रेक्षा

विकलता लख के ब्रज देवि की।
रजनि भी करती अनुताप थी।
निपट नीरव हो मिस ओस के।
नयन से गिरता बहु वारि था।।[142]

(ल) फलोत्प्रेक्षा

धीरे धीरे पवन ढिग जा फूल वाले द्रुमों के।
शाखाओं से कुसुम चय को थी धरा पे गिराती।
मानो यों थी हरण करती फुल्लता पादपों की।
जो यों प्यारी न ब्रज जन को आज प्यारी व्यथा से।।[143]

(व) सन्देह अलंकार–जहाँ सत्यासत्य का निर्णय न हो पाने के कारण उपमेय का उपमान रूप में वर्णन होता है सदेह अलंकार होता है। यथा–

ऊंचा शीश सहर्ष करके था देखता व्योम को।
या होता अति ही सगर्व वह था सर्वोच्चता दर्प से।
या वार्ता यह प्रसिद्ध करता सामोद संसार से।
मैं हूं सुंदर मानदण्ड ब्रज की शोभामयी भूमिका।।[144]

(ए) अतिशयोक्ति–जहाँ लोक सीमा का उल्लंघन करते हुए प्रस्तुत की प्रशंसा की जाय। यथा–

असह्य होती तरु वृन्द को सदा।
विपाक्त सांसें दल दग्ध कारिणी।

विचूर्ण होती बहुश शिला रही।
कठोर व घन सप - गात्र म ।।[145]

विपत्ति सांसों मे पत्तो का जलना और सप के शरीर के जकडन स शिलाओं के खण्ड खण्ड म अतिशयोक्ति अलकार है। यथा–

सलिल प्लावन स जिस भूमि का।
सदय होकर रक्षण था किया।
अहह आज वही ब्रज की धरा।
नयन नीर प्रवाह निमग्न है ।।[146]

(ऐ) भ्रान्तिमान–जहाँ प्रस्तुत को किसी कारणवश अप्रस्तुत मान लिया जाय। ऐसा निश्चित भ्रम होने पर भ्रान्तिमान अलकार होता है–

"यदि धा पपिहा की शारिका या शुको की।
श्रुति सुखकर बोली प्यार से बोलते थ।
कलरव करत तो भूरि जातीय पक्षी।
द्विग तरु पर आके मत्त हो बठते थ।।"[147]

यहाँ क्रीडा क समय श्रीकृष्ण द्वारा विभिन्न प्रकार की पक्षियों की बोली मे अन्य पक्षियों का बोलने का भ्रम होन के कारण भ्रान्तिमान है।

(ओ) अपह्नुति–जब किसी सच्ची वस्तु या बात को छिपाकर उसके स्थान पर किसी झूठी वस्तु या बात की स्थापना की जाती है, अपह्नुति अलकार होता है। इसका उदाहरण दृष्टव्य है–

रह रह किरणें जो फूटती हैं दिखाती।
वह मिष इनके क्या बोध देते हम हैं।
कर वह अथवा या शान्ति का हैं बढाते।
विपुल व्यथित जीवों की व्यथा मोचने को ।।[148]

यहाँ प्रकाश क स्थान पर किरणें शान्ति या दुखितो की व्यथा मिटान का काय करने के कारण यहाँ अपह्नुति है।

(औ) उल्लेख–जहाँ एक व्यक्ति का अनेक प्रकार से वणन हो, उल्लेख अलकार होता है। यथा–

सच्चा प्यारा सकल ब्रज का वश है उजाला।
दीनो का है परम धन औ वृद्ध का नत्र वाला।
बालाओं का प्रिय स्वजन औ बन्धु है बालकों का।
ले जाते हैं सुरतरु कहाँ आप ऐसा हमारा ।।[149]

यहाँ कृष्ण को प्यारा, ब्रजवश दुलारा, दीनों का परम धन, वृद्ध को

नेत्र बालाओं का प्रिय बालका का बन्धु एव सुरतरु कहने के कारण उल्लेख अलकार है।

(अ) स्मरण–जहाँ पूर्वानुभूत (उपमेय) के समान किसी वस्तु (उपमान) को देखने से उसका (उपमय) स्मरण हो आता है, वहाँ स्मरण अलकार होता है। यथा–

मैं पाती हूँ अलक सुषमा भृग की मालिका म।
है आँखों को सुछवि मिलती खजनो औ मृगों म।
दोनों बाहें कलभ कर को देख है याद आती।
पाथी शोभा रुचिर शुक ठोर में नासिका की।।[150]

यहाँ भृग मालिका से अलकों, खजनों मृगों से नेत्रों हाथी की सूड से दोनों भुजाओं एव शुक ठोर से नासिका का स्मरण होने से स्मरण अलकार है।

(अ) व्यतिरेक–जहाँ उपमेय के उत्कर्ष अथवा उपमान के अपकर्ष द्वारा उपमेय की विशिष्टताओं का उल्लेख हो, वहाँ व्यतिरेक होता है। यथा–

मृदुल कुसुम सा है औ तूने तल सा है।
नव किसलय सा है स्नेह के उत्स सा है।
हृदय सदन ऊधो श्याम का है बडा ही।
अहह हृदय माँ सा स्निग्ध तो भी नहीं है।।[150]

यहाँ माँ के हृदय के सामने अनेक प्रकार से कोमल कृष्ण का हृदय न्यून है। अत व्यतिरेक अलकार है।

(क) काव्यलिंग–जहाँ किसी समर्थनीय का दृढता से समर्थन किया जाय। यथा–

रसमयी लख वस्तु असत्य का।
सरस्वती लख भूतल-व्यापिनी।
समर्थ है पडता बरसात म।
उदक का रस नाम यथार्थ है।।[152]

यहाँ पृथ्वी की सरसता का समर्थन होने के कारण काव्यलिंग अलकार है।

(ख) दीपक–कविता म जब उपमेय उपमान का एक ही धर्म हो जाय, तो दीपक अलकार होता है। यथा–

नव जल धर धरा समुत्पन्न होते।
कतिपय तरु का है जीवनाधार होती।

हितकर दुख दग्धो का उसी भाँति होगा।
नव जलद शरीरी श्याम का सद्म आना ।।[153]

यहाँ जलधर एव श्याम का जीवनाधार होने के समान धम से दीपक अलकार है।

(ग) प्रतीप–उपमान को उपमेय बनाकर यदि काव्य में विपरीत अवस्था मे प्रस्तुत किया जाय तो प्रतीप अलकार होता है। यथा–

है दातों की झलक मुझको दीखती दाडिमा मे।
बिम्बों म वर अधर सी राजता लालिमा है।
मैं केलो म जघन युग की मजुता दीखती हू।
गुल्फो की सी ललित सुषमा है गुलों म दिखाती ।।[154]

यहाँ दाडिम, बिम्ब केला, गुल का क्रमश कृष्ण के अग दाँत, ओष्ठ, जघा, एव एडी के ऊपर की गाँठ के समान प्रस्तुत किया है।

(घ) परिकर–जहाँ किसी विशेषण का प्रयोग किसी क्रिया के अथ की पुष्टि के लिए किया जाय, परिकर अलकार होता है। यथा–

स्वसुत रक्षण और पर पुत्र के।
दलन की यह निमम प्राथना।
बहुत सम्भव है यदि यों कहे।
सुन नही सकती जगदम्बिका ।।[155]

यहाँ निमम विश्लेषण स दलन क्रिया के अथ की पुष्टि होने से परिकर अलकार है।

(ङ) विभावना–जहाँ बिना कारण के काय की कल्पना की जाय। यथा–

श्यामा बातें श्रवण करके बालिका एक रोई।
रोते-रोते अरुण उसके हो गये नेत्र दोनो।
ज्यों ज्यों लज्जा विवश वह थी रोकती वारि धारा।
त्यों त्यों आँसू अधिकतर थ लोचनो मध्य आते ।।

यहाँ बालिका का रोना, बिना कारण के काय होने से विभावना अलकार है।

(च) विषम–जहाँ का य मे परस्पर अनुरूपता रहित पदार्थों का सम्बन्ध सघटित किया जाता है, वहाँ विषम अलकार होता है। यथा–

काले कुत्सित कीट का कुसुम में कोई नही काम था।
काटे से कमनीय कुज कृति म है न कोई कमी।

पैरो मे कब ईख की विपुलता है ग्रथियों की भली ।
हा ! दुर्दैव प्रगल्भते ! अपटुता तूने कहाँ की नही ।।[156]

यहाँ कुत्सित कीट, कुसुम, काँटा कमनीय कुज एव पर ईख की अनुरूपता होने पर भी सम्ब ध सघटता के कारण विषम अलकार है ।

(छ) दष्टान्त–जहाँ उपमेय और उपमान दोनों धर्मों का बिम्ब प्रतिबिम्ब रूप मे भाव प्रकट हो । यथा–

कुसुम सा सुप्रफुल्लित बालिका ।
हृदय भी न रहा सुप्रफुल्ल हो।
वह मलीन सर्वल्मण हो गया ।
प्रिय मुकुन्द प्रवास प्रसग से ।[157]

यहाँ सुप्रफुल्लित बालिका (उपमेय) और कुसुम (उपमान) दोनों का धम बिम्ब प्रतिबिम्ब रूप से प्रफुल्लता के द्वारा प्रकट होता है ।

(ज) मानवीकरण–जहाँ अचेतन पदार्थों या वस्तुओ द्वारा मानव जैसे धम प्रकट किये जाय, वहाँ मानवीकरण अलकार होता है । यथा–

आविभू ता गगन–तल मे हो रही है निराशा ।
आशाओ म प्रकट दुख की मूर्तियाँ हो रही हैं ।
ऐसा जी म ब्रज दुख दशा देख के था समाता ।
भू छिद्रा से विपुल करुणा धार है फटती सी ।।[158]

यहाँ भू छिद्रों से मानवोचित धम करुणा का प्रवाह प्रस्तुत कर मानवीकरण की सघटना की गई है ।

वास्तव म प्रियप्रवास अलकारो के प्रयोग के क्षेत्र मे समृद्ध है । उपयु क्त अलकारो के अतिरिक्त समासोक्ति यथासख्या, का॰यलिग उ मीलित, परिकराकुर विचित्र आदि अनेक अलकारो का प्रयोग किया गया है । हरिऔध जी ने विभिन्न अलकारो का प्रयोग अवश्य किया है पर तु भाव एव वस्तु योजना मे किसी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न नही होने पाया है । अलकारो के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है । कवि द्वारा प्रयुक्त सांगरूपक कलाकौशल की दष्टि से सफल है और उसकी प्रवाहमयता मे किसी प्रकार की बाधा नही पडी है । इसी प्रकार श्लेष अलकार के दष्टान्त में लाल श द स मार्मिकता और कौशल दोनो का सु दर सम वय है । ग्रन्थ म ऐसे स्थलो का बिल्कुल अभाव है जहाँ यह आभास होता हो कि अलकार सप्रयास प्रयुक्त किये गये हैं । इस प्रकार प्रियप्रवास म प्रयुक्त अलकारों और ग्रन्थ की स्वाभाविकता को देखकर निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है

कि अलकारों के प्रयोग की दृष्टि से प्रियप्रवास आधुनिक काल की सफल कृति है।

छद योजना

आधुनिक हिन्दी काव्य की नवीन चेतना के कवियो को प्रतिभा को नवीन भाव और विषय प्रदान किया। नवीन छद योजना इसी का परिणाम है। पराधीन भारत की स्वाधीन भावना की जागति का स्वर लेकर खड़ी बोली कविता ने ज म लिया। हरिऔध प्रभृति कवि परम्परागत काव्य रूपा एव शैलियो को अनुपयोगी जानकर जन जागरण के लिए नवीन छ दो के माध्यम से युग-निर्माण मे सन्नद्ध हुए। उन्होने कृष्ण के प्रह्लाद रूप को भी अधिक उपयोगी माना, इसलिए उन्हें मानवीय धरातल पर प्रतिष्ठित करके हरिऔध जी ने अपनी भावना को नवीन वर्णिक वृत्ता द्वारा अभिव्यक्त की।

छन्द सृष्टि का प्रणव (ईश्वर) ही आदि रूप है।[159] पुरुष-सूक्त में छन्द से ही ऋक यज और साम की उत्पत्ति बताई गयी है।[160] छन्द की उत्पत्ति सिद्धान्त रूप मे क्रौंच-कथा से व्यक्त होती है। बहेलिये द्वारा क्रौंच वध से ऋषि के अन्त करण से नि सत करुण भावना निम्न श्लोक के रूप म प्रस्फुटित हुई—

मा निषाद प्रतिष्ठा त्वमगम शाश्वती समा।
यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधी काममोहितम॥[161]

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर का मत है कि छ द कालान्तर से ही अनेक कवि कठो द्वारा शाश्वत कथा का प्रकाशित करने के लिए व्यक्त हो रहे हैं। रूप सृष्टि का प्रवाह ही विश्व है। उसी रूप स छन्द जगता है। आधुनिक परिणाम तत्व से यह बात अधिक स्पष्ट हो जाती है। विशेष सख्या की मात्राएँ और विशेष वेग की गति-इन दो से छन्द चलता है।[162] छ दो की महत्ता को दृष्टि म रखते हुए नाटयशास्त्र म न कोई शब्द छन्द ही है और न कोई शब्द छन्दहीन स्वीकार किया गया है। छ दशास्त्र पर प्राचीन भारतीय और पाश्चात्य अनेक विद्वानों न अपने विचार व्यक्त किये हैं तथा सभी ने छन्द का महत्ता को निर्विवाद स्वीकार किया है। डा० पुत्तूलाल शुक्ल का मत है— चाहे वदिक धारणा को स्वीकार किया जाय, चाहे आधुनिक भौतिक व्याख्या को। निर्झरों का निनाद पत्तो का मर मर सगीत, पवन का सन सन, बाँसो का चुरमुर, उत्सो का कल कल बादलो की रिमझिम, व्रज का गजन पक्षियो का कल कल गायन, सिंधुओ का हिल्लोर

और वक्षो का सवेग कम्पन मनुष्य मे लय ससार बनाने में सहायक अवश्य हुआ । —उसने वाक् विकास और कलाप्रियता के साथ अनुशासन करके साहित्यिक छन्द का रूप दिया है ।[163]

वतमान बौद्धिक और वैज्ञानिक वृत्ति के कारण हिन्दी साहित्य मे नवीनता दृष्टिगत हुई और अत्यानुप्रास छन्दा का मात्र वाह्य आवरण ही स्वीकार किया गया । सस्कृत म वर्णिक अतुकात के प्रयोग के बाद नवीन चन्द्रसेन ने प्लासी का युद्ध', माइकेल मधुसूदनदत्त ने मेघनाद वध', प० अम्बिकादत्त व्यास ने 'कस वध', श्री लक्ष्मीधर वाजपेयी ने 'मेघदूत का अनुवाद वर्णिक छन्द में किया । श्री वाजपेयी जी का विचार है– जब तक खडी बोली की कविता मे सस्कृत के ललित वत्तों की योजना न होगी, तब तक भारत के अ य प्राता के विद्वान उससे सच्चा आनन्द कैसे उठा सकते हैं । यदि राष्ट्रभाषा हिन्दी के काव्य ग्रन्थों का स्वाद अ य प्रा त वाला को चखाना है तो उन्हें सस्कृत मदाक्रा ता शिखरिणी मालिनी वसन्ततिलका, शार्दूलविक्रीडित आदि ललित वत्तों से अलकृत करना चाहिए । भारत के भिन्न भिन्न प्रान्त के निवासी विद्वान सस्कृत भाषा के वृत्ता से अधिक परिचित हैं । भाषा के गौरव को बढ़ाने के लिए का य म अनक प्रकार के ललित वत्तो और नूतन छन्दा का समावेश होना चाहिये ।[164]

प० बालकृष्ण हिन्दी मे वर्णिक वत्तों के नितान्त विरोधी हैं । ऐसा लगता है कि इस विचारधारा के विद्वान प्राचीन रूढ़िया को ही महत्व देते हैं किन्तु प्रगतिशाल युग में ऐसी धारणा उपयुक्त नही जान पडती । नवीन मा यताओ को लेकर जिन कवियो ने नवीन छन्दो मे अपनी रचनाएं प्रस्तुत की हैं हरिऔध जी उनम अग्रणी हैं । उ हाने अत्यानुप्रास को हटाकर सस्कृत वत्तो के आधार पर रचना करने का प्रयास किया और वे इस क्षेत्र में सफल भी रहे । प्रियप्रवास की रचना को लेकर नि सदेह बडी आलोचना हुई किन्तु दढ और स्वाभिमानी व्यक्तित्व ने भिन्न तुकान्त वण वृत्ता मे कवि ने महाकाव्य को सजा सँवार कर तयार कर दिया । कवि न मन्दाक्रा ता, द्रुतविलम्बित, वशस्थ मालिनी, शिखरिणी, वस ततिलका और शार्दूलविक्रीडित छन्दा क माध्यम से 1569 पदो के द्वारा इस ग्रन्थ की रचना की है । छन्दो का चुनाव भाव और विषय के अनुसार किया है । श्रृगार एव वात्सल्य–जसे मधुर रसों को कवि ने मन्दाक्रा ता[165] एव मालिनी[166] तथा पौरुष भावों को व्यक्त करने वाले वीर, रौद्र एव भयानक रसो के वणन मे वशस्थ[167] एव द्रुतविलम्बित[168] छन्दा का प्रयोग किया है । कृष्ण का उद्धव के माध्यम से राधा को दिये गये स देश[169] मे पूण भावानुरूपता

विद्यमान है चूकि वर्णिक छ द सस्कृत के ग्रहण किये गये है। इसलिए तत्सम शब्दो के अभाव मे इन छदो की प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिए सस्कृत शब्दावली का प्रचुरता से प्रयाग किया है। यद्यपि नवीन प्रयोग और युगानुरूपता के आधार पर प्रियप्रवास के वस्तु की आलोचना का औचित्य नही है फिर भी ब्रह्मचारी जी का कथन है– हि दी भाषा विश्लेषणात्मक प्रवत्ति की है और सस्कृत सश्लेषणात्मक प्रवत्ति की सश्लेषणात्मक भाषा म बिना तक के सगीतमयता श्रुति मधुरता आदि भाषा के श्रेष्ठ गुण आ सकते हैं। पर विश्लेषणात्मक भाषा म बिना तुक के यह सम्भव नहीं। अत हि दी म अतुका त कविता श्रमस्कर नहा।[170] परम्परावादी व्यक्ति रूढिया और अनुपयागी मा यताओ क समयक विचार प्रस्तुत कर देश को विकास के पथ स भ्रमित करने का उपक्रम कर लेते हैं। प्रियप्रवास म छन्द भाव और भाषा के अनुकूल है। इसम प्रयुक्त छ दो का विवेचन अभीष्ट है।

(अ) द्रुतविलम्बित–इसके प्रत्येक चरण म कुल 12 वण नगण भगण भगण रगण हैं। इसम द्रुतता और विराम का अदभुत सम वय होता है। इस छ द के प्रयोग म भाषा मे प्रवाह और स्वाभाविकता दष्टि गत होती है–

I I I S I S I I S I I S
विविध भाव निमग्न बनी हुई।
मुदित थी बहु दशक मण्डली।
अति मनोहर थी बनती कभी।
बज किसी कटि की कलकिंकिणी।।[171]

(आ) मालिनी–प द्रह अक्षरा वाला वत्त मालिनी होता है। इसके प्रत्यक चरण मे नगण नगण मगण, यगण, यगण का क्रम होता है तथा 8 और 7 पर विराम होता है। इस छन्द मे वेग अबाधित होकर आगे बढता रहता है अ त मे ही रुकावट आती है। वात्सल्य वियोग का मार्मिक चित्र प्रस्तुत है–

I I I I I I SSS I SSISS
प्रिय पति वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है।
दुख जलधि निमग्ना का सहारा कहाँ है।
अब तक जिसको मैं देख के जी सकी हू।
वह हृदय हमारा नेत्र तारा कहाँ है ?[172]

(इ) मन्दाक्रान्ता–मन्दाक्रान्ता छद क्रमश मगण भगण, नगण, तगण तगण एव दो गुरु मिलकर कुल सत्रह वर्णों से निर्मित होता है।

इसमें 4, 6 7 पर विराम होता है। प्रियप्रवास मे इसके माध्यम से वियोग वणन का हृदयग्राही चित्र प्रस्तुत किया गया है। चित्र को मन्द वेग से आक्रान्त करने वाला छन्द वियोग की व्यथा से व्यथित दीघ निश्वास की तरह स्वत नि सत सा प्रतीत होता है–

SS SS IIII SS I SS I SS I
क्या देखूँगी न अब कढता इन्दु को आलया मे।
क्या फूलेगी न अब गह म पक्ष सौन्दर्यशाली।
मेरे खोटे दिवस अब क्या मुग्धकारी न होंगे।
क्या प्यारी का अब न मुखडा मन्दिरा म दिखेगा ।।[173]

ऊपर उद्धत तीन छन्दो के अतिरिक्त अन्य छन्दो के प्रस्तुत करने म कवि इतना सफल नहीं है। इनके वणन मे भाषा अपनी स्वाभाविकता खो बैठी है। प्रियप्रवास के पूर्वार्द्ध म द्रुतविलम्बित, मालिनी और मन्दाक्रान्ता का प्रयोग है, इसलिए पूर्वार्द्ध छन्दो की दष्टि स अधिक सफल है। उत्तरार्द्ध में भी छन्दो का प्रयोग यूनाधिक सफल है।

(ई) शार्दू ल विक्रीडित–इसमे मगण सगण, जगण सगण, दो तगण और एक गुरु के क्रम से कुल 19 वर्ण होते हैं तथा 12, 7 पर विराम होता है–

S SS I IS IS S I I I S SS I SS I S
देखो यद्यपि है अपार ब्रज के प्रस्थान की कामना
होता मैं तब भी निरक्त नित हूँ व्यापी द्विधा।
ऊधो दग्ध वियोग से ब्रज धरा है हो रही निरवश।
जाओ सिंचित करो उस सदय हो आमूल ज्ञानाम्बु से ।।[174]
द्वितीय पक्ति क उत्तराद्ध म छ द भग है।

(उ) वशस्थ–बारह अक्षरो वाले इस वृत्त म जगण तगण जगण और रगण का वर्ण क्रम होता है। छ द का कलेवर छोटा होता है। इस लिए सस्कृत भाषा क शब्दा मे सौन्दय भले ही देखा जा सकता है, परन्तु स्वा भाविकता से दूर है। दीघ समासयुक्त भाषा के प्रयाग से इसम गम्भीरता नही आ पायी है–

IS I SS IIS IS IS
अपार पक्षी पशु त्रस्त हा महा।
स–व्यग्रता थे सब ओर दौडते।
नितात हो भीत सरीसृपादि भी।
वने महाव्याकुल भाग थे रहे ।।[175]

(ऊ) वसन्ततिलका–तगण, भगण, दो जगण तथा दो गुरु के क्रम से चौदह वर्णों का प्रत्येक चरण होता है–

SS ISII IS IISI S S
होता सतोगुण प्रसार दिगन्त मे है।
है विश्व मध्य सितता अभिवद्धि पाती।
सारे सनेत्र जन को यह थे वताते।
कान्तार काश विकसे सित पुष्प द्वारा ।।[176]

(ए) शिखरिणी–इसमे सत्रह वर्ण यगण मगण, नगण, सगण, भगण, एक लघु एवं एक गुरु के क्रम से होते हैं। प्रियप्रवास मे मात्र एक बार इसका प्रयोग हुआ है।[177] ऐसा प्रतीत होता है कि इसके स्वाभाविक प्रयोग में कवि को कठिनाई का अनुभव करना पड़ा होगा। संस्कृत में शिखरिणी मे गेयता अधिक है, इसलिए लोकप्रिय है। शिखरिणी छन्द का प्रयोग यदि प्रियप्रवास मे प्रचुर मात्रा म होता तो निश्चित रूप से यह ग्रन्थ अपेक्षाकृत अधिक लोकप्रिय होता।

प्रियप्रवास में प्रयुक्त वर्ण वृत्तो की भावभूमि और अर्थ भूमि पाठक को तन्मय और मन्त्र मुग्ध करने वाली है। प्रियप्रवास की रचना के समय कवि ने संस्कृत के वर्णवृत्तो के प्रयोग का संकल्प किया था, इसलिए उसे सफलता भी मिली है। हिन्दी की परम्परागत शैली के प्रभाव से कवि कहीं कहीं प्रभावित है। अतुकान्त छन्दो के प्रयोग की घोषणा के बाद भी कुछ छन्द भाव भाषा प्रवाह मे तुकान्त हो गये हैं। मालिनी छन्द का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

II I I I SSS I SSI SS
विपुल ललित लीला धाम आमोद प्याले।
सकल कलित क्रीडा कौशलों मे निराले।
अनुपम वनमाला को गले बीच डाले।
कब उमग मिलेंगे लोक लावण्य वाले ।।[178]

प्रस्तुत छन्द के चारों चरण तुकान्त हैं। प्रियप्रवास में कुछ छन्द ऐसे हैं जिनके तीन चरण तुकान्त हैं।[179] ऐसे छन्दों की भी इसमें रचना हुई है जिसके दो ही चरणों म तुक पाया जाता है। कहीं कहीं दूसरे और तीसरे चरण म[180] कहीं-कहीं तीसरे और चौथे चरण में[181] कहीं कहीं प्रथम और चौथे चरण में[182] और कहीं कहीं दूसरे और चौथे चरण म[183] तुकान्त है।

छन्दों के प्रयोग म कवि ने यदि प्रिय छन्द द्रुतविलम्बित, मन्दाक्रान्ता और मालिनी मे ही यदि पूरे ग्रन्थ की रचना की होती तो इसकी

प्रवाहमयता और स्वाभाविकता मे कही बाधा न पडती और यह काव्य पाठको के लिए रचनकारी और सुखद होता। यही नहीं भावी रचनाकारो के लिए भी यह आदर्श होता। प्रियप्रवास मे छन्दो के प्रति आग्रह के अनुसार दूसरे कवि छन्द प्रयोग की व्यावहारिक कठिनाई के कारण इसका अनुगमन न कर सके।

प्रतीक योजना

जब कोई वस्तु अपने रूप, गुण, कार्य अथवा विशेषताओ के प्रत्यक्षी करण एव सदृश्यता के कारण किसी अप्रत्यक्ष वस्तु भाव क्रियाकलाप विचार, संस्कृति, जाति एव देश आदि का प्रतिनिधित्व करता है तो वह प्रतीक कहलाती है। उदाहरणार्थ–तिरगा झण्डा भारतीय राष्ट्र का कमल भारतीय संस्कृति का एव वक्ष विद्या का प्रतीक है। प्रतीक पद्धति किसी भी देश *और काल के लिए नवीन नहीं है अपितु यह सभी कालो में और सभी* देशो म सभ्यता के साथ विकसित हुई है। इतना अवश्य है कि यूरोपीय कला और साहित्य मे प्रतीकवाद 19वी शताब्दी के अतिम चरण म एक विशिष्ट प्रवत्ति के रूप म प्रकट हुई, क्योकि इस अवधि म यूरोप की वज्ञानिक उन्नति के परिणामस्वरूप यथार्थवादी दृष्टिकोण का विकास हुआ और इसका प्रभाव कला और साहित्य के क्षेत्र मे अधिक स्पष्ट है। यथार्थवादी प्रवृत्तियो की आदशवादी प्रतिक्रिया के रूप म कला और साहित्य के क्षेत्र म सन 1870 और सन 1885 ई० के बीच में प्रतीकवादी आदोलन का शुभारम्भ हुआ। परिणामस्वरूप कवियो ने बाह्य जगत और जीवन का तथ्यगत चित्रण छोडकर प्रतीकात्मक सन्दर्भों तथा अलकरणो के द्वारा अपने कल्पना के आदर्शों की अभिव्यक्ति की।

आचाय रामचद्र शुक्ल ने प्रतीक विधान को अलकार प्रणाली में स्थान दिया है।[184] यच० सी० वार्टर ने लिखा है–'मूर्तियाँ देवालय तथा धार्मिक स्थान उनसे सम्बधित वस्तु तथा शिल्प कलाएँ धर्म ग्रथ मत्र तत्र यत्र योग पूजा पाठ आदि उपासना विधियाँ अपनी सांकेतिकता के कारण ही प्रतीक हैं।[185] काव्य में सक्षिप्त और चमत्कारिक वणन के लिए *प्रतीकों की आवश्यकता होती है। विभिन्न विचारकों ने प्रतीकों के अनेक* रूपों का उल्लेख किया है। इन विचारको में किंचितमात्र असमानता है। डॉ० केदारसिंह के अनुसार–प्रतीक परम्परागत साम्प्रदायिक आध्यात्मिक, रहस्यवाद, वयक्तिक एव स्वप्नपरक होते है।[186] वाक और वेरेन ने वयक्तिक, परम्परागत और प्रकृति नामक तीन भेद बताये हैं।[187] डा० नरेन्द्र मोहन ने प्राकृतिक (जड चेतन सम्बधी) सास्कृतिक (पुराण इतिहास

धम सम्ब धो), सद्धां तक (वनानिक दाशनिक तथा राजनीतिक) आदि प्रतीकों क भदा का उल्लख किया है ।[188]

प्रकृति के उपादानों का प्रयोग किसी अग परिस्थिति अथवा अवस्था क द्योतक के रूप म किया जाता है जिसमे ग्राह्य और अत साम्य का दृष्टि मे रखा जाता है। कहीं पर वाह्य साम्य की अपक्षा अ त साम्य अधिक प्रभावकारी एव मार्मिक होता है। फलस्वरूप ग्राह्य सादश्य के अभाव म अभ्या तर प्रभाव साम्य के माध्यम स प्रकृति के उपादाना का सन्निवेश उपमान रूप म होता है और वहा प्रकृति का प्रतीकात्मक स्वरूप स्पष्ट होता है। उदाहरणाथ–सुख, आन द या प्रफुल्लता के लिए उषा या प्रभाव अथवा प्रकाश यौवन के लिए मधुमास या वस त, प्रिया क लिए मुकुल, प्रेमी के लिए भ्रमर विषाद के लिए सध्या या पतझड़, निराशा हेतु प्रलय, घटा या अ धकार आकुलता अथवा क्षोभ के लिए झझावात आदि का प्रयोग होता है। जैस-सध्या की अरुणिमा क बाद अचानक कालिमा के घिर आने का वणन करके कवि ने ब्रज क आन द और उल्लास की समाप्ति तथा शोक और निराशा व्याप्त हो जाने का उल्लख प्रतीकात्मकता स किया है कि उस भयकर अ धकार म उनका शशि सवकला युक्त होने पर भी विलुप्त होता जा रहा है–

> बहु भयकर थी वह यामिनी।
> बिलपत ब्रज भूषण क लिए।
> तिमिर म जिसके उसका शशी।
> बहु कला युत होकर खो चला।[189]

यहाँ पर कवि न शशि का श्रीकृष्ण का प्रतीक और कलाओं का श्रीकृष्ण के गुणा क प्रतीक रूप म चित्रित किया है। समस्त ब्रजवासियो क लिए आन वाले, कस क द्वारा उत्पन्न किए गए वियोग रूप कष्टावस्था क प्रतीक रूप म तिमिर का प्रयोग कितना सफल है। कस न अक्रूर द्वारा श्रीकृष्ण को धनुष यज्ञ देखने के लिए आमन्त्रित किया है। चू कि कस बड़ा ही अत्याचारी एव नीच प्रकृति का है अत ब्रजवासी श्रीकृष्ण के प्रति अत्यधिक अनु राग के कारण अनिष्ट की आशका स आपूरित होकर अत्यधिक व्यथित हो जाते है। यहाँ कस और उसके सहायकों के प्रतीक रूप म प्रबल हिंसक जन्तु समूह एव श्रीकृष्ण क कोमल भोल भाले क प्रतीक रूप म मगशावक का प्रयोग औचित्यपूण है–

> विवशता किसमे अपनी कहू।
> जननि क्या न बनू बहु कातरा।

प्रबल हिंसक जंतु समूह मे ।
विवश हो मग-शावक है चला ।।[190]

कवि ने मथुरा मे ब्रज से अधिक कृष्ण के निवास को अधिक न मानकर 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' की भावनाभिव्यक्ति करते हुए मथुरा को सूर के द्वारा काजर की कोठरी' के समान उचित नही माना है। उनका कहना है कि यह मथुरा बडी बुरी है। यहाँ कृष्ण जसे सुकुमारो *का जाना अच्छा नही है, फिर भी भाग्य की विडम्बना ही है।* इस प्रसग में कवि कस के प्रभाव का ध्यान रखते हुए मथुरा के लिए 'काले-कुत्सित कीट' काटे' तथा श्रीकृष्ण के लिए 'कुसुम' एव 'कमनीयकज' को प्रतीक रूप में प्रस्तुत किया है। यहाँ का प्रयोग कितना स्वाभाविक है कि वस्तु बुरी सगति से बुरी एव अच्छी सगति से अच्छी हो जाती है। मथुरा कस नगरी होने के कारण बुरी तथा कृष्ण ब्रजवासियो के हृदय अग होने के कारण अच्छे हैं—

काले कुत्सित कीट का कुसुम मे कोई नही काम था।
काटे से कमनीय कज कृति मे क्या है न कोई कमी।
पोरो मे कब ईख की विपुलता है ग्रथियो की भली।
हा ! दुर्दैव प्रगल्भते ! अपटुता तने कहाँ की नही ।।[191]

प्रिय कृष्ण को जब अक्रूर लेकर मथुरा जा रहे हैं, उस समय समस्त ब्रजवासियो से उनका प्रगाढ सम्बन्ध निदर्शित करते हुए कवि ने श्रीकृष्ण के लिए प्रतीक कल्पवृक्ष का प्रयोग किया है जो अत्यधिक सार्थक है। ब्रज वासियो के दृष्टिकोण से, क्योकि जिस प्रकार कल्पवृक्ष के समीप रहने पर सभी कामनाओ की सम्पूर्ति हो जाती है, वैसे ही एक तो कृष्ण सभी के दुख आदि को समाप्त कर आनन्द देने वाले हैं। दूसरे वे सम्पूर्ण ब्रज के प्यारे वश के उजाले, दीनो के परम धन, वृद्धों के नेत्रो की पुतली, बालाओ के स्वजन के समान प्रिय एव बालको के बधु हैं—

सच्चा प्यारा सकल ब्रज का वश का है उजाला।
दीनो का है परम धन औ वृद्ध का नेत्र तारा।
बालाओ का प्रिय स्वजन औ बधु है बालको का।
ले जाते हैं सुरतरु कहाँ आप ऐसा हमारा ।।[192]

पवित्र ब्रज भूमि कृष्ण एव अन्य गोपादि के लिए सुन्दर उपमा का प्रयोग करके कवि ने प्रतीक का सफल प्रयोग किया है। ब्रजवासी ब्रज को यामिनी, सविता समस्त गोपालो को तारो एव श्रीकृष्ण को चन्द्रमा के समान

चित्रित किया है। उनके चले जाने पर यामिनी के समान व्रज अधकारपूर्ण हो जायेगा। कृष्ण के चले जाने से उत्पन्न कष्टावस्था के लिए प्रतीक तिमिर का प्रयोग कितना मनोहारी प्रतीक होता है।

जो है प्यारी व्रज अवनि की यामिनी के समाना।
तो तारा के सहित सब गोपाल हैं तारको से।
मेरा प्यारा कुवर उनका एक ही चन्द्रमा है।
छा जावगा तिमिर वह जो दूर होगा दृगो से ।।[193]

अत प्रियप्रवास के अध्ययन से हमे कवि के द्वारा प्रस्तुत के लिए समय एव भावानुकूल अप्रस्तुत (प्रतीक) का प्रयोग किया गया है जो कवि के काव्य शास्त्रीय ज्ञान का सहज ही दर्शन कराने मे समर्थ है। कवि की प्रतीक प्रयोग क्षमता निश्चित ही अद्वितीय एव प्रशसनीय है।

विम्ब-योजना

काव्य जगत मे बिम्ब का विधान है जिसके द्वारा कवि वस्तु घटना, व्यापार सगुण, विशेषता, साकार एव निराकार पदार्थों तथा मानवीय क्रियाओ को प्रत्यक्ष एव इन्द्रियग्राही बनाता है। आलोचको ने बिम्ब को वस्तुओ के आन्तरिक सादृश्य का प्रत्यक्षीकरण।[194] ऐन्द्रिय माध्यम से आध्यात्मिक एव तार्किक सत्यो तक पहुँचने का मार्ग[195] एव अमूर्त भावना या विचार की पुनररचना मानते है।[196] इस प्रकार बिम्ब विधान मे चित्रवत् वर्णन की अपेक्षा होती है। वह वर्णन जिससे सम्पूर्ण विषय पर प्रकाश, सूक्ष्मातिसूक्ष्म पद या पदावलियो द्वारा पडता हुआ, उसका चित्र प्रस्तुत हो जाय, काव्य में बिम्बविधान कहलाता है। बिम्ब के भेदों के विषय मे डॉ० नगेन्द्र[197] ने इन्द्रियपरक श्रव्यादि, लक्षित उपलक्षित, सश्लिष्ट, खण्डित, समावलित एव वस्तुपरक भेद किये हैं। इनमें इन्द्रियपरक बिम्ब भी लक्षित उपलक्षित सश्लिष्ट, खण्डित एव वस्तुपरक हो सकते हैं। डॉ० सुधा सक्सेना[198] के प्रत्यक्ष स्मृत एव कल्पित भेदो में स्मृत एव कल्पित किन्हीं अशों मे एक हो सकते है। डा० सुरेन्द्र माथुर[199] के रूपात्मक, क्रियात्मक एव भावात्मक मे क्रियात्मक एव भावात्मक भी किन्हीं अशों मे एक ही रहेंगे। डॉ० नरेन्द्र मोहन ने[200] बिम्ब के निम्नलिखित भेद प्रस्तुत किये हैं—

(क) दृश्य बिम्ब (चाक्षुष, श्रव्य स्वाद्य, घ्राण्य, स्पर्श्य, शीत एव ताप सम्बन्धी)
(ख) भावगम्य बिम्ब
(ग) वस्तु बिम्ब
(घ) विराट् बिम्ब

यह बिम्ब व भद प्रभेद इतन समीप हैं कि भेदापभेद म पूण न्याय नही हा पाया है क्या स्पर्श म आक्षप आदि न्द्रियग्राह्य न हाकर वस्तु, विराटत्व एव भाव स भी एक साथ सम्बद्ध हा सकत है। इन बिम्बा के वर्गीकरण का यदि सम्यक आधार रखा जाए ता अधिक उपयुक्त हागा, क्योकि बिम्बो के महाभूतो के आधार पर जलीय स्थलीय आकाशीय आग्नेय वायव्य आदि मानवीय इद्रिया क आधार पर स्पश घ्राण दश्य श्रव्य रस्य भावा के आधार पर रति, हास उत्साह आदि स वर्गीकरण करना उचित प्रतात हाता है। इनके भी प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष आदि दो भेद हो सकते हैं। अत किसी एक आधार पर वर्गीकरण करना बहुत अधिक वैज्ञानिक नही होगा।

महाकवि हरिऔध न बिम्बा का प्रयाग इतना अधिक मनोहारी रूप म किया है कि देखत ही बनता है। एक दृश्य जैसा उपस्थित कर दन / उनके गुरु गम्भीर ज्ञान का प्रतीक है। काव्य क प्रारम्भ म साध्यकाल का वणन करते समय बिम्ब प्रयाग की लडी सी पिराई हुई है। कवि न लोहित शब्द का प्रयाग किया है जिसस शाघ्र ही आँखा क सामन रक्त जस रग का विस्तार सा दिखाई पडते हैं—

दिवस का अवसान समाप था।
गगन था कुछ लोहित हा चला।
तरु शिखा पर थी अवराजती।
कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा॥[20]

कल निनाद स चिडिया के चहचहाने का दृश्य उपस्थित हो जाता है। उड रही से चिडिया के उडते हुए रूप का बिम्ब निर्मित हो जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि सामने ही पख फलाए हुए आकाश म पक्षी विचरण कर रहा हा—

विपिन बीच विहगम वद का।
कल निनाद विवर्धित था हुआ।
ध्वनि कभी करक विविध विहगावली।
उड रही नभ मण्डल मध्य थी॥[21]

'हरीतिमा' के प्रयोग स कवि ने आँखा के सामने समस्त प्रकृति के हरे भरे रूप का बिम्ब उपस्थित कर दिया है। 'अरुणिमा' स रक्त वण क प्रसार का बिम्ब सा उपस्थित हा जाता है—

अधिक और हुई नभ लालिमा।
दश दिशा अनुरजित हा गई।

सवल - पादप - पुज हरीतिमा।
अरुणिमा विनिमजित सी हुई ।।[203]

'चढी' शब्द स किसी स्त्रीलिंग प्राणी क द्वारा उच्च स्थान स ग्रहण करन के बिम्ब का निर्माण हुआ है जिसम चढने के प्रयास एव सफलता का चित्र सा उपस्थित हा जाता है। 'तिरोहित' शब्द द्वारा किसी की दृष्टि से ओझल हान का बिम्ब सा है। शनै शन से मन्द मन्द सचरण का आभास हाता है और एक बिम्ब सा उपस्थित हो जाता है–

अचल क शिखरा पर जा चढी।
किरण पादप शीश विहारिणी।
तरणि बिम्ब तिरोहित हो चला।
गगन - मण्डल मध्य शनै शनै ।।[204]

निनाद' स वाद्य यत्र की गतिशालता का बिम्ब तथा 'कढी एव 'धेनु विमण्डित मण्डली' से सध्याकाल म गोपालों का गायो के साथ आन के एव गाव वालो का गली या फसल आदि क पास स गाया का निकलवान के लिए जाने का बिम्ब उपस्थित हो जाता है–

सुन पडा स्वर ज्यो कल वणु का।
सकल ग्राम समुत्सुक हो उठा।
हृदय यत्र निनादित हो उठा।
तुरत ही अनियत्रित भाव स ।।[205]

\+ \+ \+

इधर गोकुल स जनता कढी।
उमगती पगती अति मोद म।
उधर आ पहुँची बलवीर की।
विपुल - धेनु विमडित मण्डली ।।[206]

कवि ने एक साथ अटल, सुनसान, निश्चल, नीरज, शात का प्रयोग कर भयावह दश्य उपस्थित कर दिया है–

समय था सुनसान निशीथ का।
अटल भूतल म तमराज्य सा।
प्रलय काल समान प्रसुप्त हो।
प्रकृति निश्चल नीरव, शान्त थी ।।[207]

धूम्र स अग्नि क सुलगन का दश्य उपस्थित हा गया है। झलमला हट से चमक प्रति चमक का बिम्ब विनिर्मित हाता है–

वदन से तज के शिप धूम के।
शयन सूचक श्वास समूह को।
झलमलाहट हीन शिखरावलि थे।
परमानिद्रित सा गृहदीप था।।[208]

घहरने' के द्वारा बादलो के घिरने एव पुन पुन ध्वनि करने का बोध होता है तथा आकाश म गहन बादलो का बिम्ब उपस्थित हो जाता है–

मधुपुर पति ने है प्यार से ही बुलाया।
पर कुशल हमे तो है न होती दिखाती।
प्रिय विरह घटा ये घिरती आ रही है।
घहर घहर देखो है कलेजा कपाती।।[209]

अत बिम्बो के प्रयोग के औचित्य-अनौचित्य पर विचार करने से प्रतीत होता है कि महाकवि हरिऔध ने *सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रयोग से एक बडा* दृश्य उपस्थित करने की सामर्थ्य का परिचय सहज ही करा दिया है। प्रिय प्रवास म बिम्बो की भरमार है। उपरिलिखित प्रयोगो के द्वारा हम कवि के विशद शब्द एव उनके प्रयोग ज्ञान का ज्ञान हो जाता है। निश्चय ही कवि मनोहारी बिम्ब प्रयोग म पूर्णत सफल हुआ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 'खडी बोली म मुझको एक एसे ग्रन्थ की आवश्यकता दिखाई दी जो महाकाव्य हो और एसी कविता में लिखा गया हो जिसे भिन्न तुकान्त कहते हैं। अतएव मैं इस न्यूनता की पूर्ति के लिए कुछ साहस के साथ अग्रसर हुआ और अनवरत परिश्रम करके इस 'प्रियप्रवास नामक ग्रन्थ की रचना की।' –प्रियप्रवास के भूमिका भाव, पृ० 2–23

2 प्रियप्रवास–भूमिका भाग, पृ० 2

3 वही पृ० 6

4 हिन्दी मेघदूत–भूमिका (स० 1968), पृ० 3–4
(प्रियप्रवास–भूमिका भाग, पृ० 6–7)

5 मर्यादा–मास ज्येष्ठ आषाढ़, स० 1970, पृ० 96
–प्रियप्रवास–भूमिका भाग, पृ० 5

6 प्रथम हिन्दी साहित्य सम्मेलन का कार्य विवरण, पृ० 37
–प्रियप्रवास–भूमिका भाग, पृ० 18

7 अग्निपुराण–अध्याय 337 (काव्यादि लक्षण) श्लोक 24–34

8 काव्यादर्श–प्रथम परि०, श्लोक 14–19

9 अगटसर्गान्नतुभ्यून त्रिशत्सर्गाञ्चनाधिकम
10 प्रतापरूदयशोभूषण, काव्य प्रकरण, पृ० 96
11 काव्यालकार–प्रथम परि०, श्लोक 19–23
12 वही, 16/4–19
13 पदयप्राय सस्कृत प्राकृता पभ्र शग्राम्यभाषा निबद्ध भिन्नान्त्यवृत्त ।
सर्गाश्वाससध्यवस्कधकब धम सत्सधि शब्दाथ वचित्र्योपेत महाकाव्यम् ।।
–काव्यानुशासन, अध्याय, 8/6
14 साहित्य दपण–6/315–325
15 प्रियप्रवास–11/25–26
16 है रोम रोम कहता घनश्याम आवें आके मनहर प्रभा मुख को दिखावें।
डालें प्रकाश उर के तम को भगावें ज्योति विहीन दृग की द्युति को बढ़ावें।।
–प्रियप्रवास, 12/96
17 बढो करो वीर स्वजाति का भला । अपार दोनों विध लाभ है हमे ।
किया स्वकत्त्य उबार जो लिया । सुकीर्ति पायी यदि भस्म हो गए ।।
–प्रियप्रवास, 11/87
18 हितैषणा से निज जन्मभूमि की अपार आवेश हुआ ब्रजेश को ।
बनी मत्त बक गढी हुई भवें, नितात स्फारित नेत्र हो गए ।
–प्रियप्रवास, 11/23
19 मैं थी सारा दिवस मुख को देखते ही बिताती ।
हो जाती थी व्यथित उसको म्लान जो देखती थी ।।
–प्रियप्रवास, 10/26
20 साथिया की यह देख दुदशा प्रचण्ड दावानल में प्रवीर स ।
स्वय धसे श्याम दुरत वेग से चमत्कृता सी बन भूमि को बना ।।
–प्रियप्रवास, 11/94
21 कई फनों का अति भयानक महाकदाकार अश्वेत शैल सा ।
बडा बली एक फणीश अक से कलिंदजा से कढता दिखा पडा ।।
–प्रियप्रवास, 11/37
22 भूलो मोहो न तुम लख के वासना मूर्तिया को ।
यो होवेगा दुख शमन औ शान्ति यारी मिलेगी ।।
–प्रियप्रवास, 14/39
23 वही, 4/13, 14
24 वही, 6/74

25 प्रियप्रवास 12/2
26 वही 16/54
27 वही 17/49
28 वही, 11/86
29 वही, 1/1
30 प्रियप्रवास–मध्याह्न–13/47 रात्रि–17/25 सूर्य–11/77 वस त वणन–16/1–18, 9/17 वन–9/84
31 अनवरत परिश्रम करके इस प्रियप्रवास नामक ग्रन्थ की रचना की जो कि आप लोगा के कर कमला म समर्पित है। प्रियप्रवास भूमिका भाग पृ० 2
32 वाङ्मय विमश, पृ० 34
33 हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० 608
34 वाङ्मय विमर्श, पृ० 39
35 साहित्यालोचन श्यामसुन्दर दास पृ० 94–95
36 तुलसीदास, पृ० 370
37 महाकाव्य सिद्धा त और मूल्याकन देवीप्रसाद गुप्ता पृ 20
38 महाकवि हरिऔध, पृ० 10–11
39 प्रियप्रवास–भूमिका पृ० 9
40 उद्धृत–प्रियप्रवास की भूमिका से–बालकृष्ण भट्ट पृ० 8
41 वही, पृ० 8
42 आधुनिक काव्यधारा पृ० 138
43 फूल पत्ते–दो चार वा 110
44 प्रियप्रवास, 1/16
45 वही 4/6
46 वही 14/142
47 हरि
48 प्रिय
49 वही
50 वही,
51 वही,
52 वही,
53 वही, 1
54 वही 14/
55 वही, 15/2
56 वही 15/6
57 वही, 4/40

58 प्रियप्रवास-क्रमश 1/10
59 वही, 1/15
60 वही 5/22
61 प्रियप्रवास-भूमिका, पृ० 35–36
62 वही, 56
63 प्रियप्रवास 6/57
64 वही 1/18
65 वही, 3/2
66 वही, 10/44
67 वही 10/44
68 वही 8/63
69 वही 15/118
70 वही, 17/18
71 वही 14/45
72 प्रियप्रवास-भूमिका भाग, पृ० 32
73 प्रियप्रवास-10/11
74 13/75
75 14/26
76 प्रियप्रवास-क्रमश , 9/75, 14/72
77 वही, 11/41, 13/41
78 वही 13/43
79 वही, 13/47
80 वही 14/73
81 वही, 14/31
82 वही 15/18
83 वही, 4/4
84 प्रियप्रवास, 12/1
85 वही, 15/95
86 वही, 9/88
87 वही, 9/97
88 वही 1/3, 1/27, 3/66
89 आधुनिक हिंदी कविता-सिद्धात और समीक्षा उपाध्याय, पृ० 130 से उद्धत
90 काव्यशास्त्र डा० भगीरथ मिश्र, पृ० 205–206
91 वही पृ० 206
92 प्रियप्रवास, 5/80 एव 2/61

25 प्रियप्रवास 12/9ɔ
26 वही 16/54
27 वही 17/49
28 वही, 11/86
29 वही, 1/1
30 प्रियप्रवास–मध्याह्न–13/47, रात्रि–17/25 सूय–11/77, वस त वणन–16/1–18, 9/17 वन–9/84
31 अनवरत परिश्रम करके इस 'प्रियप्रवास' नामक ग्र थ की रचना की, जो कि आप लोगो के कर कमलो म समर्पित है ।
प्रियप्रवास, भूमिका भाग, पृ० 2
32 वाङ मय विमश, प० 34
33 हि दी साहित्य का इतिहास, प० 608
34 वाङ मय विमश, प० 39
35 साहित्यालोचन श्यामसु दर दास पृ० 94–95
36 तुलसीदास, प० 370
37 महाका य सिद्धा त और मूल्याकन देवीप्रसाद गुप्ता, प० 20
38 महाकवि हरिऔध, पृ० 10–11
39 प्रियप्रवास–भूमिका पृ० 9
40 उद्धत–प्रियप्रवास की भूमिका से–बालकृष्ण भट्ट प० 8
41 वही, प० 8
42 आधुनिक काव्यधारा, प० 138
43 फूल पत्ते–दो चार बातें, प० 230
44 प्रियप्रवास, 1/16
45 वही, 4/6
46 वही, 14/142
47 हरिऔध और प्रियप्रवास देव द्र शर्मा इ दु (उद्धत), प० 121
48 प्रियप्रवास–3/14
49 वही 11/35
50 वही, 2/49
51 वही, 3/11
52 वही, क्रमश, 10/92
53 वही 13/83
54 वही 14/15
55 वही 15/28
56 वही 15/60
57 वही, 4/40

58 प्रियप्रवास–क्रमश 1/30
59 वही, 1/15
60 वही, 5/22
61 प्रियप्रवास–भूमिका, पृ० 35–36
62 वही 56
63 प्रियप्रवास, 6/57
64 वही, 1/18
65 वही, 3/2
66 वही, 10/44
67 वही 10/44
68 वही 8/63
69 वही 15/118
70 वही, 17/18
71 वही 14/45
72 प्रियप्रवास–भूमिका भाग, प० 32
73 प्रियप्रवास–10/11
74 13/75
75 14/26
76 प्रियप्रवास–क्रमश, 9/75, 14/72
77 वही, 11/41, 13/41
78 वही, 13/43
79 वही, 13/47
80 वही 14/73
81 वही, 14/31
82 वही 15/18
83 वही, 4/4
84 प्रियप्रवास, 12/1
85 वही, 15/95
86 वही, 9/88
87 वही 9/97
88 वही 1/3 1/27 3/66
89 आधुनिक हिन्दी कविता–सिद्धान्त और समीक्षा विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, पृ० 130 से उद्धत
90 काव्यशास्त्र डा० भगीरथ मिश्र, प० 205–206।
91 वही प० 206
92 प्रियप्रवास, 5/80 एव 2/61

93 प्रियप्रवास, 4/43, 4/50, 5/53
94 वही, 11/10 2/61, 2/35
95 वही, 3/61 तथा 2/27, 6/26, 7/56
96 वही, 7/16
97 वही, 2/61
98 वही, 4/50
99 वही, 4/50
100 सूर और उनका साहित्य, पृ० 313
101 प्रियप्रवास 2/29
102 वही, 5/41
103 वही, 2/51
104 वही 2/55
105 वही, 6/18
106 वही, 4/37
107 वही 8/22
108 वही, 6/21
109 वही, 5/41
110 वही 14/131
111 वही, 15/6
112 वही 15/26
113 वही, 15/33
114 वही, 15/57 15/77, 16/97, 4/37, 9/3, 10/13 आदि
115 काव्यदर्पण, पृ० 409
116 सिद्धान्त और अध्ययन, भाग 1, पृ० 194
117 प्रियप्रवास, 14/22
118 वही, 5/75
119 वही 3/33 एव 6/12–15, 10/21–23 आदि
120 वही 11/87 एव 12/61,62
121 वही 13/52
122 वही 15/51
123 काव्यादर्श, 2/11
124 चन्द्रालोक, 1/8
125 वही, 5/1

126 काव्यालकार, 1/37
127 कविप्रिया, 5/1
128 प्रियप्रवास, 1/20, 1/25, 1/18
129 वही 16/15
130 वही, 8/47, 9/23
131 वही, 10/7
132 वही, 3/49
133 वही 7/41
134 वही, 6/58,
135 वही, 8/10 8/32
136 वही, 4/4
137 वही, 9/64
138 वही, 8/38
139 वही, 10/48
140 वही 1/51
141 वही, 1/80 एव 9/23, 9/19
142 वही, 3/87 एव 1/41
143 वही, 5/7
144 वही, 9/15 एव 4/47, 15/13, 15/35 आदि
145 वही 13/43
146 वही, 12/71
147 वही, 13/103
148 वही, 4/42
149 वही, 5/28
150 वही 16/85 87
151 वही, 10/21
152 वही, 12/15
153 वही, 13/118
154 वही, 16/86
155 वही, 3/56
156 वही, 4/20
157 वही, 4/22
158 वही 5/64

159 प्रणवश्छन्दसामिव–रघुवश कालिदास प्रथम सग–11
160 तस्मादयज्ञात्सवढत ऋच सामावि यज्ञिरे ।
छ दासि अज्ञिरे तस्माट यजुस्तस्माज्जायत ॥ –ऋग्वेद, दशम मण्डल
161 वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड, 2/15
162 रूपमष्टिप्रवाहकता विश्व से रूपते जगे छन्द ।
आधुनिक परिमाणु तत्वा से कथा सुस्पष्ट–
विशेष सख्या के मात्रा ओ विलेष वेगेर गति एइ दुई नियइ छन्द ।
–रवी द्र रचनावली भाग–2 पृ० 351
163 आधुनिक हिन्दी का व म छन्द योजना पृ० 27
164 मेघदूत–हि दी अनुवाद की भूमिका अनवादक–श्री लक्ष्मीधर वाजपेयी
165 प्रियप्रवास–10/23
166 वही 13/92
167 वही 11/56 57
168 वही 12/38
169 वही, 9/8
170 महाकवि हरिऔध जा प्रियप्रवास धर्मे द्र ब्रह्मचारी पृ० 28
171 प्रियप्रवास 1/33
172 वही, 7/11
173 वही, 8/63
174 वही 9/8
175 वही 11/75
176 वही 14/78
177 वही 9/66
178 वही 13/90
179 वही 11/98
180 वही 11/62
181 वही 13/2
182 वही 11/78
183 वही
184 चि तामणि–भाग–2 पृ० 110
185 एसेज आफ सिम्बोलिज्म पृ० 2–3
186 कल्पना और छायावाद पृ० 104
187 थ्यारी आफ लिटरेचर पृ० 194

188 आधुनिक हिन्दी काव्य मे प्रस्तुत विधान, पृ० 57
189 प्रियप्रवास 2/61
190 वही, 3/69
191 वही, 4/20
19? वही, 5/28
193 वही, 5/27
194 स्पेकुलेशन–टी० ई० हुलमे, प० 81
195 फ्रावलेप आफ आर्ट–सुसेन के० लैंगर, प० 132
196 पोयटिक प्रोसेस–जाज वेले, पृ० 145
197 काव्य में बिम्ब, प० 17
198 जायसी की बिम्ब योजना, प० 71–72
199 काव्य मे बिम्ब और छायावाद, प० 20
200 आधुनिक हिन्दी कविता म अप्रस्तुत विधान, प० 68
201 प्रियप्रवास, 1/1
202 वही, 1/2
203 वही, 7/3
204 वही 1/5
205 वही, 1/12
206 वही, 1/14
207 वही ?/1
208 वही, 3/9
209 वही 4/44

□

षष्ठम अध्याय

प्रियप्रवास का परवर्ती कृष्ण-काव्यो पर प्रभाव

प्रियप्रवास चरित्र चित्रण की दृष्टि से आधुनिक हिन्दी साहित्य के नवीन दिशा निर्देशन करता है जिसमें उनके मधुर पक्ष की प्रस्तुति नये ढग से की गयी है। प्रियप्रवास का परवर्ती काव्यों पर भाव भाषा शैली छद अलकार आदि विविध रूपों म व्यापक प्रभाव पाया जाता है। डॉ० प्रभात दुबे का कथन है–' मेरे कहने का अर्थ यह नहीं कि समस्त परवर्ती कृष्ण काव्य पर प्रियप्रवास का प्रभाव पडा है अपितु उसने कृष्ण चरित्र को एक नये रूप मे देखने की जो दृष्टि दी वह समस्त आधुनिक हिन्दी कृष्ण काव्य मे मिलती है। वास्तव म परिवर्तित परिस्थितियो ने कृष्ण चरित्र के लोक नायकत्व को लोकप्रियता प्रदान की थी। कृष्णचरित्र म तो पहले से ही वे तत्व विद्यमान थे जो प्रत्येक युग की आवश्यकता और रुचि को तुष्ट कर सकते हैं।''[1]

कृष्ण चरित्र को लेकर प्रत्येक युग और काल म रचनायें होती रही हैं परन्तु परिस्थितियों से प्रभावित कवियो की मा यताओ में परिवतन हुआ है, अद्यावधि कृष्ण चरित्र को लेकर रचना करने की परम्परा मूल रूप म प्रवहमान है।

प्रियप्रवास के बाद श्रीकृष्ण एव उनके चरित्र से सम्बधित अनेक ग्र थो का सजन हुआ है जिनम मुख्य निम्न हैं–

पुरुषोत्तम (तुलसीराम शर्मा) कृष्णचरितमानस (प्रद्युम्न दुगा) कृष्णायन (द्वारका प्रसाद मिश्र) द्वापर (मथिलीशरण गुप्त) फरिमिलिबो (अनूप शर्मा) श्याम सदेश (प० घासीराम व्यास) नह निकु ज (चन्द्रभानु सिह रज'), सूरश्याम (रामअवतार अरुण पोद्दार) उद्धवशतक (डॉ० रमाशकर शुक्ल 'रसाल) मधुपुरी (गयाप्रसाद द्विवेदी) राधा (लाऊद दयाल गुप्त), श्रीराम कृष्ण काव्य (प० हृषीकेश चतुर्वेदी), श्यामशतक (बलदेव मिश्र), कनुप्रिया (धर्मवीर भारती) महारास (नरेशच द्र सजन) वेणुलो गू जे धरा (माखनलाल चतुर्वेदी) गोपिका (सियारामशरण गुप्त),

द्वारका प्रवेश (चन्द्रशेखर पाण्डेय) आदि। इसी परम्परा में जयभारत (मैथिलीशरण गुप्त) कुरुक्षेत्र रश्मिरथी (रामधारी सिंह दिनकर) आदि भी उल्लेखनीय काव्य ग्रंथ हैं।

उपरिलिखित जिन रचनाओं और रचनाकारों के नाम प्रस्तुत किये गये हैं, अधिकांश विद्यापति और मीरा, रसखान और सूर की परम्परा में आते हैं, परन्तु वे भी युग परिस्थितियों से कुछ न कुछ प्रभावित हैं। इन ग्रंथों में कुछ ग्रंथ ऐसे हैं जिन पर प्रियप्रवास का विशेष प्रभाव है, इनका उल्लेख करना प्रसंगानुकूल होगा–

उद्धव शतक (१९२९ ई०)

रत्नाकर जी ने इसमें ज्ञान और भक्ति का दार्शनिक विवेचन करते हुए भक्ति की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है, फिर भी कवि नवीनता एवं युगानुरूपता के प्रभाव से अछूता नहीं रह सका है। प्रियप्रवास के कृष्ण मथुरा में निवास करते हुए ब्रज जीवन के सुख माता पिता, गोप कुमार, गोपी एवं राधा का स्मरण कर उद्विग्न हो रहे हैं। वे अपने मित्र उद्धव से ब्रज जाने का आग्रह करते हुए वियोग में दग्ध हुओं को ज्ञानाम्बु से शमन करने की प्रार्थना करते हैं–

एकाकी यदुदेव एक दिन थे बैठे हुये गेह में।
उत्संगस्थ ब्रज भूमि के स्मरण से उद्विग्नता थी बड़ी।

+ + +

ऊधो दग्ध वियोग से ब्रज धरा है हो रही नित्यशः।
जाओ सिक्त करो उसे सदय हो आमूल ज्ञानाम्बु से॥[2]

इसी भावना से प्रभावित उद्धव शतक के कृष्ण कहते हैं–

उद्धव ब्रजवास के बिलासनि कौ ध्यान धरयो,
नित्तनि काटे लौं करेजे कसकत है।[3]

ब्रज बालाओं का रूप सौन्दर्य इस प्रकार उनके अन्तराल में समाया है कि रात दिन हृदय में काटे की कसक सी चुभन होती रहती है। वे कहते हैं कि जिन कुंजों में मैं गोपिकाओं के साथ विचरण किया करता था, अब नेत्रों में अहर्निश वही कुंज फिरते रहते हैं।[4] यद्यपि प्रियप्रवास की उदात्तता उद्धव शतक में नहीं है, फिर भी उसका स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। यही नहीं उद्धव के द्वारा योग साधना का उपदेश दिये जाने के वर्णन में प्रियप्रवास और उद्धवशतक दोनों पर्याप्त साम्य है–

भोली भाली ब्रज अवनि क्या योग की रीति जाने।
कैसे बूझें अबुध अबला ज्ञान विज्ञान बातें।

देते क्या हो दमन करके बात ऐसी व्यथाएँ।
देखूँ प्यारा वदन जितना मान ऐसा भला दो ॥[3]

मरण न चाहैं हम अमरण न चाहैं सुनो
मुक्ति मुक्ति दोऊ सों विरक्ति उर आनें हम।
कहै रत्नाकर निहारें जोग रोग माहि
तन मन मोननि की मोमति प्रमानें हम।
एक व्रज चन्द कृपा-मन्द मुसकानि ही मैं,
लोक परलोक को अनन्द जिय जानें हम ॥[4]

कृष्णायन-कृष्णायन की रचना उस समय हुई जिस समय स्वतन्त्रता के लिए पूरे देश में क्रान्ति फैल चुकी थी। जिस पर तत्कालीन परिस्थितियों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। मिश्र जी ने श्रीकृष्ण के समग्र जीवन गाथा को सरस अवधी भाषा में उनके राष्ट्र नायक, लोक रक्षक एवं समाज सुधारक रूप को प्रस्तुत किया है। उन्हें सम्पूर्ण भारत को राष्ट्रीयता के सूत्र में बाँधने वाले युगानुरूप महामानव बनाया गया है। प्रियप्रवास और कृष्णायन दोनों में दुष्प्रवृत्ति व्यक्ति को त्यागने और दण्ड देने की बात कही गई है—

समाज उत्पीड़क धर्म विप्लवी।
स्वजाति का शत्रु दुरंत पातकी।
मनुष्य द्रोही भव प्राणि पुंज का।
न है क्षमा योग्य वरंच वध्य है।
क्षमा नहीं है खल के लिए भली।
समाज उत्पादक दण्ड योग्य है।
कु कर्मकारी नर का उबारना।
सुकर्मियों को करता विपन्न है ॥[1]

इसका पूर्ण प्रभाव कृष्णायन पर देखा जा सकता है—

शासत खलहि न बस सुभ गुरुजन ॥
त्याज्य व्यक्ति कुल हित अवरोधी।
त्याज्य कुलहु जो ग्राम विरोधी ॥
ग्रामहु त्याज्य राष्ट्र हित नासी।
त्याज्य सुमोचन सब विनासी ॥[2]

राधा के साथ व्रज की जितनी कुमारी गोपिकाएँ थीं, उन सभी की कामना थी कि श्रीकृष्ण को वे पति रूप में प्राप्त करें। इसके लिए वे विविध प्रकार के व्रत और पूजन करती थीं। प्रियप्रवास और कृष्णायन में इस प्रकार का साम्य दृष्टिगत होता है—

पूजाएँ त्यो विविध व्रत औ सैकडा ही क्रियाएँ।
साला की हैं परम श्रम से भक्ति द्वारा उन्हाने।
ब्याही ही जाऊँ कुँवर-वर से एक वाछा यही थी।
सा वाछा है विफल बनता दग्ध व क्या न हागी ॥[9]

कृष्णायन का एक दृश्य प्रस्तुत किया है—

कन्याएँ मना रही थी यह—
पति रूप म उनको पायें हम
कहते हैं हेमन्त म इसी हेतु कर प्रेम।
कुछ कन्याओ न लिया कात्यायनि व्रत नम।
कुछ रात रहे ही यमुना मे व नित्य नहान जाती थीं।
अरुणोदय के पहले पहले पूजन कर घर का आती थी ॥[10]

प्रियप्रवासकार न लाक कल्याण की भावना से प्रेरित हाकर विश्व का सबसे महान् काय आपत्ति में प्राणि मात्र की रक्षा करना ही माना है। श्रीकृष्ण आपत्ति काल म समस्त व्रजवासियो का सम्बाधित करत हुए कहते हैं—

विपत्ति स रक्षण सवभूत का।
सहाय होना अ महाय जीव का।
उबारना सकट स स्व जाति का।
मनुष्य का सवप्रधान धम है।

+ +

न हो सका विश्व महान काय है।
न सिद्ध हाता भव जन्म हेतु है ॥[11]

कृष्णायन म इसी भाव का अभिव्यक्ति करत हुए श्रीकृष्ण न समष्टि-कल्याण के लिए व्यष्टि का बलिदान कर देना ही लोक कल्याण का एक-मात्र साधन माना है—

एकहि नीति तत्व मैं जाना
हेतु समष्टि व्यष्टि बलिदान।
स्वजनहि वसत जासु मन माहीं
सधत धम हित तहि स नाहीं ॥[12]

मिश्र जी न श्रीकृष्ण का अवतारी रूप म स्वीकार अवश्य किया है, किन्तु व मानवीय धरातल पर धम सस्कृति एव समाज के लिए महान से महान त्याग करन क लिए अग्रसर रहत हैं—

धम हेतु तुम कस विनासा । जरासध धमहि हित नासा ।
पौण्डक भौमासुर महारे । काल शाल्व धमहि हित मारे ॥[13]

लोक कल्याणकारक, असुर सहारक, नीति कौशल निपुण श्रीकृष्ण 'कृष्णायन' म कमयोगी रूप म प्रस्तुत किये गये हैं ।

कालीयनाग प्रसग मे कृष्णायन 'प्रियप्रवास का' पूण अनुगमन करता हुआ प्रतीत होता है । प्रियप्रवास' म फणीश के शीश पर विशिष्ट शोभा स युक्त श्रीकृष्ण आनन्द मग्न दिखाई पडे—

फणीश शीशोपरि राजती रही ।
सुमूर्ति शोभामय श्री मुकुन्द की ।
विकीणकारी कल-ज्योति चक्षु थ ॥[14]
ब्रज ने नभ ने विश्व ने देखा तब सानद ।
कालिय फन पर नाचता प्रकट हुआ ब्रजचद ॥[15]

प्रियप्रवास की भाँति कृष्णायन म कवि न कृष्ण का महान उद्दश्य की पूर्ति क लिए महामानव एव लोकनेता रूप म चित्रित किया है । यद्यपि मिश्र जी उनक ईश्वरत्व एव अलौकिक स्वरूप को छोड नहीं पाये हैं, तथापि व प्रियप्रवास की भावभूमि स प्रभावित हैं और तत्प्रतिष्ठित परम्परा के पोषक भी ।

द्वापर—प्रियप्रवास के समान खडी बोली म स० 1993 मे इस ग्रन्थ की रचना हुई । श्रीकृष्ण क चरित्र पर आधारित प्रस्तुत रचना म कथा सूत्र की सम्बद्धता विद्यमान है । यह ग्रन्थ कवि की गहन अनुभूति का परिणाम है । मौलिकता क साथ इसमे प्राचीनता नवीनता का सुन्दर सगम है । कवि न श्रीकृष्ण क चरित्र का अतिमानवीय रूप निकाल कर जीवन का घटनाओ का सम्भाव्य बनाने का प्रयास किया है । प्रियप्रवास की भाँति द्वापर म भी गोवद्धन धारण जसी अलौकिक घटनाओ का लौकिक रूप प्रदान किया गया है । गोवद्धन पूजा क सदभ म कवि न यह स्पष्ट किया है कि इन्द्र को सतुष्ट रखने क लिए पशु बलि क नाम पर अनक हिंसाएँ हो रही थीं, जिसका श्रीकृष्ण ने खुलकर विरोध किया है—

जिनम पशु वध करते करते सूखा हृदय तुम्हारा ।
वे मख मिटें और हे ईश्वर इन्हीं बालका द्वारा ॥[16]

प्रियप्रवास म दावाग्नि प्रसग म श्रीकृष्ण सभी ब्रजवासियो को स्वजाति क उद्धार को महान धम बताकर उसकी रक्षा के लिए ललकारते हैं ।[17] उनका कहना है कि बिना प्राणो की ममता त्यागे ससार का कोई महान काय सम्भव नहीं है ।[18] द्वापर म बलराम के उन्मत्त चरित्र को प्रस्तुत

करते हुए उनके द्वारा बार बार जन्म भूमि, युग धर्म और कर्म की कवि ने व्याख्या की है। वह प्रकृति और उसके तत्वों की ओर संकेत करता हुआ, कहता है कि जब ऋतुएं रात दिन एवं सायं प्रात सब कुछ वैसे ही हैं तो हमारी मनोवृत्तियाँ क्यों बदली हैं। हमें अधर्म को कदापि धर्म नहीं समझना है। यदि हमने कर्म के मर्म को न समझा तो यह पतित कर्म है–

आह ! हमारे आगे कितना कर्मक्षेत्र पड़ा है।
हीन हो गया काल कौन सा? क्या घन मन्द्र नहीं अब?
सायंप्रात, रात दिन ऋतुएँ या रवि चन्द्र नहीं अब?
सावधान ! युग के अधर्म को हम युगधर्म न समझें।
कर्म नहीं हम पतित आप, यदि उनका मर्म न समझें ।।[19]

कवि न्याय धर्म का पक्ष लेकर बलिदान हेतु सदा उद्यत रहने के लिए प्रोत्साहित करता है–

और आत्मबलि देने को भी उद्यत रहना होगा।
न्याय धर्म के लिए लड़ो तुम ऋत हित समझो बूझो।
अनय राज, निर्दय समाज से निर्भय होकर जूझो ।।[20]

उद्धव से राधा यह संदेश पाकर कि श्रीकृष्ण विश्व के कल्याण में इस प्रकार व्यस्त हो गये हैं कि उन्हें ब्रज तक आने का अवसर ही नहीं मिल पाता। उनके अन्तराल में राधा के प्रति अनन्य प्रेम है, फिर भी अनेक समस्यायें उनको प्रिय राधा से मिलने में बाधा डालती रहती हैं। उनकी समस्याओं को सुनकर राधा द्रवीभूत हो जाती हैं और वे भी सर्वभूत हित करना ही अपना लक्ष्य बना लेती हैं–

वह सहृदयता से ले किसी मूर्छिता को।
निज अति उपयोगी अंक में यत्न द्वारा।
मुख पर उसके थी डालती वारि छींटें।
बर-व्यजन डुलाती थी कभी तन्मयी हो ।।[21]

द्वापर में राधा को जगत हित की ही चिन्ता सदैव लगी रहती है। वह ब्रज की सम्पूर्ण क्रीड़ाएँ लोक-सेवा में पड़कर भूल गई हैं–

राधा स्वयं यही कहती हैं–उसे जगत की पीड़ा।
छूट गयी जिसमें पड़कर हा ! ब्रज की सी वह क्रीड़ा ।।

यद्यपि द्वापर में श्रीकृष्ण के लोकोत्तर कार्यों की महत्ता को स्वीकार करते हुए उन्हें आराध्य देव माना गया है, फिर भी प्रियप्रवास से प्रभावित हो, उसमें प्राचीनता एवं नवीनता का सुन्दर समन्वय है। उसके राधा, यशोदा, विधृता बलराम, ग्वाल दास नारद देवकी उग्रसेन, नन्द, उद्धव

आदि सभी पात्र कृष्ण के ब्रह्मत्व को स्वीकार करते है। गुप्त जी सुधार काल के जागत राष्ट्रीय कवि थे, इसलिए कृष्ण क ब्रह्मत्व का स्वीकार करते हुए भी उन्हें यथा स्थान समाज सुधारक, धम रक्षक और रूढि विरोधी नायक रूप मे प्रस्तुत किया है।

कुरुक्षेत्र—कुरुक्षेत्र महाभारत की कथा स सम्बधित है पर तु कवि ने वतमान युग की समस्याओ को प्रस्तुत कर कर्मवाद का समथन किया है। इसलिए प्रियप्रवास की भाँति कुरुक्षत्र म मात्र पात्रों को ग्रहण कर कवि ने इसकी मौलिक रचना की है। इसमे युगीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा आध्यात्मिक विचार प्रकट करते हुए दिनकर जी ने मानवता शाति, समाजवाद एव निष्काम कम की ओर प्रेरित किया है—

> बुला रहा है निष्काम कम वह बुला रही है गीता।
> बुला रही है तुम्हें आत हो मही समर सभीता।
> इस विवित्त आवृत्त वसुधा को अमत पिलाना होगा।
> अमित लता गुल्मो मे फिर से सुमन खिलाना होगा ।।[22]

इन पक्तियो पर 'प्रियप्रवास के द्वादश सग गोवद्धन धारण प्रसग का पूरा प्रभाव है। जहाँ कृष्ण अपने प्राणो की बाजी लगाकर समस्त ब्रज प्रदेश को महान आपत्ति से रक्षा करते हैं।[23]

'कुरुक्षेत्र मे युद्ध की भीषणता के परिणामस्वरूप नर सहार को मानवता विनाश का कारण बताया गया है। इसमे वतमान समाज म विषाक्त *अन्याय, अत्याचार एव शोषण एव शोषण क विरुद्ध क्राति का* आवाहन किया है। कवि भौतिकता एव पूँजीवाद के विपरीत समता स्थापित कर विश्वब धुत्व की उदघोषणा करता है। प्रियप्रवास भागवत और रामचरित मानस मे प्रस्तुत नवधा भक्ति को लौकिक सामान्य जीवन मूल्यो के धरातल पर प्रतिष्ठित किया गया है। इसी प्रकार दिनकर जी ने सन्यास (ससार त्याग) की अपेक्षा निष्काम कम को स्वाकारा है। कम की स्थिति पथ्वी तल पर सृष्टि के आरम्भ से अन्त तक परिव्याप्त है, यही नहा वह अणु अणु मे समाहित है। विश्व के किसी भी कोने म व्यक्ति चला जाय, कम उसका साथ नहीं छोड सकता—

> कम भूमि है निखिल महीतल, जब तक नर की काया।
> तब तक है जीवन के अणु अणु मे कतव्य समाया।
> क्रिया धर्म को छोड मनुज, कसे निज सुख पायेगा ?
> कर्म रहेगा साथ भाग वह, जहाँ कहीं जायेगा ।।[24]

प्रियप्रवास मे श्रीकृष्ण के चरित्र का उदघाटन करते हुए कवि ने उ हें सर्वत्र लोक हित कार्यों मे ही प्रस्तुत किया है। उनके लिए दीन दुखियो की मेवा से बढकर विश्व मे दूसरा कोई काय है ही नही–

अच्छे अच्छे बहु फलद औ सब लोकोपकारी।
कार्यों की है अवनि अधुना सामने लोचनो के।
पूरे पूरे निरत उनमे सवदा हैं बिहारी।
जी स प्यारी ब्रज अवनि मे हैं इसी से न आते ।।[25]

कुरुक्षेत्र की रचना के समय अंग्रेजो के अत्याचारपण शासन स जनता अनेक भीषण अ याय और अत्याचारपूण नीतियो के प्रति विद्राह के लिए तडप रही थी, इधर महात्मा गांधी अहिंसा के द्वारा उन पर विजय प्राप्त करने का दावा कर रहे थे। कवि हिंसा अहिंसा के अ तद्व द्व स आकुल व्याकुल हो उठा। प्रियप्रवास के निम्नलिखित छ द स उसे बडी प्रेरणा मिली–

अवश्य हिंसा अति निंद्य कम है।
तथापि कत्तव्य प्रधान है यही।
न सद्य हो पूरित सप आदि से।
वसु धरा म पनपें न पातकी ।।[26]

कवि अहिंसा का पोषक है और हिंसा को निंद्य कम स्वीकार करता है, कि तु समाज उत्पीडक, स्व जाति के विनाश, मनुष्य या अ य प्राणियो स द्रोह रखने वाले किसी भी दशा मे क्षमा के योग्य नहीं हैं। इसी विचार धारा से प्रभावित होकर दिनकर जी ने कुरुक्षेत्र की रचना की है। कुरुक्षेत्र' शीषक महाभारत से स्वय सम्बन्धित होना प्रकट करता है, पर तु ऐसा है नही। वह पूणरूपेण युगीन समाज की अभिव्यक्ति है और सामाजिक समस्याओ के परिणामस्वरूप ही इसकी रचना की गयी है।

कनुप्रिया–अतीत के प्रसगो से प्रेरणा लेकर समयुगीन समस्याओ एव उनके समाधान को प्रस्तुत कर कवि ने एक साथ भूत, वतमान और भविष्य तीनो का सम वय स्थापित कर दिया है। इसम श्रीकृष्ण गोप गोपिकाओ के साथ केलि क्रीडाएँ करते हैं। उनके प्रति राधा का पूण समपण भाव है तथा वे नीति कुशल शासक, युद्ध के प्रोत्साहक एव अ य विषयो के व्याख्याकार रूप में वर्णित हैं। यहाँ कृष्ण इतिहास के निर्माता, प्रेमी और जगत के कणधार हैं। उनमें उच्च आदश, युगान्तकारी सिद्धा त और युग सापेक्ष जीवन मूल्य की परिव्याप्ति है। डॉ॰ ब्रजमोहन शर्मा का कथन है–कवि ने कृष्ण की मान्यताओ के टूट जाने की रीत घट के तुल्य

असफल करार दिया है। उसने स्वधम कम दायित्व को सवेदनशीलता व अभाव म आधुनिक समस्याओ के निकष पर कोरे रगे हुए निरयक आकषक शब्द घोषित किया है। उसका पाप पुण्य धर्माधम करणीय अकरणीय न्याय दण्ड क्षमाशील नाला युद्ध असत्य माना है। उसने महत व्यक्तित्व को नकारा गया है लेकिन कृष्ण चरित्र कवि की अदभुत सष्टि है।[27] भारती जी प्रियप्रवास व उन नवीन जीवन मूल्यो क पक्षधर है जो तत्युगीन समाज के लिए हितकारक है, किन्तु उन आदर्शों और मा यताओं को बिल्कुल मा यता नहीं देते जो मात्र कोरे आदश है उ ही धम और सिद्धा तो स युक्त कृष्ण का भारती जी क लिए कोई महत्व नहीं है।

राधा क कनु (कृष्ण) अन य प्रेमी है। वे एस रसिक शिरोमणि है कि अपनी बकिम मुद्रा से पण रूप स प्रियतमा का वश मे कर लते हैं। उनका एसा अदभत प्रेम है जो शरीरज म वासना स परे लोकोत्तर है–

इस सम्पूणता क लोभी तुम
भला उस प्रमाण मात्र को क्यो स्वीकारते ?
और तुम पगली का देखा कि मैं
तुम्हें समझती थी कि तुम कितने वीतराग हो
कितने निर्लिप्त।[28]

प्रियप्रवास म श्रीकृष्ण क मथुरा प्रयाण के समय राधा का उनक प्रति आकषण और प्रेम सम्ब धा का जो रूप प्रस्तुत है, कनुप्रिया पर बहुत कुछ उसका प्रभाव है–

बलवती कुछ थी इतनी हुई।
कुवरि प्रेम लता उर भमि म।
शयन भोजन क्या सब काल ही।
वह बनी रहती छबिमत्त थी।[29]

प्रियप्रवास म श्रीकृष्ण क अलौकिकता का न स्वीकार कर लौकिक महामानव रूप को मान्यता दी गयी है फिर भी वे परम्परा म चले आ रहे उनके महत ब्रह्म स्वरूप को बिल्कुल भूल नहीं पाये हैं–

यह अलौकिक बालक बालिका[30] *व*
लख अलौकिक स्फूर्ति सु दक्षता।
चकित स्तम्भित गोप समूह था।
अधिकता बधता यह ध्यान था।
ब्रज विमूषण हैं शतश बने॥[31]

कनुप्रिया म राधा कृष्ण को अपना सवस्व अर्पित कर चुकी हैं,

परन्तु अब तक अपने प्रिय कनु के प्यार की पद्धति को न समझ सकी हैं। उनका प्रेम संसार में अनेक रूपों में विद्यमान है जिसका समझ पाना दुरूह है—

हाय मैं सच कहती हूँ
मैं इसे समझी नहीं, नहीं समझी बिल्कुल नहीं समझी।
यह सारे संसार से पृथक् पद्धति का
जो तुम्हारा प्यार है न
इसकी भाषा समझ पाना क्या इतना सरल है।[32]

कनुप्रिया में कृष्ण के ब्रह्म रूप की झाँकी अनेक स्थलों पर देखी जा सकती है।

प्रत्येक प्रेमी का अपने प्रिय के सयोग की निरन्तर कामना रहती है। कनुप्रिया (राधा) कृष्ण द्वारा किये जा रहे गीता प्रवचन को मात्र प्रिय सामने रहकर कुछ कहते रहें, इसलिए सुनना चाहती है—

और समस्या क्या है
और लड़ाई किस बात की है
लेकिन मेरे मन में एक मोह उत्पन्न हो गया है
क्योंकि तुम्हारे द्वारा समझाया जाना
मुझे बहुत अच्छा लगता है[33]

प्रियप्रवास में राधा और कृष्ण बचपन से ही साथ साथ खेलते थे, अवस्था के साथ दोनों में स्नेह और फिर वह प्रणय में परिवर्तित हो गया।[34] इस प्रकार ऐसे प्रसंग का वर्णन भी निःसंदेह प्रियप्रवास से प्रभावित परिलक्षित होता है। इसमें श्रीकृष्ण के रसिक एवं भारतीय दोनों रूप प्राप्त हैं।

अन्धायुग-भारती द्वारा विरचित यह नाट्यकाव्य श्रीकृष्ण को मर्यादा रक्षक एवं लोक कल्याणकारी ईश्वर के रूप में प्रस्तुत करता है। ईश्वरत्व के साथ इसमें आधुनिकता का बाह्य पुट ही नहीं चिन्तन प्रक्रिया भी विद्यमान है। ऐतिहासिकता के साथ वर्तमान जीवन सत्य को नवीन संदर्भों में प्रस्तुत किया है। अतीत और आगत दोनों दिशाओं को व्यापक रूप से दृष्टि में रखकर इसकी रचना की गयी है। प्रियप्रवास का कथानक एवं उसकी रचना शैली से अन्धायुग काव्य बहुत कुछ प्रभावित है। प्रियप्रवास में श्रीकृष्ण का ब्रह्म रूप स्पष्ट नहीं है, परन्तु इसमें बार बार ईश्वर के सम्बोधन में उसकी आस्था अभिव्यक्ति होती है—

तुम जो हो शब्द ब्रह्म, अर्थों के परम अर्थ।
जिसका आश्रय पाकर, वाणी होती न व्यर्थ।।

है तुम्हें नमन है उन्हें नमन,
करते आये जो निर्मल मन।
सदियों से लीला का गायन
दो मुझे शब्द, दो रसानुभव दो अलंकरण,
मैं चित्रित करूँ तुम्हारा करुण रहस्य मरण।[35]

उल्लेख किया जा चुका है कि प्रियप्रवास को मानवीय धरातल पर प्रस्तुत करने के लिए श्रीकृष्ण द्वारा किये गये अनेक अलौकिक कार्यों को कवि ने लौकिक प्रयत्नों द्वारा सम्पन्न कराया है जिसके अन्तराल में उनका ब्रह्मत्व रूप प्रच्छन्न है।

धर्मवीर भारती जी समाज के विघटित जीवन मूल्यों और मर्यादाओं को पुनः नवीन रूप में स्थापना करने के प्रबल समर्थक हैं उन्होंने इसकी स्थापना में श्रीकृष्ण को ही सक्षम पाया है, समाज के अन्य लोग पथ से भटक गये हैं व उद्देश्य हीन होकर इतस्ततः घूम रहे हैं—

है एक बहुत पतली डोरी मर्यादा की।
पर वह भी उलझी है दोनों ही पक्षों में।
सिर्फ कृष्ण में साहस है सुलझाने का।
वह है भविष्य का रक्षक वह है अनासक्त।[36]

'प्रियप्रवास' में गोप गोपियाँ निरन्तर उनके द्वारा किये गये अनेक साहसी कार्यों का वर्णन किया करते हैं। जितने भी पापी दुष्ट, उत्पीडक देखे गये उन सबका यत्न द्वारा संहार करने से बढ़कर और एक साहसी व्यक्ति के लिए हो ही क्या सकता है जिसका स्पष्ट प्रभाव अंधायुग पर पड़ा है—

वही महाधीर असीम साहसी
सुकौशली मानव रत्न दिव्य थी।।
अभाग्य से है ब्रज से जुदा हुआ।
सदैव होगी न व्यथा अतीव क्या।।[37]

श्रीकृष्ण ने समाज में जो भी स्थान प्राप्त किया है वह अपने पौरुष और शक्ति से प्राप्त किया है। कवि की धारणा है कि सामान्य व्यक्ति धैर्य आत्म त्याग और दृढ़ संकल्प से संसार का उच्चतम पद, सम्मान और धन सब कुछ प्राप्त कर सकता है—

साहस एक व्यक्ति
ऐसा आया जो सारे नक्षत्रों की
गति से भी ज्यादा शक्तिशाली था

उसने रणभूमि म
+ +
सत्य जीतेगा
मुझसे लो सत्य, मत डरो ।[38]

भारती जी ने इसमें आधुनिक युग के शाश्वत मूल्यो और समस्याओ को पौराणिक सन्दर्भों द्वारा प्रस्तुत किया है । "आधुनिकता और आधुनिक विचारधाराओ की भूमिका, विघटन और आन्तरिकता की खोज तथा आधुनिकता एव सम सामयिकता पर विचार करते हुए 'अ धायुग' में पुराण कथा और युग बोध के सपात से विकसित सजनात्मक उन्मेष और सम्वेदना की नवीन भावभूमि को प्रस्तुत किया गया है ।"[39] वतमान भौतिकवादी युग में सास्कृतिक मान्यताएँ टूट रही हैं वह इसके माध्यम से सस्कृति के पुनर्स्थापना का सकल्प लेता हुआ प्रतीत होता है । इस दृष्टि से भी प्रियप्रवास का इस पर पूण प्रभाव परिलक्षित होता है ।

अगराज–आधुनिक हिन्दी साहित्य मे जितने भी ग्र थों की रचना हुई है उनमें से अधिकाश ग्र थो म श्रीकृष्ण का मानवीय रूप का उल्लेख प्राप्त होता है । कुछ ऐसे ग्रन्थ हैं जिनमे उनके लौकिक-अलौकिक दोनो रूप विद्यमान हैं । अगराज इसी प्रकार की रचना है । इस पर प्रियप्रवास के साथ कृष्णायन का भी प्रभाव प्रकट होता है । हस्तिनापुर मे मत्री का प्रस्ताव लेकर कृष्ण का आगमन पूण मानवीय है–

दिशा दिशा मे यह ग जने लगा,
पड़ा सुनाई यह कठ कठ मे ।
अहा ! महामानव कृष्ण आ गये,
कहो मनुष्यों जय वासुदेव की ।।[40]

श्रीकृष्ण ने ब्रज मे अनेक एसे काय किय हैं जिससे उद्धव द्वारा यह सदेश दिये जाने पर भी कि कृष्ण मथुरा म विभिन्न समस्याओ म उलझे हुए हैं ब्रजवासी उनके मगल की कामना करते एव उनके दशन की अभिलाषा रखते हैं–

जहाँ रहें श्याम सदा सुखी रहें ।
न भूल जावें निज तात मात को ।
कभी कभी आ मुख मजु को दिखा ।
रहें जिलाते ब्रज प्राणि पु ज को ।।[41]

उपरिलिखित प्रियप्रवास की पक्तिया का अगराज पर प्रभाव स्पष्ट है ।
गोपिका–सियारामशरण जी द्वारा रचित यह चम्पू काव्य सरलता,

सात्विकता और करुणा की भावना से युक्त है। यह गांधीवादी विचारधारा के पोषक हैं। इन सिद्धांतों के आधार पर रचना करने में भले ही कवि की काव्यात्मकता में कमी आयी हो फिर भी राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक पक्ष को लेकर रचना करना, इनकी अपनी विशेषता हैं। गुप्त जी अतीत की सम्पन्नता एवं वर्तमान की विपन्नता से पूर्ण परिचित हैं, इसलिए इनके काव्य में आदि से अंत तक अतीत के प्रति मोह और वर्तमान की दयनीय दशा पर क्षोभ दिखाई देता है। ये हरिऔध जी की भाँति एक ऐसे समाज की स्थापना करना चाहते हैं जो सभी समस्याओं से दूर आदर्श समाज हो। श्रीकृष्ण के चले जाने के कारण ब्रज गोपियाँ जो उनकी अनन्य उपासिका हैं वियोग की व्यथा से अत्यधिक व्याकुल हैं। वे वन कुंजों में इधर उधर इसलिए भ्रमण कर रही हैं क्योंकि इन्हें विश्वास है कि उनका प्रिय अवश्य मिलेगा—

> श्याम सखा आ चुके थे।
> कहाँ किस ओर गये ?
> किस कुंज वन में अकेले वेणु फूँक रहे ?
> कहीं रहें उन्हें खोज लूँगी ही।।[42]

यह आत्मविश्वास प्रियप्रवास में गोपियों को अंत तक बना रहता है। उद्धव द्वारा संदेश लेकर आने पर उनके द्वारा किये गये अनेक साहसी कार्यों का स्मरण करती हैं दुखी होती हैं और फिर उनके कुशल क्षेम को ईश्वर से प्रार्थना करती हैं। इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए गुप्त जी ने पुनः कृष्ण गोपियों के संयोग की नवीन उद्भावना प्रकट की है। यही नहीं वे गीता उपदेश रूप में आदर्श और मानवतावाद की उदघोषणा भी करते हैं—

> स्वस्थ रखना है तुम्हें भवभूत को निश्चिन्त को।
> रहना तुम्हें है यहीं धौ सुरभि पथ पर।
> संचय के साथ साथ त्याग का उपार्जन करो सप्रेम।
> निरमताप जूझना है।
> पक्ष प्रतिपक्ष के समस्त दुर्जनों से
> सभी क्रूरों से विजय सामग्री पाना तब तक।[43]

इसी प्रकार प्रियप्रवास में ब्रजवासियों का स्वयं की रक्षा के लिए कृष्ण सभी का उदबोधित करते हैं। उनका कथन है कि आप सभी वीर हैं, इसी वीरता से आगे बढ़ते रहो यदि अपने साहसी कर्तव्यों में सफल हुए तो सुख भोग करोगे अन्यथा अपने को भस्म करके सुकीर्ति प्राप्त करोगे—

> बढ़ो करो वीर स्व-जाति का भला।
> अपार दोनों विधि लाभ है हमें।

किया स्वकतव्य उबार जा लिया ।
सुकीर्तित पायी यदि भस्म हो गये ।।[44]

गुप्त जी ने श्रीकृष्ण का बाल वणन बडे सयम और सुरुचिपूण ढग से किया है । इनका कृष्ण गोपी प्रेम सात्विक भावो से युक्त मनोहारी है । हमारी सस्कृति का सच्चा इतिहास महाभारत है जो मानव के ज्ञान का कोश है। यह आधुनिक काल के साहित्य को नूतन दष्टि प्रदान करता है । अनेक कवियो ने इसी के कथा अशो द्वारा अपनी रचना को सजा सवाकर कोई न कोई आदश अवश्य प्रस्तुत किया है । वतमान युग के कवियों का जो मूल उद्देश्य आदश मानवता की रक्षा करना एव देश प्रेम, राष्ट्रीयता के सभी आदश जो श्रीकृष्ण द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं, वह महाभारत की देन है । गुप्त जी इस प्रभाव और पुन प्रियप्रवास के प्रभाव स स्वय को वचित नहीं कर सके हैं ।

फेरिमिलिबो–ब्रजभाषा में रचित यह भी चम्पू काव्य है । श्रीकृष्ण मथुरा को छोडकर द्वारिका म निवास करने लगे हैं । एक दिन उ हे ब्रज वासियो राधा और ब्रज मे की गयी लीलाओ का स्मरण हो आया, वे अनेक ब्रज की घटनाओ का स्मरण कर अत्यधिक दुखी हुए । कुछ दिन बाद सूय ग्रहण लगने वाला था, कृष्ण ने इस अवसर पर 'समत पचक' में स्नान करने की योजना बनाकर नारद जी को पुन मिलन का सदेश लेकर ब्रज को भेज दिया गया । वे ब्रज के लोगो स कहते हैं–

सुधि करि तुम्हारि सदेस कह्यो बनवारी ।
है पुन्यकाल रवि ग्रहन चलो नर नारी ।।[45]

यह कृति चू कि पद्य गद्यात्मक है इसलिए इसके गद्य अश पद्य भाग की अपेक्षा सरस एव मनोमुग्धकारी है । गोपियाँ अपने हृदय का भाव व्यक्त करती हुई प्रिय कृष्ण के अपूव सौन्दय और सारे ब्रज मण्डल में उनकी व्याप्ति का सुन्दर रूप प्रस्तुत करती है । अधरात्रि के समय किसी महात्मा द्वारा वेणुवादन करने से ब्रजबालाओ को श्रीकृष्ण का आभास होने लगा । विभिन्न प्राकृतिक दृश्यों में श्रीकृष्ण का रूप दशनीय है–

'नक्षत्र मोरपखा के समान नीले आकाश श्याम रग सो छायापथ रत्नजटित मुरली के सरिस और परेवा को चाँद राधा वियोग सों खिन्न जिनके मुखारविन्द की भाँति प्रतीत ह्वै रह्यो हो । कहाँ साँच ही भगवान ब्रज म बने हैं ? साँच हूँ ब्रज रज में निलीन हैं ब्रजवायु में विलीन हैं ब्रज व्योम में निहित हैं ? सोचि कै नारद के अग शिथिल परन लगे हिया पर-

कन लग्यो और हाथ सो बीना खिसकन लगी। वे एक छिन को अपनो आपो भूलि गयो।"[46]

यह सत्य है कि प्रस्तुत गद्य मे जो भावुकता एव प्रवाह विद्यमान है, वह पद्य की भावभूमि से कम नही है। नारद का सदेश लेकर आना और गोपियो की प्रेम विह्वल दशा देख आत्मविभोर होना, ये सभी घटनाए प्रियप्रवास के समान ही हैं। अन्तर यह है कि प्रियप्रवास मे उद्धव का सदेश योगसाधना करने एव कृष्ण की व्यस्तता के कारण ब्रज न जा पाने का है, परन्तु फेरिमिलिबो मे नारद पुन मिलन का सदेश लेकर आये हैं। गोपियों के अन्तर के सहज उदगार मन को आकृष्ट कर लेने वाले हैं। इस प्रकार आंशिक रूप से प्रियप्रवास का इस पर प्रभाव पडा है।

कृष्णचरित मानस (प्रद्युम्न टुगा)–रामचरितमानस के आधार पर रचित यह अवधी भाषा का प्रबन्धकाव्य है। यह पूर्ण ग्रन्थ सात काण्डों मे विभक्त है जिसमें कृष्ण जन्म मे लेकर युधिष्ठिर के राज्याभिषेक के बाद ब्रजवासियो से मिलन तक की कथा वर्णित है। इसमे श्रीकृष्ण जब गोपियों के विरह म व्यथित होते हैं तो स्वय उद्धव के पास जाकर ज्ञान का सदेश देने एव वहाँ का सदेश लाने का आग्रह करते हैं। ब्रज मे जाकर उद्धव परिस्थितियों को अनुकूल बनाकर उपदेश देते हैं। प्रियप्रवास से प्रभावित राधा कृष्ण की वियोग व्यथा म व्यथित न होकर कर्तव्य मे लीन हो जाती है। यद्यपि कवि ने श्रीकृष्ण के जीवन के विविध पक्षों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है फिर भी सभी घटनाओं को समुचित विकास देने म कवि सफल नही हो सका है।

श्रीकृष्णचरित मानस (श्री कजाशनाथ द्विवेदी 'प्रियदर्शी')–यह ग्रन्थ भी रामचरितमानस की शैली पर रचित श्रीकृष्ण के सम्पूर्ण जीवन का व्याख्याता है। अन्य ग्रन्थो की भाँति इसमे भी वे जीवन के प्रारम्भिक काल से विरोधी तत्वो के विनाश में लगे हैं। वे जीवन के सम्पूर्ण सुखो को दूसरो के दुख निवारण हेतु अर्पित कर देते हैं। गोपियो के प्रति इसमें कृष्ण का अटूट एव अनन्य प्रेम निदर्शित है, परन्तु वासना और कामुकता की इसमें कहा गध नही है। उन्होने उन अत्याचारी एव आततायी दुष्टो का सहार कर पुन सज्जन महापुरुषो को श्री एव समृद्धिवान बनाया है। कवि ने ग्रन्थ के आदि से अन्त तक श्रीकृष्ण को ब्रह्म रूप में स्वीकार किया है। फिर भी आधुनिकता के प्रभाव से वह प्रभावित है। उन राजाओ को जिन्हें जरासध ने अत्याचार पूर्ण नीति से बदी बनाकर रखा है उनकी मुक्ति के लिए मागध भाट-वन्दीजन प्रार्थना कर रहे हैं–

एक दिवस कोउ नूतन आयो। समाद्दार उन गाय बुलायो।
हरि अनुशासन तेहि तह लाए। आइ कृष्ण कह शीश चुकाए।।
पुनि उन निज परिचय बतरायो। वन्दी नृपन दूत गुन गायो।।
निज नपनिन वदी कियो जरासघ दुधय।
बीस सहस उन नरपतिन देहुँ कृष्ण वलि हृप।।[47]

'प्रियप्रवास' म राजा ही नहीं, दीन दुखी, छोटे बडे का भेद न कर सभी के दुखो के निवारण में लग जाते हैं उनके जीवन का मात्र यही लक्ष्य ही रह गया है। इस प्रकार श्री प्रियदर्शी जी आराध्य श्रीकृष्ण को ईश्वर एव परब्रह्म रूप म स्वीकार करते हुए भी आधुनिकता के प्रभाव से वचित नही रह सके हैं। कस के भय से अनेक राजा प्राण बचाकर भाग गये थे। कृष्ण ने उन सबको खोजकर उनका राज्य दिलाया। उ होने अपने पौरुष और शक्ति मे अनेक दुष्ट राक्षसो का सहार करके व्रज ग्राम समृद्धि और गायों की रक्षा की। इसी प्रकार अपन श्रेष्ठ कार्यों द्वारा मनवाछित इच्छा पूरी की–

कस भयन छिपि प्राण बचाये। खोजि खोजि उन नृपन बसाये।
अधक वृष्णि, कुकुर मधु यादव। अरु दाशहि बसे लहि उदभव।
नगर ग्राम, गोधन, धन पूरे। सजातीय इमि सुख रस रूरे।।
राम श्याम बल रक्षित सोहै। सफल मनोरथ उन जिमि जोहै।।[48]

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल मे श्रीकृष्ण चरित्र को लेकर जितने भी ग्रन्थों की रचना हुई है वे सभी अल्पाधिक प्रियप्रवास स प्रभावित हैं। जिन ग्रन्थों का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है उसके अतिरिक्त भी अनेक ग्रन्थ हैं जो कृष्ण चरित्र का लकर रचे गय हैं, उनका भी सक्षिप्त परिचय अप्रासगिक न होगा।

पुरुषोत्तम (तुलसीराम शर्मा)–इस ग्रन्थ का प्रारम्भ श्रीकृष्ण और बलराम के मथुरा गमन स होता है। वहाँ जाकर व कस का वध करत हैं और माता पिता (देवकी वसुदेव) को कारागार से मुक्त करात हैं। कृष्ण क व्रज मे न लौटने पर गोपियो की वियोग व्यथा बढ़ जाती है, वे उद्धव को दूत रूप में भेजकर व्रजवासियो का सान्त्वना दिलाते हैं। इसम मथुरा छोडकर द्वारका जाने रुक्मिणी हरण एव भौमासुर का वध कर उनके यहाँ स्थित सोलह हजार राजकुमारियों का उद्धार आदि कथाओं का विस्तार वर्णन है। यद्यपि इसकी कथा मूल रूप से पौराणिक है फिर भी प्रारम्भ स लेकर उद्धव सन्देश लेकर व्रज जाने तक की कथा प्रियप्रवास क आधार पर प्रस्तुत

की गई है। प्रारम्भिक कथानक की दृष्टि से लगभग दोना ग्रन्थों मे पर्याप्त साम्य है।

मधुपुरी (गयाप्रसाद द्विवेदी)–यह श्रीकृष्ण के जीवन पर आधारित बीस सर्गों का वृहत्काय ग्रन्थ है। इसमे श्रीकृष्ण क आवश्यक रूप सौन्दर्य के साथ उनके सुर पृथ्वी, ब्राह्मण गौ के रक्षक रूप का वणन है। श्रीकृष्ण देवी देवताओ की प्राथना पर अवतार धारण करते हैं। पुन गोपियो के साथ अनेक लीलाएँ करते हुए राक्षसो का सहार करते हैं। इसमे भी उद्धव द्वारा ब्रज मे सदेश लेकर जाने का तथा गोपियो के प्रेम म उनके तन्मय हो जाने की सुन्दर झाकी प्रस्तुत की गई है। युगीन परिस्थितियों एव प्रियप्रवास जसे ग्रन्थो से प्रभावित होकर कवि ने नवीन प्रजातन्त्र शासन की व्यवस्था उग्रसेन के शासनकाल म दी है। यह कवि की मौलिकता एव युग की आवश्यकता है।

भ्रमर दूत (सत्यनारायण 'कविरत्न')–कवि भ्रमरदूत काव्य परम्परा का निर्वाह करते हुए युगानुरूप समसामयिक दृष्टि से वण्य विषय प्रस्तुत करने में सफल है। प्रियप्रवास की भाँति वियोग वात्सल्य की उद्विग्नता का स्वाभाविक चित्र विद्यमान है कवि ने इसमे यशोदा की व्यथा एव ब्रज वासियो के वियोग द्वारा भारत की दुदशा का करुण चित्र प्रस्तुत किया है।

मधुपक (देवीरत्न अवस्थी)–इसमे कृष्ण आदश मानव के रूप मे चित्रित किय गय है, वे लोक सेवी और राष्ट्र प्रेमी है। राधाकृष्ण दोना भारत के महान सष्टा एव वतमान के आदश है। श्रीकृष्ण अनक दुष्टो के सहारक रूप मे प्रस्तुत किय गये हैं। सम्पूण काव्य समसामयिक समस्याओ और जीवन मूल्यो के दश्य प्रस्तुत करने म सफल है।

अन्य कृष्णपरक काव्यो म महाभारत पर आधारित कथ्य का वणन है। उन पर प्रियप्रवास का प्रभाव कथा मात्र का भले ही मान लिया जाय पर वह महाभारत स ही प्रभावित है। इनका नामोल्लेख हम प्रारम्भ मे कर चुके हैं। इनम श्रीकृष्ण का अधिकतर मात्र उल्लेख मिलता है। उसमे महाभारत का युद्ध या उसके अन्य अनक पात्रो को लेकर रचनाए की गई हैं। हमारा लक्ष्य विशेष रूप से *प्रियप्रवास म प्राप्त श्रीकृष्ण के महामानव आदश रूप का प्रभाव अन्य ग्रन्थो पर स्पष्ट करना था। जहाँ तक मेरी* दृष्टि पहुची है–श्रीकृष्ण के उस रूप को उपलब्ध ग्रन्थो म खोजने का प्रयास *किया है। वसे 'मति अति नीच ऊच रुचि आछी' के अनुसार भगवान कृष्ण* के समस्त रूपो का पूण रूप प्रस्तुत करने म कौन समथ हो सका है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य म श्रीकृष्ण का स्वरूप महान राजनीतिज्ञ

और दूरदर्शी रूप में दृश्यगोचर होता है। वे विश्व मानवता की व्यथा के निवारक पृथ्वीतल के शान्ति दूत और लोक कल्याण के लिए अपना सवस्व न्योछावर करने वाले हैं। आधुनिक हिन्दी के कवियों ने पुराणों में प्राप्त कृष्ण चरित्र को नवीन यथार्थवादी रूप मे प्रस्तुत किया है जिसमे युगानुकूल सास्कृतिक जागरण, समाज सुधार एव राजनीतिक उतार चढाव की भावना का वणन है।

प्रियप्रवास' मे श्रीकृष्ण लौकिक रूप म अवतीर्ण होकर अनवरत समाज सुधार और लोक कल्याण म लगे हुए हैं। इसमे आगे बढ़कर मिश्र जी ने कृष्णायन मे भारतीय सस्कृति की महत्ता को स्वीकार करते हुए राष्ट्रीय एकता एव उन्नति के लिए प्रयत्नशील दिखाई पडते है। इसम वे अवतारी ब्रह्म ही नही मानवीय धरातल पर प्रतिष्ठित होकर परहित को सर्वोच्चता प्रदान करते हैं। पुराणो म प्राप्त कृष्ण के वे रूप जो अविश्वसनीय प्रतीत हुए हैं, उन्ह कवि लोक रजन एव लोक मर्यादा की तुलना पर रखकर उसका निवारण कर देता है इस प्रकार मिश्र जी कृष्ण क परम्परागत रूपो को ग्रथ मे स्थान देत हुए आवश्यकतानुसार उसम परिष्कार-विकास और परिमाजन कर लेते हैं। यहा कवि की मौलिकता युगानुकूल है। अत इन्हीं प्रवृत्तियों से उन पर प्रियप्रवास का प्रभाव सिद्ध होता है। 'द्वापर' म नारी जागरण कवि ने विधृता के माध्यम से एव राष्ट्रीय चेतना जागृत की है। दिनकर जी ने महाभारत के ऐसे अश को लेकर रचना की है, जो आज की समस्या को प्रस्तुत करने वाला है, उन्होंने कृष्ण के सदेशों को नवीन जीवन सन्दर्भों चिन्तन, ज्ञान, कर्म, धर्म से जोडकर आदर्श स्थापित किया है।

सेनापति कर्ण काव्य ग्रंथ श्रीकृष्ण क सफल राष्ट्रनायक, मानवता क आदर्श विश्व हितैषी एव लोक रक्षक रूप का व्याख्याता है। इसम मध्य-युगीन कृष्ण को जो गोपी वल्लभ, बासुरीवादक एव रसिक शिरोमणि है, उससे आगे बढ़कर कवि ने उन्ह आत्म त्यागी, कर्तव्यनिष्ठ और जागरूक लोकनायक रूप म प्रतिष्ठित किया है, इसम कृष्ण प्रणय की अपेक्षा त्याग और धर्म का वरण करते हैं यही नहीं वे सफल राजनतिज्ञ भी हैं। मानव-जाति क कल्याण क लिए उन्हें सग सम्बन्धियो को त्यागने म तनिक भी सकोच नहीं लगता—

> पाण्डवो के हित म विरोध बलराम का।
> मैंने किया सारा यदुवंश एव स्वर स।
> कौरवों क पक्ष में हुआ था जो सुधर्मा में।
> फिर भी अटल मैं अवन्त रहा साथ के।
> शांति स्तम्भ भारत स मुझको मिटाना है।[19]

अगराज' मे यद्यपि ईश्वरीय रूप को प्रस्तुत किया गया है, फिर भी बार बार कृष्ण को सामा य पुरुष के रूप म वर्णित किया गया है। इस ग्रथ पर भी आधुनिकता का पूर्ण प्रभाव है। अधा युग का अन्या तर वतमान युग के कण कण क इतिहास का बोध कराता है। इसम आधुनिक युग की विसगतियो जसे–रक्तपात प्रतिशोध कुण्ठा, विकृति, बबरता, विवेक शून्यता द्वन्द्व आदि का सफल चित्रण है। यहाँ श्रीकृष्ण ही ऐसे पात्र हैं जो पूरे ग्रथ के वे द्रबि दु हैं। वे साहस और मानवीय मल्यो के प्रतिष्ठापक हैं–

मेरा दायित्व ही स्थिर रहेगा
हर मानव मन के इस वृत्त मे
जिसके सहार वह
सभी परिस्थितियों का अतिक्रमण करत हुए
नूतन निर्माण करेगा पिछले ध्वशों पर ॥[50]

कनुप्रिया' मे कवि ने श्रीकृष्ण के सम्पूर्ण जीवन का भावात्मक स्तर पर चित्रण किया है इसमें कवि ने प्रेमी और पुरुषोत्तम दोना रूपा को प्रस्तुत कर प्राचीनता और नवीनता का सु दर समन्वय स्थापित किया है। यहाँ कृष्ण अपन विशिष्ट कायकलापा म इतिहास के सजक विश्व प्रमी एव विश्व के कणधार रूप म प्रस्तुत किय गये हैं। यह सत्य है कि भारती जी कनुप्रिया म वष्णव होते हुए भी युगीन नारी पुरुष प्रेम सम्ब धो की स्थापना करते हैं।

नकुल नामक ग्रथ में श्री सियारामशरण गुप्त जी न श्रीकृष्ण के नटनागर, लीला पुरुषोत्तम रूप का चित्रण किया है। इसमे सहज भावा की अभि यक्ति है और कृष्ण के पवित्र चित्र उदघाटित किये गय हैं। 'गोपिका' म भी गुप्त जी न कृष्ण लीला का सुन्दर वर्णन किया है। सर्वेश्वर कृष्ण नित्य वन्दावन धाम म रस केलि करते हैं चन्द्रावली ललिता आदि सखिया लीला मग्न रहती हैं। इसम नये युग के विचारो की उदभावना नही है कथानक की प्रस्तुत म अवश्य नवीनता है।

इस प्रकार हम देखते है कि द्विवेदी युग एव उसके उपरान्त सभी ग्रथा म किसी न किसी दृष्टि से नवीनता अवश्य दृष्टिगोचर होती है। 'प्रियप्रवास' ऐसे युग का महाकाव्य है, जबकि इससे पूव खडी बोली मे वृहत आकार का काई ग्रथ नहीं था। कवि ने अथक प्रयास और अनेक आलोचनाओ को सहन करते हुए तत्सम शब्दो से युक्त खडी बोली को वर्णिक वृत्ता के साँचे मे ढालकर श्रीकृष्ण का वह मानवीय रूप प्रदान किया जो बाद के कवियो का आदर्श मार्ग बना। उसके द्वारा प्रतिष्ठित मा यता अबाध

गति से चल रही है जिससे श्रीकृष्ण का प्राजल रूप प्राप्त हुआ है। इससे लोकमानस में व्याप्त अनेक प्रकार के विभ्रमो को समाप्त करने में अत्यधिक सहायता प्राप्त हुई है। आशा है कि यह मानवता के मूल्यो के समर्थक कवि निश्चित ही भगवान श्रीराम के समान श्रीकृष्ण जी को भी मर्यादा पुरुषोत्तम रूप में जनमानस में प्रतिस्थापित करेंगे।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 आधुनिक हिन्दी कृष्णकाव्य की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ० 196
2 प्रियप्रवास-9/1-11
3 उद्धव शतक पृ० 7
4 वही, पृ० 8
5 प्रियप्रवास 14/71
6 उद्धव शतक-पद 49
7 प्रियप्रवास-13/80 81
8 कृष्णायन-गीताकाण्ड पृ० 503
9 प्रियप्रवास-14/53
10 कृष्णायन-गिरिवरधारी, पृ 18
11 प्रियप्रवास-11/85, 86
12 कृष्णायन-पूजाकाण्ड, पृ० 213
13 वही पृ० 560
14 प्रियप्रवास-11/39
15 कृष्णायन, पृ० 13
16 द्वापर पृ० 24
17 प्रियप्रवास-11/84 85
18 वही 11/86
19 द्वापर पृ० 37
20 वही पृ० 45
21 प्रियप्रवास-17/30
22 कृष्णायन-सप्तम सर्ग, पृ० 141
23 प्रियप्रवास-12/45-51
24 कृष्णायन पृ० 127
25 प्रियप्रवास-14/30
26 वही, 13/78
27 धर्मवीर भारती कनुप्रिया तथा अन्य कृतियाँ पृ० 74
28 कनुप्रिया-पृ० 15
29 प्रियप्रवास-4/17

30 प्रियप्रवास–4/13
31 वही, 12/62
32 कनुप्रिया प० 31
33 नही प० 76
34 प्रियप्रवास–4/16
35 अ धायुग पृ० 119
36 वही, प० 10
37 प्रियप्रवास–11/52
38 अ धायुग प० 24
39 आधुनिक हि दी कृष्ण काव्य की सामाजिक पृष्ठभूमि प० 240
40 अगराज प० 121
41 प्रियप्रवास–11/54
42 गाधिका प० 23
43 वही, प० 230–231
44 प्रियप्रवास–11/87
45 फेरिमिलिबो उद्धत–रसवती सम्पादक डा० प्रमनारायण टण्डन फरवरी–मार्च 1951 प० 221
46 वही प० 30–31
47 श्रीकृष्णचरितमानस श्री प्रियदर्शी जी प० 610–611
48 वही पृ० 500
49 सनापति कण प० लक्ष्मीनारायण मिश्र प० 20)
50 अधायुग धर्मवीर भारती, प० 127

□

सप्तम अध्याय

प्रियप्रवास : उपादेयता-मूल्यांकन

कृष्ण काव्य परम्परा का पोषक प्रियप्रवास आधुनिक युग का प्रथम महाकाव्य है जिसमें श्रीकृष्ण का लोक पावन लौकिक चरित्र वर्णित है। उनके कार्य कलाप सामान्य मानव जीवन के अनुकूल और बौद्धिक है। इसमे कथानक का अधिकांश भाग, जो श्रीकृष्ण गोप, गोपी, नन्द, यशोदा से सम्बन्धित है, का मात्र वर्णन है। प्रियप्रवास मे वर्णित श्रीकृष्ण, राधा एवं अन्य पात्रों पर दृष्टिपात करने से यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि यह भारतीय संस्कृति की पावन झांकी प्रस्तुत करता है। यह तथ्य भी सामने आता है कि विदेशी संस्कृतियों के प्रलयकारी झंझावात किसी भी दशा में इसके अनिष्ट में सक्षम नहीं हो सके। हमारी संस्कृति ऐसे कल्पवृक्ष के सदृश है जिसकी जड़ें पाताल लोक तक पहुँच रही हैं, भले ही इसने आने वाली अगणित संस्कृतियों को अपने में समाविष्ट कर लिया हो।

चूंकि आदिकालीन साहित्य में श्रीकृष्ण एवं राधा के रूप गुण को अलौकिक रूप में चित्रित किया गया जो जन साधारण की क्षमता के परे था। श्रीकृष्ण के घोर लौकिक रूप का रीतिकालीन कवियों ने दर्शन कराया जो समाज के लिए उपयोगी न था। अतः कवि ने तत्कालीन समाज के लिए अत्य तोपयोगी श्रीकृष्ण राधा के रूप गुण का अपने काव्य में वर्णन किया। कृष्ण काव्य परम्परा में इस विकास का अवलोकन किया जा सकता है।

सम्पूर्ण हिन्दी कृष्ण काव्य का उपजीव्य ग्रन्थ भागवतपुराण है जिसमें श्रीकृष्ण के जन्म से लेकर स्वर्गारोहण तक की कथा वर्णित है। इससे पूर्व श्रीकृष्ण का उल्लेख वेद, उपनिषद् और महाभारत में भी प्राप्त होता है। श्रीकृष्ण के अलौकिक ब्रह्म का जो रूप पुराणों मे विकसित हुआ उसकी हिन्दी साहित्य आदिकाल से लेकर आज तक धारा विद्यमान है। संस्कृति, युग एवं धर्म के अनुसार श्रीकृष्ण की मान्यताओं में परिवर्तन आया है परन्तु मूल रूप मे वे युग युग से भारतीय राष्ट्र की धारा मे अनादिकाल से जुड़े हुए है। वैदिक युग में वे मन्त्र द्रष्टा ऋषि हैं। महाभारत काल में महान राजनीतिज्ञ एवं ज्ञान कर्म भक्ति के उपदेष्टा और पुराण काल में उनके पूर्ण

ब्रह्मत्व भावना का विकसित रूप दष्टिगोचर होता है। लौकिक सस्कत, पालि प्राकृत और अपभ्र श साहित्य म विशेष रूप से श्रीकष्ण ब्रह्म रूप में प्रतिष्ठित है साथ ही इसके श्रृगारी रूप का भी विकास हुआ है। ललित कलाओ के अन्तगत प्राप्त प्राचीन मूर्तिया के भग्नावशेषो से श्रीकृष्ण की प्राचीनता और पुराणा म प्रचलित लीलाओ का स्पष्ट सकेत मिलता है।

हिन्दी साहित्य के आदिकाल म पृथ्वीराज रासो म विष्णु के विविध अवतारों राधा कृष्ण के प्रेम सम्बन्धो एव उनके श्रृगारी रूपो का परम्परा गत विवेचन है। भक्तिकाल म भक्ति की अजस्र धारा प्रवाहित है, जिसमे राम कष्ण दोना का परब्रह्म रूप भारतीय जनमानस म पूणरूपेण समाहित हो गया है। राम के आदश रूप की तुलसी ने जो प्रतिष्ठा रामचरितमानस एव अन्य कतियों के माध्यम से की उस पर दूसरे कवियों का और कुछ लिखने का साहस न हुआ, परन्तु जो कष्ण ब्रज की समस्त गोप ग्वालो के साथ गोचारण करता था, वन म ही गायें दुहकर दूध स्वय तथा अन्य सखाओ को पिलाता था, लोगो के घरो म माखन की चोरी करता था गोपियो के साथ विविध क्रीडाए एव वेणु वादन करके सबको रिझाता था और अपने विराट् रूप से अलौकिक कत्यो द्वारा सबको चमत्कत करता था इस प्रकार स वह मानव हृदय का माधुय युक्त प्रिय बना कि जन जन भावाभिभूत हो उठा। भक्तिकाल से पूव अनेक सम्प्रदाय चल पड थे। इन सम्प्रदायों मे कुछ ने राधा की आराधना (परम सखा मानकर) की और किसी ने कष्ण की। कुछ आचार्यों ने तो राधा की महत्ता का स्वीकार करते हुए यहाँ तक कह डाला कि राधा के बिना श्रीकष्ण का अस्तित्व ही नही है। श्रीकृष्ण द्वारा की गयी लीलाओ, बकिम, नत्र, मधुर मुस्कान अग प्रत्यगो के सचालन और वणुवादन से धीरे धीरे उनका ब्रह्म रूप विलीन हो चला और रीति कालीन साहित्य म वे पूण लौकिक नायक और उनकी आह्लादिनी शक्ति राधा लौकिक नायिका रूप म प्रस्तुत की गयी। हिन्दी के रीतिकालीन साहित्य म निश्चित रूप से श्रृगारी प्रवृत्ति के कारण उनके अलौकिक रूप का ह्रास हुआ, फिर भी लोक मानस म उनकी प्रतिष्ठा अवतारी रूप म विद्यमान रही।

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के आरम्भ म भारत दु जी एव उनके सहयोगियो न उनके लौकिक अलौकिक दोना रूपो को महत्व दिया है। वे श्रृगारकालीन परम्परा के मोह का परित्याग नही कर सके है परन्तु परतन्त्र भारत की अगणित समस्याओं न उन्हें झकझोरा। अस्तु उन्होंने कष्टानुभव करत हुये ईश्वर कृष्ण स अत्याचारी शासको से मुक्ति पाने की

प्राप्त की है। इस युग के साहित्यिक क्षेत्र म विविध पक्षों म चेतना एव जागति दृष्टिगोचर होती है। सामाजिक आर्थिक और धार्मिक रूप स सत्रस्त मानवता स्वतत्रता के लिए तडप रही थी। साहित्य के माध्यम स इस युग म कवियों न नवीन मान्यताओं की स्थापना करने का प्रयास कर जन भावना को रूढ़िया से छुटकारा पान के लिए प्रेरित किया है। रीति कालीन साहित्य मे वर्णित श्रीकृष्ण देश विदेश की आलोचना क पात्र बन गये। बौद्धिक युग के विकास के साथ ईश्वर को तर्क की कसौटी पर देखा जाने लगा।

हरिऔध जी का सस्कार से कृष्ण की भक्ति मिली थी। उन्होंने उनक ब्रह्म रूप को स्वीकार करते हुए अनक रचनायें भी की थीं, परन्तु उन्हें वत मान युग के आराध्य देव श्रीकृष्ण की आलोचना सह्य न थी। दूसरी बात यह थी कि आदश मानवता की स्थापना करने के लिए उन्होंने उनके अलौकिक और अति मानवीय रूप का इस रूप म प्रस्तुत किये है कि वे देश के वतमान सभी समस्याओं स पूर्णरूपण सम्बद्ध हैं और उनके निवारण मे सलग्न हैं। वे एक राष्ट्र नेता हैं जो सम्पूर्ण मानवता को एकता के सूत्र म आबद्ध करन के लिये तत्पर हैं।

हरिऔध जी ने प्रियप्रवास की रचना उन परिस्थितिया म की है, जब द्विवेदी जी समाज सुधार और नव चेतना का उद्घोष कर चुके थ। अत इस प्रभाव से वह वचित न रह सके। यह ग्रन्थ यद्यपि पौराणिक कथानक पर आधारित है, फिर भी नवीन विचारधारा का इस पर व्यापक प्रभाव है। राधा कृष्ण जो एक दूसरे के अनन्य प्रेमी हैं युगीन प्रभाव स प्रभावित उनका व्यक्तिगत प्रेम विश्व प्रेम म परिणत हो जाता है।

हरिऔध जी के अन्त करण म नारी के प्रति उदात्त प्रेम और श्रद्धा है। उन्होंने प्रियप्रवास म राधा का जो चरित्र अंकित किया है, वह केवल भारत के लिए ही नहीं विश्व नारी समाज के लिये आदश है। वे श्रीकृष्ण का स देश पाकर आजन्म कौमार व्रत धारण किये हुए लोक सेवा और विश्व सवा का मत्र लेकर उसी पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करती हैं। यह त्याग और बलिदान राधा और कृष्ण के अनन्य प्रेम का परिणाम है। कवि न इसम जिस प्रेम की सृष्टि की है, उसम प्रमिया के प्रणय व्यापारो का कोई विशेष मूल्य नहीं है। इसमे प्रेमी राष्ट्र और समाज क समक्ष अपन सुन्दरतम सुखद जीवन को अर्पित कर देता है। वास्तव में सच्चा प्रम विश्व प्रेम का सदेश सुनाता है उसकी चरम परिणति त्याग म है भोग म नहीं। हरिऔध जी की यही परिकल्पना है।

प्रियप्रवास' आधुनिक भारत का यथार्थ इतिहास प्रस्तुत करता है। इसकी रचना उस समय हुई थी जब भारत के जन मानस में स्वतन्त्रता के लिए विचार जागृत हो उठे थे। अनेक समाज सेवी संस्थाएँ सक्रिय होकर भारतीय संस्कृति के प्रति आस्था एवं विश्वास दिलाने तथा सभी क्षेत्रों में नवीन जागृति का संदेश सुना रही थी। ऐसी संस्थाओं और महावीर प्रसाद द्विवेदी के साहित्यिक आंदोलन ने अन्य रचनाकारों को जाति प्रेम अहिंसा, चरित्र निर्माण अछूतोद्धार आदि विषयों को लेकर रचना करने की प्रेरणा दी। इन सभी का स्पष्ट अस्पष्ट प्रभाव प्रियप्रवास पर निश्चित रूप से पड़ा है। उससे भी बड़ी बात यह है कि इसमें नैतिक मूल्यों पर विशेष बल दिया गया है। इसके अंतर्गत लोक सेवा और परोपकार से बढ़कर कोई दूसरा उपाय नहीं है—

भू में सदा मनुज है बहु मान पाता।
राज्याधिकार अथवा धन द्रव्य द्वारा।
होता परन्तु वह पूजित विश्व में है।
निस्वार्थ भूत हित औ कर लोक सेवा।

प्रियप्रवास में 'जाति' का व्यापक अर्थ में प्रयोग है। इसका तात्पर्य वर्ग विशेष से नहीं मानव जाति से है जिसका अनेक स्थलों पर कवि ने प्रयोग किया है। उसने जाति रक्षा को ही विश्व का महान् धर्म घोषित किया है—

उबारना संकट से स्वजाति का।
मनुष्य का सर्व प्रधान धर्म है।

इस प्रकार इसमें देशोद्धार, लोक मंगल और अपकारियों के विनाश करने का प्रबल समर्थन किया गया है। कवि गांधीजी के अहिंसा से प्रभावित अवश्य है, परन्तु दुष्टों के नाश एवं उनके वध को वह श्रेयस्कर समझता है।

हरिऔध जी धर्म के प्रति पूर्ण निष्ठावान हैं। चूंकि धर्म में देश, काल एवं परिस्थिति के अनुसार मानव कल्याण की भावना निहित होती है इसलिए प्रत्येक साहित्य और समाज में इसका महत्व और उपयोगिता है। भारतीय संस्कृति में आदिकाल से लेकर वर्तमान समय तक अनेक उतार चढ़ाव के साथ ब्रह्म विष्णु राम कृष्ण एवं अन्य अवतारों की पूजा होती रही, फिर भी गंगा की पावन धारा के समान धर्म का रूप पवित्र ही बना रहा। आधुनिक काल में पाश्चात्य आलोचकों ने भारतीय विचारकों एवं साहित्यकारों को नवीन दृष्टि प्रदान की।

हरिऔध जी ने यह स्वीकार किया कि काल पाकर मेरी दृष्टि व्यापक हुई, मैं स्वयं सोचने विचारने और शास्त्र के सिद्धान्तों का मनन करने लगा। उसी के फलस्वरूप मेरे पश्चात्वर्ती और आधुनिक काव्य हैं। भगवान कृष्ण पर अब भी मुझको श्रद्धा है किन्तु वह श्रद्धा अब संकीर्णता, एक देशीयता और अकमण्य दोष दूषित नहीं है। ईश्वर एकदेशीय नहीं, वह सर्वव्यापक और अपरिच्छिन्न है, उसकी सत्ता सर्वत्र वर्तमान है प्राणिमात्र में उसका विकास है। मानवता का त्यागकर ईश्वर की चरितार्थता नहीं होती। अतएव मानवता का निदर्शन ही आत्मोन्नति का प्रबलतम साधन है।[1]

उनके विचारों और प्रियप्रवास का अध्ययन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि की ईश्वर के सम्बन्ध में मान्यता भक्त हृदय का नहीं बौद्धिक है। इनके कृष्ण साक्षात परब्रह्म न होकर मानवोचित गुणों से युक्त और इसी समाज में रमे हैं। कृष्ण जीवन की जितनी भी घटनाओं का प्रियप्रवास मे वर्णन है, वे सब पुराणों पर आधारित हैं किन्तु उनका रूप लौकिक ही है चाहे दावानल प्रसंग हो या गोवर्धन धारण। राधा कृष्ण के प्रेम वर्णन मे नवीनता का आश्रय लेने पर भी शास्त्रीय मर्यादा का निर्वाह है।

भागवत पुराण और रामचरितमानस में प्रतिपादित 'नवधा भक्ति' को भी कवि ने मौलिक रूप मे प्रस्तुत किया है। उन्होंने ईश्वर के श्रवण कीर्तन वन्दन, दास्य, स्मरण, आत्मनिवेदन, अर्चन, सख्य और पाद सेवन को दीन दुखियों के हित नानाजन देश प्रेमी और सद्वृत्तियों की सेवा, परोपकार विधवा अनाथ अन्य दुखी व्यक्ति के दुख का निवारण विवादों का सुलझाना, मथुरा में शान्ति स्थापित करना, समाज में सबको समता का स्तर देना आदि इसी प्रकार के कार्यों को नवधाभक्ति में स्थान दिया है। प्रियप्रवास का विभिन्न दृष्टियों से आंकलन करने पर उसके महान सदेशक मानवता के प्रति आस्थावान् रूप का परिचय मिलता है। इसमें राधा वियोग की दशा में यथेष्ट चित्रित की गयी हैं। वह प्रिय के गुण कथन प्रतीक्षा और उनके संदेश सुनने के लिए उत्सुक दिखाई पड़ती हैं। उनमें विरहजन्य गहनता विद्यमान है। उनका वियोग संतप्त हृदय अश्रु से प्रक्षालित होकर इतना उदार बन जाता है कि वह सजग होकर परमार्थी हो जाती हैं। वे रोगी विधवाओं, दीनों की सेवा के साथ पशु पक्षियों तक का विशेष ध्यान रखती हैं। कवि ने वियोग की पीड़ा से आकुल-व्याकुल राधा का मौलिक रूप में प्रस्तुत किया है, क्योंकि वे उदार होकर यहाँ तक कहती है– प्यारे जीवें जगहित करें गेह चाहे न आवें।'

यशोदा के वात्सल्य म मात हृदय का स्वाभाविक सयोग वियोगात्मक दृश्य अकित किया गया है। वात्सल्य का यह रूप आधुनिक हिन्दी साहित्य मे विशिष्ट है।

हरिऔध जी न प्रकृति के सजीव रूपा की जा झांकी प्रस्तुत की है, वह पूववर्ती साहित्य म दुलभ है। इससे पूव का य म प्रकृति क उद्दीपन रूप का ही चित्रण हाता था। आधनिक यु। म विभिन्न रूपा म प्रकृति मार्मिकता क साथ प्रयुक्त हुई है। यह आलम्बा उद्दीपन अलकरण, मानवी करण, चेतन अचेतन सुकुमार भयानक आद रूपो म अपनी रमणीयता प्रतिपादित करती है। इसम प्रकृति को मानव जीवन से सन्निकट लान का सफल प्रयास हुआ है। इसलिए वह व्यक्ति के सुखात्मक स्थिति म प्रफुल्लता का आभास करती है और दुखात्मक क्षणा म रोती हुई दुख या विषाद प्रकट करती है। कवि ने प्रकृति वणन मे देश काल स्थान का विशेष ध्यान रखा है। वणनात्मक प्रणाली क माध्यम से प्रकृति के रूपो का चित्रण करने क कारण पाठका के हृदय का कवि प्रभावित नही कर सका है। ऐसा जान पडता है कि कवि चमत्कार प्रदशन म अधिक प्रवत्त है। इस प्रकार प्रकृति क विविध रूपो का प्रियप्रवास म चित्रण होने क बाद भी सहजता भावुकता और स्वाभाविकता नही आ पायी है।

प्रियप्रवास एक सफल महाका य है इसलिए इसमे नाटकीय दृश्य विधान, सुसम्बद्ध और सुसगठित है। शुद्ध सस्कृतनिष्ठ खडी बोली म होन क बाद भी भावाभिव्यक्ति की कमी नही है। साथ ही लाकाक्ति और मुहावरा के द्वारा भाषा स्वाभाविक और बोधगम्य बन पडी है। प्राचीन और नवीन सभी अलकारो स अलकृत भाषा रोचकता की अभिवद्धि करन वाली है। शब्द शक्ति एव गुणा क प्रयाग स भावा का सुन्दर अभि यक्ति और कथन मे प्रभावोत्पादकता आ गयी ह। महाकाव्य हान क नाते अगीरस रूप म विप्रलम्भ शृगार का प्रयोग हुआ है, पर तु यथास्थान दूसरे रसा का भी स्वाभाविक प्रयाग हुआ है। देश एव कालगत परिस्थितियो की प्रस्तुति म नवीनता आ गयी। हरिऔध जी न वणिक वत्ता म शुद्ध सस्कृत पदावली क माध्यम स रचना करक हिन्दी साहित्य का एक नवीन शली प्रदान की है।

अतएव हम कह सकते हैं कि प्रियप्रवास कथावस्तु चरित्र चित्रण, भाव एव कला सभी दृष्टिया से आधुनिक हिन्दी साहित्य का प्रथम सफल महाकाव्य है। कला के विभिन्न पक्षा पर विचार करने पर कहा कहा भाषा

एव भावा के वभव मे यूनता आयी है परन्तु प्रथम महाकाव्य होने के नाते वह विशिष्ट है। यह ग्र थ मानव जीवन की सुख समद्धि, शाति, सज्जनता आदि के आदर्शों की स्थापना में सफल है। यह चाहे आधुनिक युग की नवीन स्फूर्ति जागति के लिए या सघषमयी मानवता को सुविधा दिलाने के लिए या पथ भ्रष्ट मानव का समुचित माग दिखाने के लिए निर्मित हो, सभी दष्टिया से इसकी उपयोगिता है। वास्तव म हरिऔध जी की दष्टि मानव जीवन का स माग पर लाने की थी। इसी उद्देश्य की पूर्ति क लिए उन्होंने मवप्रथम श्रीकृष्ण और राधा के चरित्र मे लोक हित, मानव क याण दीन हीन सेवा आदि महत कतव्या की प्रतिष्ठा की है। यही कवि का चरम उद्दश्य है। कवि के यह भाव किसी काल या युग विशेष क लिए नही, अपितु चिर तन भाव हैं, ये मानव सष्टि के लिए सदैव अनुकरणीय रहेंगे।

निष्कष रूप म यह कहा जा सकता है कि प्रियप्रवास' अतीतकाल से चली आ रही कृष्ण काव्य परम्परा श्रृखला की सुन्ढ कडी है। जसाकि ऊपर वणित है कि काल क्रमानुसार कृष्ण एव उनके रूपा में कुछ न कुछ परिवतन आता रहा है, पर तु उनकी जो मूल भावना है, उसका कभी भी ह्रास नहीं हुआ। वैदिक काल से लेकर वतमान युग तक कृष्ण की महत्ता विद्यमान है। मत्र दष्टा ऋषि और गीता के उपदेष्टा भावुक भक्तो की पुकार पर रीझकर छछिया भर छाछ पर नत्य करने लगते हैं।

गापिया क मनमाहन त्रिभगी रूप स सभी को अपने वश म करने वाले कृष्ण लौकिक नायक रूप मे अनक नायिकाआ के साथ अभिसार करने वाले हैं वही कृष्ण पुन आदश मानवता की स्थापना के लिए लोकहित, राष्ट्रहित और विश्व हित के लिए प्राणा का भी योछावर करने को तत्पर रहते हैं।

कवि ने बडे कौशल स श्रीकृष्ण के आदश रूप की पुन स्थापना करक कथा वस्तु को मौलिकता प्रदान की है। आधुनिक सन्दर्भों से प्रभावित होकर राधा को नारी जाति के आदश रूप म प्रतिष्ठित किया है। यही नहीं श्रीकृष्ण के जीवन स सम्बन्धित जितनी भी घटनाओं का इसमें प्रस्तुत किया गया है उसका बाह्य रूप लौकिक भल ही हो, अ तराल मे अलौकिकता झलकती है। पात्र क चरित्र चित्रण, भाषा भाव सभी दोना म प्रियप्रवास की मौलिकता है। आधुनिक युग म कृष्ण के चरित्र एव व्यक्तित्व को नयी दृष्टि स दखन का प्रयास हरिऔध जी का यह सफल प्रयास है

जिससे श्रीकृष्ण उन्नत्त रूप प्राप्त कर जनमानस के लिए अनुरजनीय एव अनुकरणीय हो गये । मानव ने यह अनुभव किया कि उनका अनुगमन करते हुए व्यक्ति अपना परिवार का राष्ट्र का एव विश्व का कल्याण कर सकता है ।

सदर्भ ग्रन्थ

1 महाकवि हरिऔध और प्रियप्रवास–देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' पृ० 152

सहायक ग्रन्थ-सूची

सस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्र श ग्रन्थ

1 अथर्ववेद

2 अष्टाध्यायी — पाणिनि

3 उत्तरपुराण

4 ऋग्वेद

5 ऋग्वेद सहिता

6 कौशीतकी ब्राह्मण

7 कृष्णोपनिषद

8 काव्य प्रकाश — मम्मट

9 काव्यादर्श — दण्डी

10 काव्यालकार — भामह

11 गाहासतसई

12 गोपथ ब्राह्मण

13 गोपाल तापिनी उपनिषद

14 जातक—रोमन अनुवाद

15 जातक—हिन्दी अनुवाद

16 छान्दोग्योपनिषद

17 तैत्तरीयारण्यक

18 तैत्तरीयब्राह्मण

19 पद्म पुराण

20 पवनदूतम — महाकवि धोयी

21 प्राकृत पैंगलम

22 ब्रह्मवैवर्त पुराण

23 बुद्ध चरित्र — अश्वघोष

24 भागवत—दशम स्कन्ध

25 मनुस्मृति

26 महानारायणोपनिषद

27 महाभारत

28	मत्स्यपुराण	
29	महाभाष्य	पतजलि
30	मघदूत	कालिदास
31	यजुर्वेद	
32	राधोपनिषद (कल्याण उपनिषद अक)	
33	रामायण	वाल्मीकि
34	लिगपुराण	
35	वामनपुराण	
36	शतपथ ब्राह्मण	
37	शिवपुराण	
38	सरस्वती कण्ठाभरण	भोजराज
39	सानचन्द जातक	
40	हरिवश पुराण	
41	श्रीमदभगवतगीता	

हिन्दी ग्रन्थ

अकबरी दरबार के हिन्दी कवि	डॉ० सरयूप्रसाद अग्रवाल
अयोध्याप्रसाद सिंह उपाध्याय प्रियप्रवास	वेद प्रकाश शास्त्री
अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय	डॉ० दीनदयालु गुप्त
अपभ्रंश भाषा और साहित्य	डॉ० देवेन्द्र कुमार जैन
अपभ्रंश साहित्य	डॉ० हरिवंश कोछड़
आधुनिक ब्रजभाषा काव्य	डॉ० जगदीश वाजपेयी
आधुनिक कृष्णकाव्य में पौराणिक आख्यान	डॉ० रामशरण गौड़
आधुनिक प्रतिनिधि हिन्दी महाकाव्य	देवीप्रसाद गुप्त
आधुनिक हिन्दी काव्य में भक्ति	विश्वम्भर दयाल अवस्थी
आधुनिक हिन्दी कृष्णकाव्य की सामाजिक पृष्ठभूमि	प्रभात दूबे
आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का शिल्प विधान	श्यामकिशोर
आधुनिक काव्यधारा	डॉ० केसरीनारायण शुक्ल
आधुनिक हिन्दी काव्य में छन्द योजना	डॉ० पुत्तूलाल शुक्ल
आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों में पाश्चात्य दर्शन	
आधुनिक हिन्दी काव्य में वात्सल्य रस	श्रीनिवास शर्मा
आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों में युग चेतना	विनोद धाम
आधुनिक हिन्दी काव्य में सिद्धान्त और समीक्षा	विश्वम्भरनाथ उपाध्याय

आधुनिक हि दी काव्य म अप्रस्तुत विधान — डा० नरे द्र मोहन
कनुप्रिया — डा० धमवीर भारती
कल्पना और छायावाद — डॉ० केदार सिंह
कविता म प्रकृति चित्रण — डा० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल
कविप्रिया — केशवदास
कविसम्राट हरिऔध और उनकी कला कृतियाँ — प्रो० द्वारका प्रसाद
कबीर ग्र थावली — कबीरदास
कामायनी — जयशकर प्रसाद
कामायनी दिग्दशन — डा० केदारनाथ
का य मे बिम्ब — डा० नगे द्र
काव्य म बिम्ब और छायावाद — डा० सुरे द्र माथुर
काव्यशास्त्र — डॉ० भगीरथ मिश्र
कृष्ण का य और सूर — डा० प्रेमशकर
कृष्णायन — प० द्वारिका प्रसाद मिश्र
कृष्णकाव्य की परम्परा — श्री सत्यनारायण पाण्डे
कृष्ण गीतावली — तुलसीदास
कृष्ण चरित्र — बकिम च द्र चट्टोपाध्याय
कृष्ण भक्ति लीला की पष्ठभूमि — डा० गिरधारी लाल
कृष्ण भक्ति का य — डा० जगदीश गुप्त
कृष्ण भक्ति का य म सखीभाव — डा० शरण बिहारी स्वामी
खडी बोली का य म अभिव्यजना — आशा गुप्ता
खडी बोली क गौरव ग्र थ — विश्वम्भरनाथ मानव
घनान द ग्र थावली — स०—आचाय विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
च द्रावली नाटिका — भारते दु हरिश्च द्र
चि तामणि—भाग—1 2 — आचाय रामच द्र शुक्ल
छीतस्वामी पद सग्रह — डा० दीनदयालु गुप्त
जायसी ग्र थावली — स०—आचाय रामच द्र शुक्ल
जायसी की बिम्बयोजना — डा० सुधा सक्सेना
जन साहित्य का इतिहास — प० नाथूराम प्रेमी
तुलसी का गवषणात्मक अध्ययन — डा० राजकुमार पाण्डे

लखी साहित्य म प्रकृति चित्रण — डॉ० विजय प्रकाश मिश्र
ापर — मैथिलीशरण गुप्त
ारका लीलापरक हिन्दी
ष्ण काव्य — डॉ० सुधा चतुर्वेदी
द्ववेदी और हिन्दी नव जागरण — रामविलास शर्मा
द्ववेदी युग का हिन्दी काव्य — रामसकलराय शर्मा
द्ववेदी युगीन काव्य — पूनमचन्द्र तिवारी
द्ववेदी युगीन साहित्य समीक्षा — सकटा प्रसाद मिश्र
ो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता
धर्मवीर भारती कनुप्रिया तथा
अन्य कृतियाँ — डॉ० ब्रजमोहन शर्मा
नन्ददास ग्रंथावली — स० ब्रजरत्न दास
निबन्ध रत्नावली — रामचन्द्र वर्मा
निम्बार्क सम्प्रदाय और उसके
कृष्ण भक्त हिन्दी कवि — डा० नारायणदत्त शर्मा
पद्मावत — जायसी
पद्मावत का काव्य सौन्दर्य — प्रा० शिवनन्दन सहाय
परमानन्द दास काव्य संग्रह — डा० दीनदयालु गुप्त
परवर्ती हिन्दी कृष्ण भक्ति
काव्य — डा० राजेन्द्र कुमार
पृथ्वीराज रासो — स०–मोहनलाल विश्वलाल पाण्डे
पोद्दार अभिनंदन ग्रंथ — डॉ० ब्रजेश्वर वर्मा
प्रकृतिवाद पर्यालोचन — डॉ० अज्ञेय
प्रियप्रवास दर्शन — लीलाधर पर्वतीय
प्रियप्रवास म काव्य, संस्कृति
और दर्शन — डा० द्वारका प्रसाद सक्सेना
प्रियप्रवास परिशीलन — पुरुषोत्तम लाल
पालि साहित्य का इतिहास — डॉ० भरतसिंह उपाध्याय
प्राकृत भाषा और साहित्य
का आलोचनात्मक इतिहास — डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री
प्राकृत साहित्य का इतिहास — डॉ० जगदीशचन्द्र जैन
बीसलदेव रासो — नरपति नाल्ह

आधुनिक हि दी काव्य म अप्रस्तुत विधान   डा० नरेन्द्र मोहन
कनुप्रिया   डा० धमवीर भारती
कल्पना और छायावाद   डॉ० केदार सिंह
कविता म प्रकृति चित्रण   डा० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल
कविप्रिया   केशवदास
कविसम्राट हरिऔध और उनकी कला कृतियाँ   प्रा० द्वारका प्रसाद
कबीर ग्र थावली   कबीरदास
कामायनी   जयशकर प्रसाद
कामायनी दिग्दशन   डा० केदारनाथ
काव्य म बिम्ब   डा० नगेन्द्र
काव्य म बिम्ब और छायावाद   डा० सुरेन्द्र माथुर
का-यशास्त्र   डा० भगीरथ मिश्र
कृष्ण का०य और सूर   डा० प्रेमशकर
कृष्णायन   प० द्वारिका प्रसाद मिश्र
कृष्णका-य की परम्परा   श्री सत्यनारायण पाण्डे
कृष्ण गीतावली   तुलसीदास
कृष्ण चरित्र   बकिम च द्र चट्टोपाध्याय
कृष्ण भक्ति लीला की पष्ठभूमि   डा० गिरधारी लाल
कृष्ण भक्ति का-य   डॉ० जगदीश गुप्त
कृष्ण भक्ति का०य म सखीभाव   डा० शरण बिहारी स्वामी
खडी बोली का-य मे अभिव्यजना   आशा गुप्ता
खडी बोली के गौरव ग्र थ   विश्वम्भरनाथ मानव
घनान द ग्र थावली   स०—आचाय विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
च द्रावली नाटिका   भारते दु हरिश्चन्द्र
चि तामणि—भाग—1 2   आचाय रामच द्र शुक्ल
छीतस्वामी पद सग्रह   डॉ० दीनदयालु गुप्त
जायसी ग्र थावली   स०—आचाय रामच द्र शुक्ल
जायसी की बिम्बयोजना   डा० सुधा सक्सेना
जैन साहित्य का इतिहास   प० नाथूराम प्रेमी
तुलसी का गवेषणात्मक अध्ययन   डा० राजकुमार पाण्डे

ग्रंथ	लेखक
तुलसी साहित्य म प्रकृति चित्रण	डॉ० विजय प्रकाश मिश्र
द्वापर	मैथिलीशरण गुप्त
द्वारका लीलापरक हि दी कृष्ण काव्य	डॉ० सुधा चतुर्वेदी
द्विवदी और हि दी नव जागरण	रामविलास शर्मा
द्विवदी युग का हि दी काव्य	रामसकलराय शर्मा
द्विवदी युगीन का य	पूनमच द्र तिवारी
द्विवदी युगीन साहित्य समीक्षा	सकटा प्रसाद मिश्र
दो सौ बावन वष्णवन की वार्ता	
धमवीर भारती कनुप्रिया तथा अ य कृतियाँ	डॉ० ब्रजमोहन शर्मा
न ददास ग्रथावली	स० ब्रजरत्न दास
निबन्ध रत्नावली	रामच द्र वर्मा
निम्बाक सम्प्रदाय और उसके कृष्ण भक्त हि दी कवि	डॉ० नारायणदत्त शर्मा
पद्मावत	जायसी
पद्मावत का काव्य सौ दय	प्रा० शिवन दन सहाय
परमान द दास का य सग्रह	डा० दीनदयालु गुप्त
परवर्ती हि दी कृष्ण भक्ति काव्य	डॉ० राजे द्र कुमार
पथ्वीराज रासो	स०—मोहनलाल विश्वलाल पाण्डे
पोद्दार अभिनदन ग्रथ	डॉ० व्रजेश्वर वर्मा
प्रकनिवाद पर्यालोचन	डॉ० अज्ञेय
प्रियप्रवास दशन	लीलाधर पवतीय
प्रियप्रवास म काव्य, सस्कृति और दशन	डा० द्वारका प्रसाद सक्सेना
प्रियप्रवास परिशीलन	पुरुषोत्तम लाल
पालि साहित्य का इतिहास	डा० भरतसिंह उपाध्याय
प्राकृत भाषा और साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	डा० नमिच द्र शास्त्री
प्राकृत साहित्य का इतिहास	डॉ० जगदीशच द्र जन
बीसलदेव रासो	नरपति नाल्ह

बिहारी सतसई	कविवर बिहारी
ब्रज का इतिहास	श्रीकृष्णदत्त वाजपेयी
ब्रज भाषा के कृष्ण काव्य में माधुर्य भक्ति	डा० रूपनारायण
ब्रज भाषा के कृष्ण भक्तिकाव्य में अभिव्यंजना शिल्प	डॉ० सावित्री सिन्हा
ब्रज माधुरी	वियोगी हरि
भक्तमाल	नाभादास
भक्ति आन्दोलन का अध्ययन	डॉ० रतिभानु सिंह नाहर
भक्ति का विकास	डा० मुंशीराम शर्मा
भक्तिकाव्य के मूल स्रोत	दुर्गाशंकर मिश्र
भ्रमर गीत	नन्ददास
भागवत सम्प्रदाय	बलदेव उपाध्याय
भारतीय मूर्तिकला	रामकृष्ण दास
भारतीय वाङ्मय में श्रीराधा	पं० बलदेव प्रसाद मिश्र
भारतीय साधना और सूरसाहित्य	डा० मुंशीराम शर्मा
भारतेन्दु ग्रंथावली	प्रकाशक–नागरी प्रचारिणी काशी
भारतेन्दु साहित्य	श्री गोपाल सिंह चौहान
मध्यकालीन कृष्ण काव्य	डा० कृष्णदेव झारी
मध्यकालीन धर्म साधना	डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी
मध्ययुगीन कृष्ण भक्ति परम्परा और लोक संस्कृति	रामेश्वर दयाल
मध्यकालीन हिन्दी कृष्ण काव्य में रूप सौन्दर्य	पुरुषोत्तमदास अग्रवाल
मध्ययुगीन साहित्य का लोकतात्त्विक अध्ययन	डा० सत्येन्द्र
मध्यकालीन साहित्य में अवतारवाद	डा० कपिलदेव पाण्डे
महाकवि हरिऔध	श्री गिरिजादत्त शुक्ल
महाकवि हरिऔध और प्रियप्रवास	देवेन्द्र शर्मा
महाकवि देव	डा० भोलानाथ तिवारी

महाकवि हरिऔध का प्रियप्रवास	डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी
महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग	डॉ० उदयभानु सिंह
महाभारत का हिन्दी प्रबन्ध काव्यों पर प्रभाव	डॉ० विनय
मिश्र बन्धु विनोद	मिश्र बन्धु
मीरा जीवनी और काव्य	महावीर सिंह गहलोत
मीरा पदावली	विष्णु कुमारी
रसराज	मतिराम
रसिक प्रिया	केशवदास
राधा का क्रम विकास	डा० शशिभूषणदास गुप्त
राधा वल्लभ सम्प्रदाय– सिद्धान्त और साहित्य	डा० विजयेन्द्र स्नातक
रास पंचाध्यायी	नन्ददास
रामचरितमानस	तुलसीदास
रीतिकालीन हिन्दी कविता	रामचन्द्र तिवारी
वाङ्मय विमर्श	आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
विद्यापति	डॉ जयनाथ
वियोगी हरि	प्र० मा० सा०
विश्राम सागर	नारायण प्रसाद मिश्र
विश्राम सागर	रघुनाथ राम सनेही
विश्राम सागर	श्रीलाल उपाध्याय
शुद्धाद्वैत–मार्तण्ड	श्री गिरधर जी
साकेत	मैथिलीशरण गुप्त
सुदामा चरित्र	नरोत्तमदास
स्फुट वाणी	हितहरिवंश
सूर सागर	सूरदास
सूर की झांकी	डॉ० सत्येन्द्र
सूर की काव्य कला	मनमोहन गौतम
सूर और उनका साहित्य	डॉ० हरिवंशलाल शर्मा
सूरदास	डॉ० ब्रजेश्वर वर्मा
सूरदास और उनका साहित्य	डॉ० देशराज सिंह भाटी

सूर पूव ब्रजभाषा और उसका साहित्य	शिव प्रसाद सिह
सूर साहित्य की भूमिका	डा० रामरतन भटनागर
सूर साहित्य	डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी
सतो का भक्ति योग	डा० राजदेव सिह
सस्कृति के चार अध्याय	डॉ० रामधारी सिह दिनकर
सस्कृत साहित्य का इतिहास	बलदेव उपाध्याय
सस्कृत साहित्य का सक्षिप्त इतिहास	श्री वाचस्पति गैरोला
हरिऔध और प्रियप्रवास	मल्लिनाथ
हरिऔध और उनका महाका य	केसरीकुमार
हरिऔध और उनका काव्य	डा० ओम प्रकाश त्रिवदी
हरिऔध और उनकी कला कृतियाँ	प्रा० द्वारिका प्रसाद
हरिऔध और उनका साहित्य	मुकु द देव शमा
हरिऔध और उनका प्रियप्रवास	कृष्णकुमार सि हा
हरिऔध जी और प्रियप्रवास	डा० विश्वम्भरनाथ उपाध्याय
हरिऔध की का य शली	विमल आहूजा
हरिऔध की साहित्य साधना	शिवनारायण शुक्ल
हरिऔध के सस्मरण	श्री वणी माधव शमा
हि दी कविता मे युगा तर	डा० सुधी द्र
हि दी काव्य म कृष्ण चरित्र का भावात्मक स्वरूप, विकास	डॉ० तपश्वरनाथ प्रसाद
हि दी का य धारा	राहुल साकृत्यायन
हि दी कृष्ण भक्ति का य की पष्ठभूमि	डा० गिरधारीलाल शास्त्री
हि दी कृष्ण भक्ति काव्य पर श्रीमदभागवत का प्रभाव	विश्वनाथ शुक्ल
हि दी कृष्ण भक्त साहित्य म मधुर भाव की उपासना	पूणमासी राय
हि दी कृष्ण का य म स्वच्छ दतामूलक प्रव त्तियाँ	च द्रकला गुप्ता

हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य पर पुराणों का प्रभाव	डॉ० शशि अग्रवाल
हिन्दी कृष्ण काव्य में कृष्ण चरित्र का विकास	डॉ० दयाशंकर मिश्र
हिन्दी कृष्ण काव्य परम्परा का स्वरूप विकास	मुरारीलाल शर्मा
हिन्दी कृष्ण काव्य परम्परा और सुदामा चरित्र	डॉ० हिम्मत सिंह जैन
हिन्दी मध्यकालीन खण्डकाव्य	डॉ० सियाराम तिवारी
हिन्दी के आधुनिक पौराणिक महाकाव्य	देवी प्रसाद गुप्त
हिन्दी के प्रमुख महाकाव्य	रोशनलाल सिंहल
हिन्दी के महाकाव्यों का स्वरूप, विकास	शम्भूनाथ सिंह
हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास	प० अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध
हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास	डॉ० गणपति चन्द्र गुप्त
हिन्दी साहित्य का इतिहास	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
हिन्दी साहित्य में भ्रमरगीत परम्परा	डॉ० सरला शुक्ला
हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ	प्रो० शिवकुमार शर्मा
हिन्दी साहित्य में कृष्ण	डॉ० सरोजनी कुलश्रेष्ठ
हिन्दी शब्दार्थ पारिजात	द्वारिकाप्रसाद शर्मा
श्रीकृष्ण लीला काव्य	केशवदास
श्री वंशी अलि जी का सम्प्रदाय और साहित्य	डॉ० बाबूलाल गोस्वामी

कोश

अमर कोश — प० हरगोवि द शास्त्री
ना० अ० कोश — फलच द्र जन
मानक हि दी कोश — रामच द्र वर्मा
हलायुद्ध कोश
हि दी साहित्य कोश
वहृत हि दी कोश — कालिका प्रसाद
वाचस्पत्यम — तर्कवाचस्पति श्री तारानाथ माहाचार्येण (ततीय भाग)
शब्द कल्पद्रुम — राजा माधवका त देव बहादुरेण

अंग्रेजी ग्रन्थ

एनसिएण्ट इण्डिया मेगस्थनीज एण्ड आय स — क्रिण्डल
एसेज आफ सिम्बोलिज्म — एच० सी वाटर
थ्योरी आफ लिटरेचर — वाक एण्ड वेरेन
दि लिटरेरी मूवमे ट–प्रिफेस टु दि ऋग्वेद — मैक्समूलर
प्राब्लम आफ आट — के० लँगर
पायेटिक प्रासेस — जाव ह्वेली
स्पीकुलेशन — टी० ई० हुल्मे

पत्र-पत्रिकाएँ

कल्याण — गीता प्रेस गोरखपुर
नागरी प्रचारिणी पत्रिका — नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
रसव ती–अक 36 37 1961 — स० डा० प्रेमनारायण टण्डन
साप्ताहिक हि दुस्तान — 31 जनवरी 1954